* ओ३म् *

प्रेमधारा

अर्थात्

सेठ मनोहरलालजी वैश्य की पुत्री के विवाहोत्सव में

प्रियंवदा और यशोदादि सखियों

का

सम्वाद.

जिसको स्त्री जाति के उपकारार्थ

चिम्मनलाल वैश्य

कासगंजनिवासी ने लिखकर मुद्रित कराया

Registered for copy-right under Act. XXV of 1867.

द्वितीयावृत्तिः १९०० } सन् १९१७ { मूल्य ॥=)

रामप्रसाद जैनी के प्रबन्ध से ग्लोबप्रिंटिंगवर्क्स मेरठ में मुद्रित।

* ओ३म् *

समस्त आर्य (हिन्दू) स्त्री-जाति के प्रति

समर्पण ।

प्रियपाठिकाओ ! सुशीलबहिनों ! तथा विद्यारसिक महिलाओ ! आज सकल गुण निधान, सार्वभौमिक, महाराजाधिराज, प्रजा हितकारक **राजराजेश्वर श्रीपंचमजार्ज** महोदय और **महारानी मेरी** का तिलकोत्सव है जिसकी आनन्द ध्वनि केवल भारतवर्षमें ही नहीं वरन् सारेइङ्गलैंड तथा एशियादिक खंडों में गुञ्जायमान होरही है। अतएव हम भी इसी प्रेम में मग्न हो—

प्रेमधारा

रूपी लेख अर्थात् प्रियम्वदा और यशोदादि का सम्वाद आप महिलाओंके भेट करते है-आप स्वीकार कर हमारी मनोकामना को पूर्ण कीजिये, क्योंकि भारत सन्तान आपका उंगली पकड़कर उन्नति के शिखर पर चढ़ सक्ता है विना आप की सहायता के भारत के सिर का मुकट गिर गया और सभ्य से असभ्य बन गया। इसलिये प्रथम आप साक्षात् देवी बनजाइये फिर हमारे लिये शारीरिक आत्मिक और सामाजिक सुखों के मिलने में विलम्ब नहीं है।

शमिति।

स्थान आर्य-मन्दिर
ता० १२ दिसम्बर
सन् १९११ ई०

आपका भद्राभिलाषी—
चिम्मनलालवैश्य
तिलहर, ज़ि० शाहजहांपुर।

प्रथम परिच्छेद

प्रिय सुशीलाओ ! ऐसा निराला ही मनुष्य या अनोखी स्त्री होगी जो विवाह के आनन्द-दायक समाचारों को सुन प्रसन्नचित्त न हो किन्तु सारेही मनुष्य और स्त्रियां, बालबच्चों आदि सभी विवाह के आनन्ददायक हर्ष समाचारों को सुन फूले अंग नहीं समाते, अस्तु। हमारे सेठ महोदय के यहां भी विवाह, जिसकी तैय्यारियां महीनों से होरही थीं, धीरे धीरे अब उसके केवल मात्र पन्द्रह दिन शेष रहगये थे, मित्र सम्बन्धियों को निमन्त्रण पत्रिकायें भेज-दीगई थीं। परन्तु सेठानी जी की अभिन्न हृदया सहेलियां जिनके लिये उन्होंने विवाह दिवस से एक मास पूर्व आनेका आग्रह किया था, अभीतक न आई थीं अतः वे यथोचित प्रसन्न न थीं, जैसा चाहिये वैसा उनका मन भी प्रफुल्लित न था। अन्ततोगत्वा शान्ति भवन में विश्राम करते हुए सेठजी के पास जाकर कुछ देर वार्तालाप के पीछे सेठानीजी ने कहा–

सेठानी–सुशीला तो आज आही जायगी परन्तु अबतक न जाने क्यों मेरी सहेलियां नहीं आईं ?

सेठजी–उन्हें निमन्त्रण पत्रिकायें तो तुमने ही अपने हाथों से लिख कर भेजी थीं स्वीकृति भी आगई–सम्भव है कोई विशेष कार्य्य लगगया जिससे वे नहीं आसकीं।

सेठानी—कोई कारण अवश्य ही है परन्तु आप आज प्रियंवदा एवं यशोदा देवी के लिये एक २ तार दे दीजिये। सुशीला के लिये जो सेवक गाड़ी लेकर स्टेशन पर जाये वही तार लेजावे।

सेठजी—बहुत अच्छा।

सेठजी से स्वीकृति पाते ही सेठानी जी घरमें चली गईं और सेठजी ने भी कार्य्यालय में जा दो तार के फार्मों को 'भर' चपरासी को देते हुए कहा, देखो अब पौने दो का समय है डाकघर खुलगया होगा इन तारों को पोष्टमास्टरजी को दो, यह लो दो रुपये फीसके, उसकेसाथही केसरी कोचवान से बंद घोड़ागाड़ी तैय्यार कराकर स्टेशन लेते जाओ, क्योंकि २॥ बजे की गाड़ी से बेटी सुशीला आने वाली है। मनोरमा को भी अंदर से बुलालो वहभी तुम्हारे साथ स्टेशन जायगी।

चपरासी महाशय ने तुरंत ही आदेश पालन किया; अतः वे ठीक समय स्टेशन पर पहुंच गये, गाड़ी ने बहुत प्रतीक्षा न कराई, अपने नियत समय के इधर उधर एक मिनट भी न जाने दिया, गाड़ी के आते ही यात्रीगण अपनी २ गठरी पोटरी सम्भार २ सवार होने लगे, एवं उसी प्रकार उतारने वाले अपने २ माल को सावधानता से उतारने लगे।

सौदा बेचने वाले भी यात्रियों के बीच में घुस घुस चक्कर लगाने लगे परन्तु तीव्रगामिनी रेल को इन बातों से क्या वह टाइम पूरा होतेही निर्मोही मनुष्यों की भांति, झटपट अपनी हरी लाल झाड़ियों को उड़ाती अपने धुंए से दिशाओं को व्याप्त करती हुई चलदी। स्टेशन की धूम भी शांत हुई—जिन लोगों की निजी सेवकों सहित सवारियां आई हुई थीं, मित्रगण

जिनके स्वागत के लिये उपस्थित थे, वे सहर्ष मित्रों से कुशल प्रश्न करते हुए सवारियों में जा बैठे। दूसरी श्रेणी के भी अपने परिजनों के मिलने की खुशी को हृदयतल में छुपाये किराये की सवारियों में बैठकर चलदिये।

हमारे सेठ जी को सुपुत्री की गणना पहली श्रेणी में हो आगई, गाड़ी से उतरते ही उस के स्वागत करने वाले उसकी प्यारी धाय मां (जिसने उसे दूध पिलाया था) और बचपन में अनन्य प्रेम से खिलाने वाला बुढ्ढा चपरासी झुन्नीलाल उपस्थित ही था अतः सुशीला इन दोनों को स्वस्थ देख वैसीही खुश हुई जैसे अपने माता पिता को देख कर होते हैं- अस्तु इस समय उसकी गाड़ी बड़ी तेज़ी से जारही थी सुशीला का सिर धाय मां की गोद में था। अन्ततः बड़े दुलार से हाथ फेरते हुए धाय मां ने कहा, प्यारी बेटी, मुन्नि, तुम अच्छी तो रहीं सुना था कि अभी तुम्हें जूड़ी आगई थी-ऐसा कहने के साथही दो तीन आंसू की बूंदें सुशीला के कोमल गालों में जापड़ीं। सुशीला ने चौंक कर अपना सिर उठा कर सरलता से कहा-हैंय, धाय मां तुम्हारी आखों में योंही आंसू आजाते हैं मेरी जरासी बीमारी को सुनतेही घबड़ा जाती हो ऐसे घबड़ाने का क्या काम। उस पत्र के आने के चारदिन पीछे मैं बिल्कुल अच्छी होगई, और देखो अब मेरा शारीरक स्वास्थ कैसा उस समय से अच्छा है जब तुम सब पिछली साल मुझे देखने जालंधर गई थीं। ऐसा कह सुशीला ने अपनी दस्ती से धाय मां के आंसुओं को पोंछ कहा धाय मां पिताजी एवं माताजी का स्वास्थ कैसा है। दोनों भाभी और भ्राता सोमगुप्त घर पर ही हैं।

मनोरमा-हां उनकी तबियत अच्छी है भाभी घर पर ही हैं

सोमगुप्त आगरा कालेज से आगय। अस्तु इसी तरह वार्ता-लाप होरही थी कि गाड़ी एक बड़े फाटक के भीतर गई और कुछ ही दूर जाकर खड़ी होगई, यहां सुशीला का छोटा भाई हरिदत्त और विजया बहन की गाड़ी की बाट देखरहे थे, सुशीला ने भी उतरते ही दोनों को बारी बारी से गोद में उठा, शिर सूंघ प्यार किया एवं विजया को गोद में लिये ही भीतर चली—कुछ दूर आगे चलते ही जन्मदात्री माता से भेट हुई सुशीला ने हाथ जोड़ नमस्ते की, विजया बहन की गोद छोड़ अलग जा खड़ी हुई. माता ने हर्षातिरेक से सुशीला को छाती से लगा लिया। इस प्रकार उचित शिष्टाचार पूर्वक इस प्रेम सम्मेलन के समाप्त होने पर सब सुशीला को शान्तिभवन में लेगई। सब यथास्थान बैठी ही थीं कि सेठजी आये, सुशीला ने उचित अभिवादन किया, सेठजी ने आशीर्वाद देने के अनन्तर कहा बेटी, इस समय प्रसन्न तो हो, तुम्हारे विद्यालय की दशा अच्छी है। अन्यान्य छात्रायें अध्यापिकायें प्रसन्न हैं।

सुशीला—हां पिता जी आप के आशीर्वाद से मैं अच्छी हूं, विद्यालय की दशा प्रशंसनीय है, दूसरी छात्रायें आदि भी आनन्द से समय वितारही हैं। लाला देवराजादि उसके प्रबन्धकर्त्ता अपनी बेटियों से भी अधिक प्रेम से पुत्रियों का लालन पालन करते हैं। नियमानुकूल सारे कार्य्य चल रहे हैं। भारतवर्ष में इस समय पुत्रियों के लिये यह अद्वितीय विद्यालय है।

सेठजी ने सुन प्रसन्न हो प्रबन्धकर्त्ताओं को धन्यवाद दिया। साथही सुशीला ने अपने सामान को खोल लीची, अंगूर, अनूचादि निकाल सेठ और सेठानी जी के सन्मुख धर दीं। जिन्हें सेठजी ने हरी वा विजया को दे सुशीला से कहा

बेटी, तुझे रातमें जगना पड़ा होगा इसलिये कुछ भोजन कर सोले मैं अब जाता हूं। इन फलों को उठवा रखवा देना।

सुशीला—अच्छा।

सेठजी तो बाहर गये साथही सोमगुप्त ने कमरे में प्रवेश किया।

सुशीला—भ्राता जी, नमस्ते।

सोमगुप्त—नमस्ते।

सुशीला—आइये बैठिये, आप कब आये और आप की परीक्षा हो गई।

सोम गुप्त—मुझ को आये चार दिन हुए. परीक्षा हो गई उत्तीर्ण होने की भी आशा है।

सुशीला—ईश्वर ऐसा ही करे।

सोम गुप्त—मैं अब जाता हूं क्योंकि मुझको कई आवश्यक कार्य करने हैं।

सुशीला—अच्छा भाई नमस्ते।

सोम गुप्त—नमस्ते! और चल दिये।

सुशीला—माता जी, चन्द्रगुप्त जी कहाँ हैं?

सेठानी—चन्द्रगुप्त दिल्ली गया है।

इतने में महाराणी और सुलक्षमा ने आकर सुशीला को नमस्ते की।

सुशीला ने दोनों को गोद में बिठा लिया।

सुशीला—कहो महाराणी तुम कौन सी पुस्तक पढती हो?

महाराणी—मेरी तीसरी पुस्तक समाप्त हो चुकी है।

सुशीला—लो यह पुस्तक मैं तुमको देती हूं। हरीदत्त तुम भी लो, सुलक्ष्मा लो तुम्हारी यह चिड़िया बड़ी सुन्दर है।

सुलक्ष्मा—बुआ जी, यह तो बोलती है।

विजया—बीबी, मुझ को भी ऐसी ही दे।

सुशीला—ले तू भी ले।

मेठानी—अरी सुशीला, इनका पुरष्कार तो बंट गया अब तू कुछ भोजन करले चलके फिर विश्राम करना।

सुशीला—हाँ भोजन करने चलती हूं।

इतना कह सुशीला विजया को गोद में ले माता के साथ चल दी और रसोई गृह में पहुंच भोजन कर शान्तिभवन में आ सो गई।

* * * * * *

सुशीला के आने का समाचार कर्णपरम्परागतभाव से सारे मुहल्ले में पहुंच गये, अतएव दुपहरी का ताप घटते ही चिर परिचिता स्त्रियों का आगमन शुरू होगया, अतः विचारी सुशीला घण्टे डेढ़ घण्टे के विश्राम के बाद ही हाथ मुख धो स्वस्थ हो, उन से मिलने के लिये गई।

आगतः स्त्रियों में से वृद्धाओं ने आशीर्वाद दिया समवयस्कों ने हृदय से मिलकर अपना हर्ष प्रकट किया अस्तु। सायंकाल होने पर ही यह सम्मेलन समाप्त हुआ परन्तु हमारे घर की जिन वृद्धाओं के हृदय में पुत्रियों के पढ़ाने के बारे में

निकृष्ट विचार भरे हुए थे वे भी सुशीला के शारीरिक बल मुख की कान्ति, ब्रह्मचर्य्य व्रतके पालन करने से निकले हुए अपूर्व मुख के सौन्दर्य्य तथा बोल चाल व्यवहार को देख अचम्भित हो गई।

इन सब के विदा होने पर सेठानी वा सुशीलादि ने संध्या हवन कर उचित समय पर भोजन कर, इधर उधर टहलते हुए नाना वार्तालाप कर दस बजने से कुछ पहिले ही दूध पीकर सुशीला सोने के लिये चली गई पीछे अन्यान्य गृही जन भी अपने कार्य्यों को समाप्त कर शयन स्थान को गये।

द्वितीय-परिच्छेद

सखियों के पास भेजे हुए तारों का उत्तर भी तार द्वारा ही कल मिल गये उसी सूचना के मुताबिक़ देवी यशोदा, दिन के साढे बारह बजे की गाड़ी से और प्रियम्वदा देवी रात को दस बजे पर आने वाली ट्रेन से आयंगी, सेठानी इस सम्वाद से कितनी प्रसन्न है सो बताने की शक्ति इस जड़ लेखनी में कहाँ से होसक्ती है। तार पाने के बाद सेठानी जी ने दोनों सहेलियों के ठहरने के लिये पृथक् २ स्थानों को उचित सामिग्रियों से सुसज्जित कराया, ताकि उनको किसी तरह कष्ट न हो सूर्य्य छिपने के पहले यह काम समाप्त हो गया. शाम हुई सन्ध्या हवन कर भोजन किया गया जैसे तैसे दस बजे सेठानी जी सोने वाले कमरे में गईं परन्तु अधिक दुःख और अधिक चित्त में हर्षोल्लास होने पर नींद स्वयं विदा हो जाती है इस लिये सेठानी जी ने बड़ी कठिनता से उषः काल के दर्शन किये, आपने उठकर नमित्तिक कृत्यों के करने में ध्यान लगाया, यहाँ तक कि दुपहर की रेलवे ट्रेन आने का टाइम होगया, स्टेशन पर सेठजी की गाड़ी पहुंच गई थी, अन्ततः फिटिन ने अन्तःपुर में प्रवेश किया और मनोरमा ने संवाद दिया कि श्रीमती यशोदा देवी आगईं, सेठानी जी सुशीला वा बहुओं सहित नीचे ही उतर आईं वहाँ ही अपनी अभिन्न हृदया सहेली से भेंट की।

इस समय दोनों ने किस अपूर्व आनन्द का अनुभव किया उसको वे ही अनुमान कर सकीं जिन को ऐसे समयों के प्राप्त करने का अवसर मिला। अस्तु।

यथोचित शिष्टाचार के पीछे सब यशोदा देवी को ऊपर आनन्द भवन में ले गईं। स्वस्थ हो बैठ जाने पर यशोदा देवी ने कहा, क्या देवी प्रियम्वदा जी अभी नहीं आईं उन्होंने तो मुझे लिखा था कि मैं ता० १५ तक पहुंच जाऊंगी।

सेठानी—कल तार आया था, आज वह रात की ट्रेन से आवेंगी।

इसके बाद और भी बातें होती रहीं, पीछे सेठानी जी ने अपनी प्रिय सखी के साथ दुपहर का भोजन किया और यशोदा देवी के कमरे में वार्तालाप करते हुए विश्राम किया—

* * * * * *

सूर्य की तेजी कम होगई, गर्म लुओं के झपेटे शान्त हुए पृथ्वी की जलन ठण्डी हुई, गर्मी की प्रखरता घट गई क्लाक ने भी बारह से एक दो ढाई करते तीन बजा दिये, सेठानी भी बहुओं सुशीलादि सब के साथ अब आनन्दभवन में फलों को खा रही है। बहुएं और घरके सब बच्चे सम्भवा से बैठे हैं सुशीला प्रेम से सब को देती जाती है। कुछ देर में पान खाने के साथ यह काम भी समाप्त होगया सारा का सारा आनन्द भवन खाली होगया, सेठानी जी यशोदा देवी को विवाहका सञ्चित सामान दिखाती हुई कार्य करने लगीं।

शनैः शनैः पाँच बज गये सेठानी जी अपने पुत्रि बहुओं एवं बच्चों के साथ यज्ञशाला को गईं—साथ में यशोदा देवी भी गईं, परन्तु सन्ध्या हवन करने नहीं किन्तु देखने मात्र के लिये। अस्तु!

सेठानी ने सब के साथ सन्ध्या हवन किया, एवं हवन के पश्चात् सुशीला ने निम्न लिखित प्रार्थना को—

नमस्ते सतते जगत्कारणाय ।
नमस्ते चिते सर्वलोकाश्रयाय ॥
नमोऽद्वैततत्त्वाय मुक्ति प्रदाय ।
नमोब्रह्मणे व्यापिने शाश्वताय ॥ १ ॥

त्वमेकं शरण्यं त्वमेकं वरेण्यं ।
त्वमेकं जगत्पालकं स्वप्रकाशम् ॥
त्वमेकं जगत्कर्तृपातृ प्रहर्तृ ।
त्वमेकं परं निश्चलं निर्विकल्पम् ॥ २ ॥

भयानांभयं भीषणं भीषणानाम् ।
गतिःप्राणिनां पावनं पावनानाम् ॥
महोच्चैः पदानां नियन्तृत्वमेकं ।
परेषां परंरक्षणं रक्षणानाम् ॥ ३ ॥

वयं त्वां स्मरामो वयंत्वां भजामो ।
वयं त्वां जगत्साक्षिरूपं नमाम ॥
सदेकं निधानं निरालम्बमीशम् ।
भवाम्भोधिपोतं शरण्यं व्रजामः ॥ ४ ॥

अणोरप्यणीयान्महद्भ्योमहीयान् ।
रवीन्दु ग्रहज्या भगोलादिकर्त्ता ॥
य ईशोहि सृष्ट्यादिमध्यान्तसंस्थः ।
चिदानन्दरूपं तमीशं प्रपद्ये ॥ ५ ॥

यतोजायते विश्वमेतत्समस्तम् ।
स्थितं यत्रयस्मिल्लयंयातिकाले ॥
अनादिं विभुं चादिमध्यान्तशून्यम् ।
चिदानन्दरूपं तमीशं प्रपद्ये ॥ ६ ॥

वशेयस्यविश्वं समस्तं सदास्ते ।
यदाभासतोभातियद्वै विचित्रम् ॥
न जानन्तियंतत्त्वतो योगिनोऽपि ।
चिदानन्दरूपं तमीशं प्रपद्ये ॥ ७ ॥

इस प्रार्थना को सुन सब स्त्रियां बड़ी प्रसन्न हुईं ।

यशोदा—सेठानी जी, यथार्थ में महाविद्यालय जालंधर की शिक्षा अत्युत्तम है । लाला देवराज इत्यादि का प्रबन्ध प्रशंसनीय है ।

इस के अनन्तर विवाह की बातचीत होने लगी ।

मनोरमा—सेठानी जी, भोजनों को चलिये ।

सेठानी—अरी लाला जी से स्टेशन पर गाड़ी भेजने के लिये कह आना और यहां के सब कार्य कर ६ बजे गाड़ी के साथ तू भी चली जाना ।

मनोरमा—देवी, कौन आवेंगी ?

सेठानी—देवी प्रियंवदा जी आयेंगी ।

इतना कह सब रसोईगृह में गईं और भोजन कर शयनागार में जा शयन किया । परन्तु सेठानी जी को प्रियंवदाजी के आने की प्रसन्नता में नींद न आई । और करवटें बदलते २

घड़ी ने दस बजाये। उधर स्टेशन पर गाड़ी का लैनक्लियर हुआ। त्योंही सेठजी की भेजी हुई गाड़ी मनोरमा और चार सेवकों सहित स्टेशन पर पहुंची।

फिर मनोरमा प्लेट फ़ार्म का टिकट लेकर भीतर गई। गाड़ी आ खड़ी हुई। गाड़ी के ठहरते ही मनोरमा ने ज़नानी गाड़ी के दर्ज़े को खोला। खोलते ही श्रीप्रियंवदा जी मय अपनी दो टहलनियों के उतरीं।

मनोरमा—देवी, नमस्ते।

प्रियंवदा—नमस्ते।

पुनः मनोरमा ने सब सामान को सेवकों द्वारा गाड़ी में रखवाया और प्रियंवदा से गाड़ी पर बैठने को कहा। फिर सब बैठकर चल दीं, और बात की बात में गृह आ गया।

मनोरमा देवी जी को उतार कर ऊपर ले गई।

सेठानी—प्रिय सखी, नमस्ते। फिर प्रियंवदा सेठानी जी से खूब मिलीं।

सेठानी—(मनोरमा से) मनोरमा, भोजन ला।

प्रियंवदा—मैंने बरेली में भोजन कर लिया है।

सेठानी—तो लीजिये थोड़ा सा दूध ही पी लीजिये।

इतना कहकर सेठानी जी ने देवी जी को दूध पिला दिया

तृतीय परिच्छेद

प्रातः काल, शौचास्नान, ध्यान आदि से निवृत होने पर सेठानीजी ने प्रियंवदा देवी के आने का संवाद यशोदा देवी को भेजा संवाद के साथ यशोदा देवी आ उपस्थित हुईं, बालपन की सखियों की आंखों में आनन्दाश्रु आगये दोनों गले लगकर मिलीं।

पश्चात् कुशल प्रश्न होने लगे, किन्तु जल्दी ही सेठानीजी की मँगाई गाड़ी घर पर आगई अतः सब उठ खड़ी हुईं एवं गाड़ी में सवार हो राम बाग को चल दीं, मार्ग में भी बातों का क्रम जारी ही रहा। अन्ततः कोठी आगई, सेठानी ज्वालादेवी ने उतर कर, कोठी और बाग को घूमकर दिखला सब स्थानों का परिचय कराया, धीरे धीरे घड़ी की सुई नौ के घंटे को पार करगई थी इससे सूर्य्य की तेजी अवश्य खूब हो चली, तिस पर साफ आकाश, इस लिये सब की सब कोठी में जाकर आराम से बातें करने लगीं कुछ देरके पीछे प्रियंवदा देवी ने, श्रीमती यशोदा की बिगड़ी हुई शारीरक दशा पर दुःख प्रकट करते हुए कहा सहेली, ईश्वर की दयासे तुम्हारे पुत्र पुत्री भी हैं विवाह होचुके बहुएँ तुम्हारे पास आगईं, पोते भी तुम्हारी गोद को सुशोभित करते हैं धन भी है फिर भी न जाने क्यों ऐसी कृपवर्ष होरही हो, युवावस्था में ही बुढ़ापे ने खूब दखल जमा लिया, कहो तो इसका क्या कारण है ?

उत्तर में यशोदा ने दुःखित हो कहा बीबी मेरा कुछ न

पूछो. मैं तो नरक से निकली, नरक में गई। जब घरमें आनन्द नहीं तब पुत्र पुत्रियों बहुओं और अगणित धन होनेसे क्या होता है, बहन मेरे घर में सूर्य्य निकलते ही कलह होती है, इधर उधर की स्त्रियां और भी लड़ाई कराने में लगी रहती हैं, बाप बेटों में नहीं बनती, भाई भाई आपस में तनक २ सी बातों पर आंखें लाल करते और अपने २ घर बनाने में लगे रहते हैं। दोनों बहुएं मुझ से लड़ती रहती हैं, मैं सारे दिन परिश्रम करती मरी जाती हूं। इस के अतिरिक्त मेरे बेटे भी मेरा कहना नहीं मानते। इस लिये बहन, मैं तो हर समय परमेश्वर से मौत चाहती हूं, और इसी सोच विचार में पड़ी रहती हूं कि मेरे पीछे इस घर की क्या दशा होगी। हां तुझ को देख कर इस समय अपने सब क्लेशों को भूल गई हूं, तिसपर भी घर की चिन्ता में चित्त अग्नि के समान जल रहा है। प्रिय सहेली, यथार्थ बात तो यह है कि मैंने तेरी प्रथम शिक्षा पर कुछ भी ध्यान नहीं दिया, नहीं तो कदापि यह दुःख भोगने न पड़ते, अब क्या करूं किधर जाऊं, इतना कह ऊंचे स्वर से रुदन करने लगी।

प्रियंवदा—सखी· शोक मत करो, इस से शरीर सूख जाता है, बुद्धि मारी जाती है, जिस के कारण फिर भले बुरे का कुछ ज्ञान नहीं रहता और फिर शीघ्र नाश हो जाता है। स्वस्थ जाओ, इससे कोई लाभ नहीं।

तब यशोदाने गद्गद स्वर से कहा प्यारी सखी यदि आप को मुझ पर प्रेम है और मेरे दुःख का कुछ भी क्लेश है तो विवाह-उत्सव के पश्चात् तुम वहां चलो और मेरे दुखों के दूर करने का कुछ उपाय करो। जिस से मेरा शेष जीवन आराम और चैन से व्यतीत हो। देखो प्यारी बहन, मैंने नीति में पढ़ा है कि जो आतुर होने, दुःख पड़ने, दुर्भिक्ष,

वैरियों से संकट होने, और राजा के समीप अथवा श्मशान में काम आता है वही अपना कहाता है। मैं इस समय महा संकट में पड़ने के कारण अति दुखी हूं और तू मेरी प्राचीन सहेली सहपाठनी है। तूने देशाटन करके अनेक उत्तम स्त्रियों का सतसंग कर उनके मर्म को जाना है। इसी कारण भारतवर्ष में तेरी चहुं ओर कीर्त्ति और यश फैलरहा है। हे प्यारी बहन, क्या तू मुझको इन दुःखों से पार न करेगी ?

प्रियंवदा—सखी यशोदा, तुम्हारे क्लेश को मैं अपने क्लेश से अधिक समझती हूं क्योंकि रामायण में श्रीरामचन्द्र जी ने कहा है कि जो अपनी सहेली के दुःख में दुःखी नहीं होती, उसको भी पाप होता है। यथार्थ में योग्य सहेली का परम धर्म यही है, कि अपनी सहेली के अल्प दुःख को बहुत दुःख समझ कर उस के दुःख दूर करने का यत्न करे। और अवगुणों को छिपावे, यश का प्रकाश कर, लेन देन में किसी प्रकार की शङ्का न करे। और बल के अनुसार सदा सहायता करती रहे। इस लिये मैं इस कार्य्य को अपना काम समझ कर सामर्थ्य भर यत्न करना चाहती हूं। परन्तु इस समय पुत्री की प्रथम परीक्षा के दिन निकट आगये हैं, इस हेतु विवाह-उत्सव हो जाने के पश्चात् (जिस के अभी १५ दिन शेष हैं) आप के गृह पर जाने का अवकाश न मिलेगा। इस लिये मेरी प्रार्थना आप से यही है कि आप कृपा करके दोनों बेटों को पत्नियों सहित यहाँ ही बुलवा लें, क्योंकि मेरी इच्छा उन सब के देखने की भी है वह भी पूर्ण हो जायगी, न मालूम आगे कब भेंट हो।

इस पर सेठानी जी ने कहा, बहन तुम चतुर होकर अज्ञानियों की तरह रोती हो, हम दोनों यथाशक्ति तुम्हारे इस दुःख को दूर करने का प्रयत्न करेंगी।

सेठानी जी के समझाने पर यशोदा देवी कुछ स्वस्थ हुईं तब उन्होंने कहा मैं अभी पत्र लिखवा कर सेठ जी के पास भिजवाती हूं। दोनों जरूर ही आवेंगे तब आप भी घर को चलिये क्योंकि इस समय साढे नौ बजे हैं बरेली जाने वाली गाड़ीका समय भी निकट है और फिर एक घंटे पीछे आपके भोजनों का भी समय होगा।

बस यही ठीक है, उनके यहाँ आने पर अवश्य ही कार्य्य सिद्ध होगा,—

ऐसा कहती हुई उठ खड़ी हुई और सब के साथ सेठानी जी के स्थान पर पहुंच भोजन कर सबने अपने २ स्थानों पर जा आराम किया और २ बजे के पश्चात् उठकर सब विवाह-कार्य में लग गईं। इधर ज्वालादेवीजी वहाँ से आ अपने पति के स्थान पर गईं और यथोचित शिष्टाचार के साथ यथा स्थान बैठने पर संक्षेप में सब वृत्तान्त कह एक पत्र सेठजी को लिख भेजने की प्रार्थना की। घटना क्रम सब सुन सेठजी ने तुरत पत्री लिख अपनी धर्म्मपत्नीको सुनाया।

पत्र।

संख्या २५ ता० २६ मई

श्रीमान् लाला श्यामलाल जी! नमस्ते।

ईश्वर की कृपा से यहाँ आनन्द है, आशा है आप सब आनन्द से होंगे। विवाह उत्सव में आपने अपने दोना पुत्रों को पत्नियों सहित नहीं भेजा, यहाँ विना उनके विवाह कार्य में बड़ी ढील हो रही है। द्वितीय आप की धर्म पत्नी की सहेली श्री प्रियम्बदा देवी जी आई हुई हैं, उनको भी उनसे मिलने की बड़ी अभिलाषा है। इसके अतिरिक्त मेरी भी समझ में उन के यहाँ आने से घर में जो आपस में क्लेश रहता है उसके मिटने की भी सम्भावना है क्योंकि देवी प्रियंबदा जी की बुद्धिमानी

की सब स्त्रियाँ प्रशंशा करती हैं। अतएव कृपा करके पत्र के पहुंचते ही उन सब को शीघ्र भेज दीजिये। और इस पत्र को तार समझ कार्य्य कीजिये। अधिक क्या लिखूँ। ओंशम्

आप का शुभेच्छु–

मनोहरलाल,

तिलहर.

ज्वालादेई–मनोरमा, मनोरमा, मनोरमा!

मनोरमा–क्या आज्ञा?

ज्वालादेई–तुम इस पत्र को सुमेरा कहार को बुलाकर दे दो और कहदो कि तुम शीघ्र तैय्यार होकर स्टेशन पर चले जाओ, क्याकि इस समय की गाड़ी से बरेली में सेठजी के यहाँ जाना है और खर्च के लिये २) यह लो।

मनोरमा–बहुत अच्छा, बाहर निकल कर सुमेर को आवाज़ दी।

सुमेर–मैं आया क्या आज्ञा है?

मनोरमा–देवीजी ने यह पत्र देकर कहा है कि तुम इस समय की गाड़ी से बरेली जाकर यह पत्र सेठ श्यामलाल जी को दो, देखो रेल का समय न चला जावे, बड़ा आवश्यक काम है यह लो २) ख़र्च के वास्ते।

सुमेर–मैं अभी जाता हूं, वह बाहर निकल और घर से सब सामान ले स्टेशन पर पहुंचा, त्योंही गाड़ी आगई, झपट कर टिकट लिया और बड़ी कठिनता से गाड़ी में बैठ बरेली पहुंच सेठजी को चिट्ठी दी।

सेठजी ने चिट्ठी को पढ़ सेवक द्वारा पुत्रों को बुला कर

कहा, भाई तिलहर से लाला मनोहरलाल जी का पत्र लेकर सुमेरा कहार तुम्हारे बुलाने को आया है यद्यपि अभी विवाह में बहुत दिन हैं तौ भी तुम दोनों बहुओं समेत शामकी गाड़ी से चले जाओ। अब सुमेर को भोजन करादो।

पिता की आज्ञा सुन दोनों भाई सुमेर को साथ ले घर की ओर चल दिये-।

नैपथ्य में।

जयचन्द्र-अरे सुमेर, तुम को मालूम है कि क्या आवश्यक कार्य्य है?

सुमेर-लालाजी! हमारे बड़े लाला के ऐसे विचार नहीं जो हर एक को मालूम हो जावें। वह अपने पुत्रों को कभी २ समझाया करते हैं कि विचार का नाम ही मन्त्र है और वह मन्त्र जब छिपा रहता है तब ही काम बनता है। इसी लिये वह एकान्त स्थान में विचार करने वालों के अतिरिक्त किसी को वहाँ नहीं आने देते। फिर भला सेठजी उनकी बातें हमको क्योंकर मालूम हो सक्ती हैं।

कृष्णचन्द्र-क्या बरात में अधिक मनुष्य आयेंगे?

सुमेर-नहीं साहब १०० या १५०।

दोनों भाई-फिर क्यों हमको बुलाया है।

सुमेर-मुझ को कुछ खबर नहीं। इतने में घर आगया। दोनों भाइयों ने घर में पहुंच समाचार सुनाये। बहुयें सुनते ही आनन्द मनाने लगीं।

बड़ी बहू-तो किस समय की गाड़ी से चलना होगा?

जयचन्द्र—शीघ्र तैयारी कर लो शाम के ५ बजे की गाड़ी से चलेंगे, सुमेर को अभी खिला पिला दो।

आज्ञानुसार बड़ी बहू ने खाने का प्रबन्ध कर दिया, और लगभग आध घंटे के अंदर सुमेर भरपेट भोजन कर लाला के नौकर मोहन की कोठरी में आराम करने लगा।

इधर दोनों भाई भी शाम की गाड़ी से जाने की इच्छा से नौकरों को उचित आज्ञायें दे कोठी पर चलेगये। परन्तु नींद नहीं आई, नानासंकल्पों में दो तीन करवटों के लेनेमेंही समय बीत गया और क्लाक ने तीन बजा दिये। अतः दोनोंने हाथ मुख धो कपड़े पहरे, पिताजी से आज्ञा लेकर लौटे कि फिटिन तैय्यार होकर आगई, अतः जयचन्द्र ने मोहन से कहा, तुम घर जाकर शीघ्र सावधानी से गाड़ी में विठा स्टेशन आना हम चलते हैं।

बहुत अच्छा कह मोहन घर को चलागया वहाँ सब जाने की प्रसन्नता में तैय्यार बैठी थीं। इधर कलुआ गाड़ीवान ने आवाज़ दी कि गाड़ी आगई। सुनते ही मोहन आदि ने सब असबाब गाड़ी में रक्खा। बहुयें सवार हुईं। गाड़ी स्टेशन को गई।

इधर दोनों भाई भी ईश्वर का स्मरण कर गाड़ी पर बैठे चलदिये। तेज़ी से घोड़ों के आने पर भी लालाजी जैसे स्टेशन पर पहुंचे और असबाब उतारा गया तैसेही रेल के आने की घंटी हुई, फिर क्या तुरंत ही जयचन्द्र ने टिकट लिये, सब लोग प्लेटफार्म पर गये, त्योंही गाड़ी आगई सब सवार हुए। टाइम पूरा होने पर ट्रेन रवाना हुई—और थोड़ी ही देर में तिलहर स्टेशन आ गया, सब उतर सवारी में बैठे, सेठ साहिब के स्थान पर पहुंचे और लाला जी को बड़ी नम्रतापूर्वक राम २ की।

उधर परिचारिकाओं ने सेठानियों को उतार, श्रीमती ज्वालादेई के भवन में पहुंचा दिया, जहां सब स्त्रियां प्रेम-पूर्वक एक दूसरे से मिलकर आनन्द में फूल, वार्तालाप करने लगीं।

बेटो चिरंजीव रहो बैठो, कहो तुम्हारे पिताजी प्रसन्न हैं, और सब प्रकार आनन्द है।

जयचन्द्र—पिता जी प्रसन्न हैं। आप को राम २ कहा है।

सेठजी ने पान की बीड़ी दोनों भाइयों को दीं। दोनों ने राम २ कह बीड़ी ले खालीं।

सेठजी—कहिये आप के घर में जो अनबन रहती है उसका क्या कारण है?

उत्तर में जयचन्द्र ने लज्जायमान होकर कहा कि श्रीमान् क्या कहूं—थोथी बातों के कारण स्त्रियों में झगड़ा रहता है। उसी से कभी २ हम लोगों में भी अनबन हो जाती है।

सेठजी—वर्तमान समय में प्रत्येक गृह में ऐसे ही दुंद पड़े रहते हैं। इसका कारण स्त्री पुरुषों की ऋषि प्रणाली के अनुसार शिक्षा न होना ही है। क्योंकि ब्रह्मचर्य्य के साथ विद्या और उत्तम शिक्षा से शारीरिक और आत्मिक बल होता है, तब ही वह लोग काम, क्रोध, लोभ, मोह और अहंकार आदि के वेगों को रोक उनसे यथायोग्य कार्य्य ले सक्ते हैं: अन्यथा ऐसी ही कुदशा होती है जैसा कि वर्तमान में हो रही है। तुम ने कुछ पढ़ा है उस को कार्य में लाओ। स्त्रियां जो विद्या से शून्य हैं, समझाया करो। माता जी की यदि कोई बात अनुचित हो तो एकांत में नम्रता पूर्वक उनसे निवेदन किया करो।

अच्छा आइये अब तुम दोनों माताजी से मिलआओ फिर विवाह के प्रबन्ध पर दृष्टि डालो और कार्य्यों को पूरा करा-ओ। ऐसा कह एक सेवक को उनके साथ अंदर जाने की आज्ञा दी।

दोनों भाई आज्ञानुसार चलदिये, द्वार पर पहुंच सेवक ने भीतर सूचना कराई-एवं सेठानी जी की आज्ञा से मनोरमा वहां से दोनों को अंदर लिवा लेगई।

भीतर पहुंच जयचन्द्र और कृष्णचन्द्र ने ज्वालादेवी सहित यशोदा के चरणों को छुआ। दोनोंने हर्ष से आशीर्वाद दे बैठने की आज्ञा दी, साथ ही सेठानी जी ने देवी प्रियंवदा को लिवालाने के लिये मनोरमा को भेजा।

प्रियंवदा जी यह समाचार पातेही तुरन्त उठकर चल दीं, ज्योंही वहां पहुंचीं, सबने भले प्रकार स्वागत कर बैठने को आसन दिया। पश्चात् दोनों भाइयों ने बहुओं समेत उनके पैर छुये। देवीजी ने आयुष्मान् कहकर उनके सिर पर प्रेमका हाथ फेर, दोनों बहुओं के कण्ठ में पांच २ सौ रुपये के दो हार निकाल कर डाल दिये और दोनों भाइयों को दो अँगूठियां दीं, जिन में मंदालसा के वह दो श्लोक खुदे हुये थे जो उन्हों ने संन्यास आश्रम में जाने के समय शिक्षार्थ अपने पुत्र को उपदेश किये थे; जिनसे भारत की अपूर्व शिल्प विद्या का परिचय होता था। वह श्लोक यह हैं—

नृभिः सन्त्यक्तव्यः स्वपर महिता काङ्क्षिभिरलम्।
खलानां सङ्गोऽयं विषमिव सामर्थ्यौ भवतियः॥
सनत्युक्तं शक्यो जगतिपरशर्मोन्नति परैः।
सतां सङ्गः कार्यो सभवतिपरो भेषजसमः॥ १॥

दुर्जनेभ्यः सर्वान्स्वयमथि समवाप्यापि कृतिना ।
रिपुः कामोयस्मात्कृतमति तपोदान नियमम् ॥
निरर्थन्त्वं प्राप्तं यदि सपदि शक्येत नहिसः ।
प्रदानं मुक्तीच्छां मतिजनय बुद्धिंगतमिदम् ॥ २ ॥

अर्थात् अपना कल्याण चाहने वाले मनुष्य को दुर्जनों का संग छोड़ना चाहिये। क्योंकि समाप्ति पर वह विष के तुल्य फल देने वाला होता है, अतएव सत्पुरुषों काही सर्वदा सत्संग करना चाहिये, क्योंकि सज्जनों का सत्संग परम औषधि के समान है।

यशोदा—बेटो, यह मेरी प्राचीन धर्म बहनी, और सह-पाठनी और तुम्हारी सच्ची माता है। यह बड़ी विद्वान् हैं, इन्होंने अनेक देशों में भ्रमणकर नाना व्यवहारों को जाना है। इनको तुम्हारे और तुम्हारी पत्नियों के देखने की बड़ी अभिलाषा थी।

प्रियंवदा—बेटो, तुम्हारी माता का बहुत काल तक मेरा साथ रहा है। इन के प्रेम और सखी भाव ने मेरे हृदय मेंघर कर लिया है मैं बहुत काल से तुम्हारे देखने को इच्छा रखती थी। दैवयोग से जब तुम्हारा विवाह था तब मैं लंका और जब कृष्णचंद्र का विवाह था तब मैं अमरीका की यात्रा को गई थी। इस कारण मैं तुमको और तुम्हारी पत्नियों को न देख सकी। आज परमेश्वर ने बहुत काल की इच्छा को पूर्ण किया, इसलिये मैं उनका धन्यवाद देती हूं और तुम से मेरा इतना कहना है कि तुम दोनों विवाह के अंत तक (अर्थात् जब तक मेरा रहना हो) यहां रहो।

इतना सुन बड़े भाई ने कहा—

जयचंद्र–हम आजके दिन को अपने सौभाग्यका दिन समझते हैं। जो आप सी ज्ञानी माता के दर्शन हुये। माता जी हम से वारम्बार आप के गुणों का कीर्तन किया करती थीं। तव से हमारा मन भी आप के चरणारविंदों में लग रहा था। अव हमारी यही इच्छा है कि हम वहुत काल तक आप का सत्संग कर लाभ उठायें। इसको पूर्ण करना आप के हाथ है। परंतु यह जवही पूर्ण हो सक्ता है जव कि आप हमारे ऊपर दया दृष्टि करके विवाह के पश्चात् हमारे गृह को सुशोभित करें और हम सव आप की आज्ञानुसार जव तक आप रहेंगी रहेंगे। जिसके समाचार पिताजी को कल चिट्ठी के द्वारा भेजदेंगे।

प्रियंवदा–अपने चलने के विषय में मैं तुम्हारी माता जी से कह चुकी हूं।

इतने में एक सेवक ने आकर कहा कि श्रीमान् सेठजी ने कुंवर साहिवान को भोजनों के लिये वुलाया है।

प्रियंवदा–आप दोनों भाई भोजन कर आराम कीजिये, मैं भी सन्ध्या हवन के पीछे भोजनों के लिये आतीहूं। वीवी यशोदाजी, आप सव स्त्रियों के साथ चलिये।

अन्यस्त्रियां—आप सन्ध्या हवन कर लीजिये, तव हम सव आप के साथ चलेंगी।

दोनों भाई प्रियंवदाजी की आज्ञा पाकर चरण छूकर चलदिये। इधर प्रियंवदाजी ने सेठानी सुशीलादि के साथ यज्ञशाला में जाकर सन्ध्या और हवन किया, तत्पश्चात् प्रियंवदाजी ने हारमोनियम पर मनोहर स्वर से निम्न लिखित प्रार्थना की:—

ईश-विनय ।

ईश्वर तू है सब का स्वामी,
दयासिन्धु उर अन्तरयामी ।
महिमा तेरी अपरम्पार,
तुझ से गये वेद भी हार ॥
तूने सारा जगत् बनाया,
अनुपम दृश्य हमें दिखलाया ।
सूरज, तारे, चांद बनाये,
जल, थल, अनल, पवन प्रकटाये ॥
न्यायी, सत्यसिन्धु, बलवान्,
करुणानिधि तू है भगवान् ।
दानी, ज्ञानी, घट घट वासी,
तू है निर्विकार अविनाशी ॥
जीना मरना तेरे हाथ,
अधः पतन, उन्नति तव साथ ।
यश अपयश का तू ही दाता,
रोग, शोक, भवभय दुखत्राता ॥
राई को पर्वत कर देता,
पर्वत राई कर धर देता ।
नगरों को तू निर्जन करता,
वन में नगरी सिरजन करता॥
ब्रह्मादिक तव ध्यान लगाते,
नारदादि मुनि वरणन गाते ।
गाते गाते वे थक जाते,
तौ भी तेरा पार न पाते ॥
हे ईश्वर सुन विनय हमारी,
हरिये भारत के दुख भारी ॥
नाथ इसे फिर से अपनावो,
और न इसे अधिक गिरावो ॥

प्रार्थना को सुन सब स्त्रियां प्रसन्न हो, परस्पर नाना वार्तालाप करती हुई सेठानी जी के साथ भोजन शाला में गईं एवं प्रसन्नता के साथ भोजन किये। भोजन कार्य्य समाप्त होने पर कुछ देर समयोचित वार्त्तालाप कर देवी प्रियंवदा सब से आज्ञा ले रामबागको चली गई। और इधर भी सब ने समय पर अपने २ कमरों में जा शयन किया।

—०—

प्रातः काल एकान्त में दोनों बहुओं का परस्पर वार्तालाप।

तः काल शौचादि से निवृत्त होकर बड़ी बहू ने छोटी बहू से कहा-किशोरी ! प्रियंवदा जी बड़ी योग्य हैं। उन का मुख कैसा दमदमाता मालूम होता है। बोलते समय ऐसा जान पड़ता है कि फूल झर रहे हैं। बीबी, मेरा मन तो यही चाहता है कि मैं उन्हीं के पास बैठी रहूं।

छोटी बहू-तुम बीबी बहुत ठीक कहती हो। वह तो संधिया होम करती रहें। और इतनी धनवती हैं पर तनिकौ घमंड उन के नहीं है। कुछौ अचरज नाहीं कि इनकी सिच्छा से सासु जी का मन फिर जाय।

छोटी बहू ऊपर वाली बात कहही रही थी कि यशोदा जी ने आकर कहा देखो मेरी सहेली की टहलनी तुम दोनों को बुलाने आई है, अतः तुम कपड़े पहन इस के साथ शीघ्र चली जाओ।

दोनों वहुओं के मन में पहले ही से जाने की इच्छा होरही थी, ऊपर से सासजी का आदेश पा वे शीघ्र ही तैय्यार हो दासी के साथ गाड़ी में बैठ रामबाग को गईं. देवी प्रियंवदा ने बड़े प्रेम से उन के अभिवादन के उत्तर में आशीर्वाद देते हुए बिठाया. और कुशल प्रश्नोपरान्त दोनों को बड़े आग्रह से स्वादित मिष्टान्न खिला पान दिये। और स्वयं भी पान खा सुचित्तता से बैठगईं।

वहुयें, मनही मन, देवी के इस व्यवहार की प्रशंसा कर खुश होरही थीं। अस्तु।

कुछ देर पीछे प्रियंवदा देवी ने अपनी दासी से कहा—

प्रियंवदा—"पुत्रवती होओ" कह कर बैठने को आज्ञा दी। सुनीति ने आसन दिया जिस पर दोनों बैठ गईं, तदनन्तर—

प्रियंवदा—चन्द्रमुखी! तू द्वारपर बैठ जा, यदि कोई यहां आना चाहे तो तू प्रथम मुझ को सूचना देना, बिना सूचना के इस समय कोई न आने पावे, क्योंकि इस समय इन वहुओं से एक विशेष विषय में वार्तालाप करना है।

चन्द्रमुखी—बहुत अच्छा, ऐसा ही होगा। वह गई और वहां ही आज्ञानुसार कार्य्य पालन में लग गई।

प्रियंवदा—(दोनों वहुओं से) वेटियों! तुम मेरी बात को सावधान हो कर सुनो,-इस जगत् का कर्त्ता सर्वशक्तिमान ईश्वर है, वह सर्वत्र सब के यथार्थ कर्मों को जानता है, उस से कोई स्थान खाली नहीं। वह सर्वदर्शी और सर्वव्यापी है। मनके भीतर, मनके वाहर वह उपस्थित है, फिर भला कोई वात उससे छिप सक्ती है। वही सबको दंड देता है। माता, पिता, भाई वन्धु उस के दंड के समय सहायता नहीं कर सकते। इस लिये जो स्त्री, पुरुष उसको सर्वत्र समझ उस की

आज्ञा का पालन करते हैं; उन को किसी प्रकार का क्लेश नहीं होता। इस लिये तुम मुझ से अपने घर में अनबन होने का कारण सत्य २ कह दो, क्योंकि धर्म की जड़ सत्य है। सब सुखों का मूल कारण सत्य ही है। यही जीवन का आधार है। इसी के बल से देवता और देवियां आनन्द भोगती हैं। इसी हेतु सत्य व्रत के धारण करने की आज्ञा धर्मशास्त्रों में है। अनेकान ऋषि-पत्नियों ने इस व्रत को धारण किया है। बहुधा राजाओं की रानियों ने इस व्रत की सहायता से यश प्राप्त किया। क्या तुमने नहीं सुना कि सीता ने सत्य व्रत के पूर्णार्थ अपने पति का साथ नहीं छोड़ा, राजा हरिश्चन्द्र की रानी ने इस व्रत के पालन करने में कष्ट उठाया। महारानी द्रौपदी और मंदालसा ने सत्य को ही स्वर्ग की प्राप्ति की सीढ़ी कहा है। यथार्थ में सत्य ही परम व्रत है। वही कल्याणकारी हित करने वाला ज्ञान है।

शकुन्तला देवी ने कहा है कि जो सत्य को छुपाता है, वह आत्म हत्यारा और सब पापों को करने वाला है, क्योंकि सम्पूर्ण विषय वाणी में रहते हैं। इस कारण तुम परमेश्वर को सर्वत्र समझ, निश्शंक और निर्भय होकर स्पष्ट कह दो वही ईश्वर तुम्हारी रक्षा करेंगे। इतना कह देवी जी चुप होगईं

दोनों बहुओं की आकृति से प्रकट होता था कि इस कथन का प्रभाव उनपर जादू के समान होगया और उन के हृदय कम्पायमान जान पड़ते थे। आखिर कुछ देर में बड़ी बहू ने कहा—

बड़ी बहू—माता जी, मैं आप से ठीक २ कहती हूं—आप की कृपा और परमेश्वर के अनुग्रह से हमारे घर में सब कुछ है, तिसपर सबको दुःख बना रहता है। इसका मूल कारण

माता जी का खुटस्यानपन है, क्योंकि उन के मुहरें तो लुटती हैं और कोलों को पकड़ती हैं। तनक २ सी बातों पर हमारे पिता को ताने देतीं हैं। हमारे लिये खर्च के नाम से मुंह सिकोड़ती हैं, परंतु माता जी की लल्लो-पत्तो करने वाली स्त्रियां खूब माल उड़ाती हैं। श्रीमाता जी जब हम से बोलती हैं तो क्रोधयुक्त हो कर ही बोलती हैं। सच तो यही है कि इन्हीं बातों के कारण दोनों भाई और माता जी में नहीं बनती। रात दिन शोक में पड़े रहते हैं। जिसके कारण कोई कार्य ठीक नहीं होता। बड़े लाला जी को चैन नहीं मिलता। सब कुछ होने पर भी हमको आभूषण भार के समान जान पड़ते हैं। नाना प्रकार के स्वादिष्ट भोजन विष के समान मालूम होते हैं। आप हमारे अपराधों को सासु जी से क्षमा कराकर उचित प्रबंध करा दीजिये। वह हमारी बड़ी हैं, हम उनकी दासी हैं। हमारा धर्म उनकी सेवा करना है: उनका धर्म पुत्री के समान हमारा पालन करना है। देवी जी, अब हम आप की शरण हैं।

इतना कह दोनों रोने लगीं।

देवी जी—रोओ मत, तुम ने सब सत्य कहा है।

चन्द्रमुखी ने झट आकर कहा—यशोदा जी आती हैं। प्रियंवदा ने यशोदा देवी को देखकर नमस्ते की, और कहाकि आइये सुशोभित हूजिये।

यशोदा जी ने आशीर्वाद दिया और आसन पर विराजमान हुईं।

उक्त आज्ञा को सुन दोनों बहुएं पैरों को छू उसी गाड़ी में बैठ सेठ जी के घर को लौट गईं।

प्रियंवदा यशोदा जी से बात चीत करने लगीं और बहुओं से कहा कि अब तुम जाकर सेठानी जी का काम काज करो।

यशोदा—हाँ, यह काम आवश्यक काम है।

नैपथ्य में-

किशोरी—हे यमुना, अब प्रियंवदा जी सासु से पुछिहैं फिर उनको समझै हैं।

यमुना—परमेश्वर करे उनका समझाना उनकी समझ में आजावे, जिस से नित्य का झगड़ा मिटे। इतने में, सेठजी का घर आगया। वह यथायोग्य के पीछे आवश्यक काम करने में लग गई।

अब इधर की बातें सुनिये।

प्रियंवदा—हे यशोदा जी! मैं अपना कर्तव्य समझती हूं कि जो कुछ दोष तुम में हो, उस को तुम से स्पष्ट कहदूं जिस के कारण तुम्हारे घर में क्लेश बने रहते हैं। प्यारी बहन! अपने दोषों को स्वयं जानना अति कठिन है। देखो पूर्व समय में कोई ऋषिपुत्र विद्वान् होने के अर्थ हिमालय पहाड़ पर जाकर एक पैर से खड़े हो तप करने लगा। जब बहुत दिन व्यतीत होगये तब इन्द्र देवता पहुंचे और उस तपस्वी से इस प्रकार तपस्या करने का कारण पूंछा। तब उस ऋषि ने कहा कि तप करने से मुझे विद्या प्राप्त होगी। इन्द्र ने कहा कि इस प्रकार तपस्या करने से विद्या प्राप्त न होगी। हाँ जितेन्द्रियता रूपी तप के साथ गुरु से अध्ययन करने से ही विद्या प्राप्त हो सक्ती है। परन्तु जब इन्द्र के इस प्रकार कहने पर भी उस ऋषि ने इस दोष को न माना, तब इन्द्र अपना रूप बदल कर उस नदी पर गये जहाँ वह ऋषि प्रतिदिन स्नान को

जाया करते थे। महात्मा के स्नान करने के समय में इन्द्र किनारे से पल्ले में बालू भर २ कर नदी में डालने लगे। यह देख तपस्वी ने पूछा—तुम यह क्या करते हो?

इन्द्र—नदी का पुल बाँधते हैं।

तपस्वी—क्या इस प्रकार पुल बंध सक्ता है।

इन्द्र—महात्मा जी, किस प्रकार बंधेगा?

तपस्वी—जब बड़े २ कारीगर शिल्प विद्या के जानने वाले आकर पत्थर, ईंट चूना आदि से गोले आदि बना कर चलायेंगे तब पुल बंधेगा।

इन्द्र—नहीं महाराज नहीं, जिस प्रकार हम काम कर रहे हैं उसी प्रकार से बंध जावगा।

महात्मा—तुम बड़े अज्ञानी हो, कभी तुम ने सुना है कि इस प्रकार पुल बंध जाता है, या कभी देखा है?

इन्द्र—महाराज न तो मैंने सुना और न देखा, परन्तु जिस प्रकार मैं अज्ञानी हूं उसी प्रकार आप भी तो अज्ञानी है। क्या कभी भी कोई बिना गुरु के पास रह कर तुम्हारी भाँति विद्वान् हुआ है।

महात्मा ने अति लज्जित हो कर कहा कि भाई, अपना दोष स्वयं जानना अति कठिन है।

इन्द्र—श्रीमान्, इसी हेतु तो मैंने यह काम किया। यह सुन महात्मा ने अपने हठ को छोड़ा, और ब्रह्मचर्यरूपी व्रत के साथ गुरु के पास विद्या पढ़ने लगे।

इसी भाँति बीबी यशोदा जी, तुम भी अपने दोषों को नहीं जाननीं।

यशोदा--देवी जी, मेरी अवस्था आप से कुछ बड़ी है, परन्तु विद्या सद्गुणों के कारण आप बड़ी हैं, क्योंकि शास्त्र में ऐसा ही लेख है। इस हेतु आप मेरे सब गुणों को अवश्य ही यथार्थ रूप से कहिये। मैं इसके लिये आप को धन्यवाद दूंगी।

प्रियंवदा—देवी जी, तुम्हारी दोनों बहुओं से कुछ वार्तालाप करने से मुझको ज्ञान हुआ कि वह योग्य हैं। केवल तुम्हारे कटुवचन, और थोड़े से लोभ के कारण सब प्रकार के क्लेशों ने घर में घर कर लिया है।

प्रिय यशोदा! संसार में सुमति और कुमति दो ही प्रकार की बुद्धि होती हैं। जिस घर में सुमति होती है वहां सत्य, क्षमा, वैराग्य, विनय, संतोष, धैर्य्य, कोमलता, उदारता, सहनशीलता, भक्ति, विश्वास, पवित्रता, प्रेम, शान्ति, नम्रता, परोपकार और ज्ञान की वर्षा होती है; और जिस स्थान पर कुमति का राज्य होता है वहां आलस्य, विषय, ममता, शोक, लोभ, मोह, मद, मिथ्या अभिमान, अहंकार, स्वार्थ, डाह, कठोरता, मूर्खता, चंचलता, कुसंग, वैर, विरोध, विश्वासघात, फूट, कपट, छल, व्यर्थवकवाद, परद्रोह आदि उत्पन्न होकर स्त्री और पुरुषों को सत पथ से पृथक करदेते हैं। अनेकान स्त्री पुरुष इन्हीं के फंदे में फंस कर चकनाचूर होगये, और तुम भी इन्हीं की लहरों में बही चली जा रही हो। जिस प्रकार घट में एक छिद्र होने से सब पानी निकल जाता है उसी प्रकार आयु दिन रात रूपी छिद्रों के कारण घटती चली जा रही है। देखो लक्ष्मी जल के बुलबुले के समान, और जीवन बिजली के तुल्य है। फिर जीवन का क्या ठीक, इस पर भी कोई जप, तप ऐसा नहीं जो काल से बचा सके। देखो जगत् में जितनी संचय की हुई वस्तुएँ हैं उन का एक

दिन अवश्य नाश हो जाता है। जितनी ऊंची वस्तुएं हैं वह सब नीची हो जाती हैं। जितने संयोग हैं। उन सब का वियोग होता है। सब उत्पन्न होने वाले मरते हैं काल किसी का मित्र नहीं। जिस प्रकार वायु तिनकों को इधर उधर उड़ा लेजाता है, उसी प्रकार काल भी जीवों को इधर उधर चुनाया करता है। मरने पर माता पिता भ्राता आदि कोई भी साथ नहीं जाते, किन्तु उसको ऐसे छोड़ देते हैं जैसे फल रहित वृक्ष को पक्षी। और उसके कमाये हुए धन का कोई और ही स्वामी हो जाता है। उसके शरीर के रुधिर माँस और हड्डियों को अग्नि जला कर भस्म कर देती है। जिस प्रकार कमल की पंखुरी पर पानी की बूंद पल भर भी नहीं ठहरती, उसी प्रकार यह चंचल प्राण भी धन और स्त्री पुत्रों आदि में अतृप्त हुए चले जाते हैं उसी भांति हम तुम भी जायेंगे। देखो किसी कवि ने क्या अच्छा कहा है--

पायन धूर समान विभव अरु जीवन शैल नदी की धार।
मानुषता जल बिन्दुसी चञ्चल फेन समान है जीवनतार॥
जो न करै थिरह्वै शुभकर्म जुस्वर्ग किवाड़न खोलनहार।
सो पछितावत बूड़ भये तब बाढ़त शोक समुद्र अपार॥

और इसी प्रकार कहा है--

गर्भ चढ़े पुनि सूप चढ़े पलना पे चढ़े चढ़े गोद धना के।
हाथी चढ़े, घोड़ा चढ़े सुखपाल चढ़े चढ़े जोम धना के॥
वैरी और मित्र के चित्र चढ़े कविब्रह्म भने दिनबीते गनाके।
ईश कृपालु को जानो नहीं अब कांधे चढ़े चलेचारजनाके॥

हे यशोदा! संसार के माया मोह में फंसकर मनुष्य ईश्वर को उस अवस्थातक भी, जब कि वह इस संसार से चले बसता है नहीं जानता। अतएव विद्वानों ने कहा है, पाँव की

रज के समान धन को, पहाड़ की नदियों के वेग के समान यौवन को, जल के बबूले के समान आयु को, फेनों के समान जीवन को समझ सुख में भी कभी परमेश्वर को न भूलती हुई संसार को असार जान धर्म के कार्य करो। क्योंकि जब तुम मन में यह भले प्रकार समझ लोगी कि संसार के अद्भुत और अनेक चमकीले पदार्थों में से एक भी साथ नहीं जावेगी तभी जगत् के पदार्थ तुम्हें तुच्छ दीखेंगे। फिर तुम जगत् के पदार्थों पर मोहित होकर किसी को क्लेश देना अपना कर्तव्य न समझोगी। इस लिये मौत का स्मरण रखना सांसारिक द्वन्द्वों से बचने के लिये परमौषधि है।

बीबीजी! अनेक आत्माओं ने इस बात को समझ कर संसार के झगड़ों से बचकर आत्मोन्नति के शिखर पर चढ़ परमानन्द प्राप्त किया। देखो बौद्धमत के प्रचारक बुद्धदेव जिनकी अवस्था ३० वर्ष की थी एक दिन वायु सेवन के अर्थ रथ पर चढ़े जा रहे थे, ज्योंहीं नगर के फाटक से निकले त्योंहीं एक शव को देख कर रथवान् से पूंछा कि यह क्या है?

रथवान ने कहा महाराज इस की मृत्यु होगई है।

बुद्ध—क्या हरएक को मृत्यु घेरती है?

रथवान्—निःसन्देह सब को मरना होता है।

बुद्ध—तो क्या मैं भी मरूंगा?

रथवान्—अवश्यही।

बुद्ध ने यह सुन कर ठंढी सांस ली और घर चले आये और मन में विचार करने लगे कि मैं इन दुःखों से क्योंकर बचसक्ता हूं। अन्त को एक दिन रात्रि के अन्तिम भाग में अपनी प्यारी स्त्री और नन्हें बालक को छोड़कर चल दिये

और विद्योपार्जन करने लगे। फिर अष्टांग योग की सहायता से नित्य की मृत्यु से बच अमर पद को प्राप्त किया। जिनका नाम हजारों वर्ष व्यतीत होने पर भी यश के साथ लिया जाता है।

इसी प्रकार स्वामी दयानन्द अपने पिता माता के एकलौते पुत्र धनी की सन्तान, एवं बड़े प्रेम और लाड़ से पाले गये होने पर भी अपनी प्यारी बहन को विशूचिका से मरते देख, संसार से विरक्त होगये और इसी वैराग्य के रोकने में एक दिन बिना कहे सुने रात्रि में घर से चल दिये। और अनेकान कष्टों को सहते विघ्नों को झेलते हुए बड़े२ विद्वानों से निघा पड़ी, योगी महात्माओं से योग सीखा। नर्मदा और हिमालय के जंगलों में गमन कर अनेक बातों को जान संसार में वैदिक सिद्धान्तों का प्रचार किया, जिस की चर्चा आज समस्त संसार में फैल रही है। गो स्वामीजी का पंचभौतिक शरीर अब नहीं रहा, परन्तु भूमण्डल पर उनके जीवन के गुण गाये जाते हैं। *

प्यारी यशोदा! मृत्यु के स्मरण रखने से मनुष्य पापों से बच कर अमर पद प्राप्त कर लेते हैं। इसलिये तुम भी इसका स्मरण रखती हुई सबकी प्रिय बनने के लिये कठोर वचनों के भाषण को त्याग दो, क्योंकि कठोर वचन बोलने वाली स्त्रियों के सब गुण नाश होजाते हैं, कर्कशा स्त्री से कोई उत्तम काम नहीं बन सकता। कलहारी और कठोर वचन बोलने वाली स्त्रियाँ मिल जुल कर नहीं रहतीं, नौकर चाकर सदा उसकी निन्दा करते हैं, पति अप्रसन्न रहता है।

---

* यदि आप को सम्पूर्ण जीवन देखना हो तो हमारा बनाया सरस्वतीन्द्र जीवन देखिये जिसका मूल्य १॰) डा० व्य० ।॰) है।

देखो एक शहर में बाँकेबिहारीलाल की कुमति नाम की स्त्री थी. वह अपने अड़ोसियों, पड़ोसियों, कुनबे वालों आदि सब अपने परायों से लड़ती रहती थी। मुंह सिकोड़ कर बोलती अर्थात् हर समय उठते बैठते चलते फिरते उसको क्लेश और लड़ाई की ही सूझती थी। इस कारण कुमति को सब से वैर होगया। कोई भी उससे मेल नहीं रखता था। एक दिन सेठ जी तो भोजन करके बाहर चले गये, थोड़ी देर बाद ईंधन वाली कोठरी में आग लगी, कुमति ने बहुतेरा चिल्लाया पुकारा, परन्तु किसी ने भी सहायता न की। केवल दिखाने के लिये नौकर चाकर इधर उधर दौड़ते रहे, क्योंकि वह मन से तो बुरा चाहते ही थे। होते २ वह आग इतनी बढ़ी कि कपड़े लत्ते, हिसाब की बहियाँ, गहने पाते की संदूकें खूब जलने लगीं। आख़िर को वह आग सरकार की सहायता से बुझाई गई। इतने में सेठजी आये और अपने सर्वस्व का नाश देख कर उनके प्राण हवा होगये। अंत को विचारे ने संतोष कर अपनी स्त्री को जो आग की तेज़ी और डरसे मृत्यु के तुल्य होगई थी बचाया। कुमति के खोटे स्वभाव से तंग होकर कुनबे वाले तो पहले ही से अलग हो गये थे परन्तु अब सेठजी से भी झांय २ होने लगी। कभी कहती कि तुम सरीखे हमारे बाप के नौकर हैं, कभी कहती ऐसों की सूरत देखने से रोटी नहीं मिलती। निदान, जब बिचारा बहुत ही तङ्गहोगया तो एक दिन बिना कुछ कहे सुने कहीं चला गया और फिर कभी घर को न आया। कुमति रोती पीटती रह गई। लाखों की ज़ायदाद तो पहले ही फूंक चुकी थी और कोई गुण भी न आता था जिस से पेट पालती। निदान, रोटियों के लिये तरसने लगी।

इस लिये बीबी जी संसार में मीठे बचनों के समान कोई स्वादिष्ट वस्तु नहीं, वरन् मीठे वचनों के कारण सीठी वस्तु

में भी मीठापन आजाता है और मीठी वस्तु अधिक मीठी जान पड़ती है। इसीको वशीकरण मन्त्र कहते हैं। यह समस्त संसार के प्राणियों को अपने अधीन कर लेता है। सिंह से भयंकर, रीछ से भयानक पशु भी मीठे वचनों की रस्सी में फंस कर सेवकाई करते हैं। इसी हेतु वाणी के मिठास का रस बहु-मूल्य होता है। हीरा मोती कोई भी उसकी तुलना नहीं कर सक्ते। देखो जब प्यार और गम्भीरता की धार जिह्वा से बहती है तो स्त्री और पुरुष उस पर हीरा मोती न्यौछावर कर फेंक देते हैं। इसी वाणी से मनका भाव जाना जाता है। सम्पूर्ण ऋषि और मुनि इस वाणी की प्रशंसा करते हैं। वेद भगवान् ऐसी वाणी को उत्तम वाणी बतलाते हैं। इसी हेतु सीताजी ने कहा है कि मीठे वचन कोष से भी अधिक सुख देते हैं। द्रौपदीने सत्यभामा से कहा है कि स्त्री के शरीर की शोभा मधुर भाषण से होती है। मन्दालसा ने अपने पुत्र को रस युक्त वाणी के बोलने की शिक्षा की। सुमित्रा देवी ने वन चलने के समय लक्ष्मण जी से कहा था कि बेटे तुम कभी अप्रिय वचन न कहना। शकुंतला ने विपत्ति के समय राजा दुष्यन्त से यही कहा था कि राजन, निठुर वचन शरीर रूपी वृक्ष को भस्म कर देते हैं। अनुसुइयाजी का वचन है कि मृदु-भाषी जगत् में शिरोमणि होता है। सत्य तो यह है कि तलवार और तीर आदि के घाव भर जाते हैं, परन्तु तीक्ष्ण वाणी से जो मन में घाव हो जाता है वह कभी नहीं भरता। इस हेतु कहा है कि नाना प्रकार के भूषण चंद्रमा के समान उज्वल, मोतियों के हार, स्नान, चंदन का लेपन, फूलों का शृंगार, सुधरे हुए केशादि स्त्री पुरुषों को उतना भूषित नहीं करते; जितना संस्कार युक्त वाणी ही सुशोभित करती है।

इस के उपरांत और भूषण सब तुच्छ हो जाते हैं, परन्तु

वाणी का भूषण सदा अमर रहता है । इसी हेतु बुद्धिमान पुरुषों ने जल अन्न और प्रिय वचन को रत्न माना है। इस कारण जो स्त्री पुरुष उस मीठी वाणी को जिस से सम्पूर्ण जीव संतुष्ट होते हैं और कुछ देना भी नहीं पड़ता, भाषण नहीं करते वह पशु के समान हैं। इस लिये सब को सदा सत्य प्रिय भाषण करना चाहिये जिस से संसार में यश और आनन्द की प्राप्ति हो। क्योंकि कुबेर के समान लक्ष्मीवान होने पर भी कठोर वचन कष्टायमान करते हैं और मधुर वाणी कहने वाला मयूर सब को प्रिय होता है। इसके साथ धन होने की शोभा अथवा लक्ष्मीवान हो कर उस की सार्थकता जब ही होती जब कि वह—अपने खाने पीने आदि में उचित रूप व्यय करता हुआ—सत्पात्रों को दान देते हैं—

वे यश प्राप्त करने के साथ संसार में सदा सुखी होते हैं-

प्राचीन काल में योग्य और बड़े २ दान सुपात्रों को दिये जाते थे जिनके सैकड़ों उदाहरण प्राचीन ग्रन्थों में पाये जाते हैं. देखो जिस समय राजा रघुका राज्य था उस समय में बड़े २ महर्षि जङ्गलों में निवास करते थे। जिनके पास सैकड़ों विद्यार्थी पढ़ते थे। एक समय राजा रघु ने विश्वजित नामक यज्ञ किया। उस यज्ञ में रघु ने अपने सम्पूर्ण धन को दान कर दिया। उसी समय महर्षि वरतन्तु के शिष्य आये, तब रघु ने मिट्टी के पात्र में अर्घ्य का सामान रख उन ऋषि के पैर आदि धो आसन पर बिठाया और कुशल प्रश्न के अनन्तर राजा ने पूछा कि आप किस कारण से आये हैं। तब शिष्य ने कहाकि जिसके लिये मैं आया था उस का समय निकल गया, अब मैं आप से नहीं कहा चाहता। तब राजा के बहुत पूछने पर ऋषि ने कहा कि विद्या की समाप्ति पर गुरुजी ने मुझे गृह जाने की आज्ञा दी, तब मैंने गुरुदक्षिणा के लिये प्रार्थनाकी।

इस पर गुरुजी ने कहा कि मैं तेरी निष्कपट भक्ति से ही प्रसन्न हूं, मैं गुरुदक्षिणा नहीं लूंगा। मेरे बार २ कहने पर कहा कि यदि तू नहीं मानता तो मैंने तुझे चौदह विद्यायें पढ़ाई हैं अतएव चौदह करोड़ दे।

इतना सुन रघु ने कहा कि आप मेरी यज्ञशाला में ठहरिये। मैं आपका मनोरथ पूर्ण करूंगा। यह कह राजा ने उन को ठहरा खान पान का प्रबंध कर मन्त्रियों और सभासदों को बुला विचार किया और यह बात ठहरी कि कुबेरके ऊपर चढ़ाई की जाय। तब सूचना के लिये कुबेर के पास दूत भेजे गये। इस सूचना को पाकर कुबेर ने उसी रात्रि में अपने दूतों द्वारा रघु के खज़ाने को अशर्फियों से भरवा दिया। इधर प्रातः काल सेना के लिये बिगुल बजा, इसी बीच खज़ाने के नौकरों ने खज़ाने के सुवर्णमय होने की सूचना दी। तब रघु ने उन शिष्य को कोषगृह में लेजा कर सम्पूर्ण धन उन को देना चाहा, पर उन्होंने चौदह करोड़ से एक पाई भी अधिक न ली! और केवल चौदह करोड़ ले गुरु की भेट कर अपने गृह को गये।

इसी प्रकार राजा हरिश्चन्द्र ने विश्वामित्र की इच्छा पूर्ण करने के लिये अपने कोष और सम्पूर्ण राज्य देने के पश्चात् उन की न्यूनता पूर्ण करने के लिये स्त्री और पुत्र को बेच आप चांडाल की सेवा की।

महाराजा दशरथ ने महात्मा विश्वामित्र जी की इच्छापूर्णार्थ अपने सुकुमार पुत्र रामचन्द्र और लक्ष्मण को यज्ञ की रक्षा के लिये वन को भेजा था।

देखो किसी देश में एक बुद्धिमान राजा राज्य करता था,

जिस की रानी बुद्धिमती चतुरा और सुलक्षणा थी। दैवयोग से राजा का परलोक गमन हो गया और संतान न होने के कारण राजगद्दी का काम रानी जी को ही करना पड़ा। कालान्तर में संन्यास आश्रम में स्थित एक विदुषी स्त्री विचरती हुई उस नगर में आ एक बाग़ में ठहरी और उसने वहां सायंकाल के समय कुछ उपदेश करना प्रारम्भ किया। थोड़े ही काल में बहुत स्त्रियां उस के व्याख्यान सुनने को आने लगीं। एक दिन महारानी जी को भी उस के समाचार मिले, तब महारानी जीने उन को अपने बगीचे में ठहराया। राजा के परलोक वास होने के कारण महारानी जी का चित्त शान्त न था, अतएव उन्हों ने श्रीमती से कोई अच्छी कथा सुनाने को कहा जिस से चित्त शान्त हो। संन्यासिनी ने वैराग्य विजय की कथा महारानी जी को सुनाई, उस में एक जगह पर यह आया कि—

चलालक्ष्मी श्चलाप्राणाश्चलंजीवितमंदिरे।
चलाचले च संसारे धर्म्मएकोऽहिनिश्चलः॥

इस को सुन महारानी ने सोचा कि जो कुछ मेरे पास है उस को धर्म के कार्य अर्थात् परोपकार में लगाना चाहिये। यह विचार श्रीमती ने बालकों के लिये कालिज तथा कन्याओं के लिये कन्या पाठशालायें बनवाना प्रारम्भ कीं। अनाथों के लिये अनाथालय; लूले लंगड़ों के लिये गृह तथा भोजनों का प्रबन्ध किया, मार्गों में कुएं बनवाए। इसी प्रकार अनेक शुभकार्य किये। जब मन्त्रियों ने देखा कि महारानी जी सब रुपयों को ऐसे ही कार्यों में लगाये देती हैं, तब सबने मिलकर एक गुप्त सभा की। उस में विचार किया गया कि अब क्या करें। सोचते २ मंत्रियों ने एक पुरुष को, जो महारानी जी का मुख्य-

मंत्री तथा सम्मति दाता था, महारानी के कमरे में यह वाक्य लिख आने को कहा कि " विपत्ति दूर करने के लिये धन की रक्षा करे " महारानी ने इस लेख को देख लिख दिया कि — " जो धर्म करने से महानता को प्राप्त हो गये हैं और जिनका धन परोपकारी कामों में ही लगा है उन को विपत्ति कहां "।

दूसरे दिन जब रानी भ्रमण के लिये गई तब मन्त्री ने अपने लेख का उत्तर देख पुनः तीसरा यह वाक्य लिख दिया —

"दैव योग से विपत्ति आ भी जाती है जैसे युधिष्ठिर रामचन्द्र, नल, हरिश्चन्द्र आदि महात्माओं पर भी विपत्ति पड़ी अतएव धन की रक्षा करनी चाहिये"।

जब महारानी ने अपने उत्तरका भी उत्तर देखा तब चौथा वाक्य फिर यह लिख दिया –

"यदि विपत्ति आती है तो इकट्ठा किया धन तो पहिले ही नाश होजाता है, देखो युधिष्ठिर पहले धन हारा, फिर विपत्ति आई, रामचन्द्र जी का पहले राज्य छिना फिर वनवास हुआ, नल भी पहले राज्य ही हारा फिर दुःख उठाये"।

तीसरे दिन मन्त्री इस सम्पूर्ण लेख को उतार ले गया और गुप्त सभा के सभासदों के सन्मुख सब वृत्तान्त सुनाया, जिस को सुन उनकी बुद्धिमानी जान सभासद कुछ न कर सके। महारानी जो योग्यतानुसार प्रजा के सुखके लिये प्रयत्न करती रहीं, जिस से सब प्रजा आनन्द में थी। पहलेसे दुगुनी तिगुनी आमदनी हुई।

इसी प्रकार बहन जो धर्म्म से धन संचय कर अन्नादि पदार्थों को यथा क्रम बांट कर आप सेवन करते और सत्पात्रों

को दान देते हैं, उनके गृह कभी लक्ष्मी से खाली नहीं होते। इस कारण तुम सब को भाग देती हुई यथार्थ सुख को प्राप्त करो। देखो अहिंसक कभी रोगी नहीं होता और सत्य-वादी की सर्वत्र विजय होती है। पवित्रता से मन प्रसन्न रहता है, इन्द्रिय निग्रह सुख का कारण है और दम अर्थात् मन को बुरे कर्मों से रोकने में सब प्रकार के सुखों की प्राप्ति होती है। जो स्त्रियाँ दूसरे के वैभव को देखकर नहीं जलतीं उनके गृहों में अमृत की वर्षा होती है तथा उन्हीं को सब ऋतुओं में सुख देने वाले गृह, बुद्धिमान् पुत्र, आवश्यकता के अनुकूल धन, पतिपत्नीमें प्रेम, आज्ञापालक सेवक, अतिथियों की सेवा, परमात्मा की भक्ति, प्रतिदिन गृह में मीठाजल और अन्न तथा सर्वदा साधु महात्माओं के सत्संग की प्राप्ति होती है। और जो उपरोक्त गुणों से रहित अर्थात् अन्य के वैभव को देखकर जलती रहती हैं वह अपार दुःख को भोगती हैं। मैं तुमको इस विषय में कई प्राचीन इतिहास सुनाऊँगी परंतु अब समय भोजनों का होगया है अब समाप्त करती हूं। उस समय दो बजे पधारिये तब कहूंगी।

यशोदा--अच्छा चलिये। और सब चलदीं। भोजन करने के पश्चात् आराम स्थान में पहुंच आराम किया।

* * *

सूर्य्य का ताप घटने पर यथा समय यशोदा देवी आगईं, अतः प्रियंवदा देवी ने भी अपने पूर्व विषय को प्रारम्भ करते हुए कहा—

'बहन तुमने रामायण में राम का हाल तो सुना ही होगा देखो केकई राम को भरत से अधिक प्यार करती और चाहती थीं परन्तु दासी मथरा के सिखाने से जब उसके सिर, लोभ,

डाह का भूत सवार होगया, उसने फिर किसीकीएक न मानी अन्त में राम सीता बन को गये, राजा सुरपुर सिधारे, केकई स्वयं विधवा होगई, परन्तु क्या उसने राज्याभिषेकको देखा? नहीं, भरत धर्म्मात्मा थे उन्होंने स्वयं उसी वेष में रहना विचारा जिसमें राम रहते थे, अन्ततः १४ वर्षके पीछे राम ने ही आकर राज्य किया, बहुत इस घटना को हुये वर्षें बीत गईं परन्तु केकई की करतूत को कोई नहीं भूला।

इसी प्रकार इस बढ़े हुए, अत्यन्त लोभ एवं जलनके भूत ने राजा दुर्योधन के सिर पर सवार होकर युधिष्ठिर आदि पांचों भाइयों को बारह वर्ष का वनोवास कराया फिरभी जब शान्ति न हुई, तब महाभारत के मैदान में सहस्त्रों मनुष्यों के प्राणों का नाश कराया। अर्थात् भारत वर्ष रसातल को पहुंचा दिया।

प्राचीन काल में विक्रम के वंशमें सिन्धुल नामी एक राजा उज्जैन की गद्दी पर राज्य करते थे जिनकी वृद्धावस्थामें भोज नामक पुत्र उत्पन्न हुआ। जब वह पाँच वर्षका था तब सिंधुल के प्राण पयान करने का समय आगया, उस समय राजा ने अपने मन्त्री बुद्धिसागर को बुलाया और इस विषयमें विचार आरम्भ किया। अन्त को राजा ने कहा कि यदि भोज को गद्दी देता हूं तो मेरा भाई मुञ्ज जो बलवान् है मेरे लड़के को वृथा मार डालेगा और आप राज्य करेगा। यह विचार राजा सिंधुल ने अपने भाई को गद्दी दी और भोज को उसे सौंप आप प्राण छोड़ दिये। मुञ्ज ने गद्दी पर बैठते ही भोज के लिये पाठशाला नियत की जहां उसने थोड़े ही समय में व्याकरण, इतिहास, न्याय आदि पढ़ कविता में उत्तम रचना रचने का अभ्यास कर लिया। एक दिन राजा मुञ्ज पाठशाला देखने गया, वहां भोज की विद्या और चतुराई को देख मनमें

विचारा कि यह तो अपने पिता से भी बलवान् और प्रतापी दीख पड़ता है, तरुण होकर अवश्य मुझ से राज्य छीन लेगा, इसलिये इसे अभी मारना ठीक है। यह विचार कर अपने मित्र वत्सराज को बुला कर कहा कि तुम मेरे मित्र हो सुख और दुःख के साथी हो, जो काम दूसरे कर सकते हो उसे कोई भी नहीं कर सकता। इस लिये तुम आज रात के समय भोज को वन में ले जा उसे मार उसका सिर काट मेरे पास लाओ। वत्सराज ने इसको सुन बहुत दुखी होकर उससे कहा कि भोज अभी बालक है न उसके पास सेना है न बल है, फिर आपको क्या डर है? उसके मारने से क्या हाथ आवेगा? बिना विचारे काम करना अच्छा नहीं। वत्सराज की यह बात सुन मुञ्ज बहुत क्रोधित हो कर बोला कि तुम भी भोज से मिले हुये हो, तुम समेत उसको मारूंगा। यह सुन वत्सराज ठंडा होगया और सोचने लगा कि मूर्ख और कायर मनुष्य जैसा चाहें वैसा बुरा कर्म करने के लिये तैय्यार होजाते हैं और जितेन्द्रिय जिस विषय को चाहे छोड़ सकता है। साधु दुःसह बात को भी सहन कर सकता है और विद्वान को किसी बात की अपेक्षा नहीं होती। परन्तु मूर्ख मनुष्य उपदेश करने से उलटा जलता है। ऐसा विचार उसने मुञ्ज से कहा कि हे महाराज! मैंने यह बात बिना विचारे कही इस लिये मेरे अपराध को क्षमा कीजिये। यह सुन मुञ्ज हंस कर कहने लगा कि मैंने तुम्हारा अपराध क्षमा किया, मेरे कार्य्य को तुम शीघ्र पूरा करलाओ। वत्सराज भोज के गुरु के पास गया और बलपूर्वक भोज को रथ में बिठाल वन में ले जाकर कहा कि देखो तुम्हारे चचा ने राज्य के लोभ से आपके मारने की आज्ञा दी है इस लिये अब मैं आप को मारता हूं। उस समय भोज ने यह श्लोक पढ़ा—

यो मे गर्भगतस्यादौ पूर्वं कल्पितवानपयः ।
शेषवृत्तिविधानेद्द स किं सुप्तोगतोऽथवा ॥

अर्थात् जिस ईश्वर ने गर्भमें मेरे लिये दूध उत्पन्न किया, क्या वह शेष अवस्था में रक्षा करने के लिये सो गया है ? इस लिये तुम्हारा कोई दोष नहीं, क्योंकि तुत सेवक हो. सेवक का धर्म स्वामी की आज्ञा पालन करना है। इस कारण जो कुछ मेरे चचा ने आज्ञा दी उसका पालन करो: परन्तु मैं एक पत्र लिखे देता हूं उसको चचा के लिये दे देना । वत्सराज ने कहा कि बहुत अच्छा। भोज ने पत्र लिख वत्सराज को दिया और कहा कि अब देर न करो । भोज के इस धीरज और दृढ़ता को देखकर वत्सराज अचम्भे में होगया और आंखों से आंसुओं की धारा बहने लगी, तलवार हाथ से छूट पड़ी और कहने लगा कि जो चीजें शरीर के साथ नष्ट हो जाती हैं उन्हीं में मैं फंसकर सदा साथ रहने वाले धर्म का त्याग न करूंगा। यह कह वत्सराज भोज के पैरों पर गिरपड़ा और कहा कि धिक्कार है मुझको ! जो मैं आप के चचा के कहने से इस अधर्म कार्य के करने को उद्यत हुआ. भोज इस दया और प्रीति को देख वत्सराज केगले लिपट गया। तब वत्सराज भोज को रथ में विठा अपने घर को लेगया, वहां उसको छिपाकर रक्खा। प्रातःकाल दूसरे मनुष्य का कृत्रिम शिर बनवाकर मुञ्ज के पास लेगया और कहा कि मैं काम कर आया। यह सुनतेही मुञ्ज ने वत्सराज को अपने पास विठा लिया और कृत्रिम शिर को देख सब के सन्मुख बहुत रोया, और पूछा, मरनेके समय भोजने मेरे लिये भी कुछ कहा था ? तब वत्सराजने भोजका लिखा हुआ पत्र देदिया. मुञ्ज उस कत्रिम शिर को गाड़ने की आज्ञादे पत्रको लेकर महल में गया और एकान्त में बैठ उस पत्रको खोल कर वांचा, जिसमें निम्न लिखित दो श्लोक लिखे हुए थे-

मांधाता समहीपति क्षितितलेऽलंकार भूतोगतः ।
सेतुर्येनमहोदधौ विरिचितः क्वासौ दशास्यान्तकः ॥
अन्येचापि युधिष्ठिर प्रभृतयो ह्यस्तंगताभूपते ।
नकं नापि समंगतावसुमति मन्येत्वया यास्यति ॥

अर्थात् राजा मान्धाता जो बड़े प्रतापी हुये और श्रीरामचन्द्रजी जिन्हों ने समुंद्र का पुल बांध रावण को मारा और युधिष्ठिरादि बड़े २ महाराजा हो गये और मर कर चलेगये परंतु यह पृथिवी किसी के साथ नहीं गई, जान पड़ता है आपके साथ जायगी ।

यौवनंधनसम्पत्तिः प्रभुत्वमविवेकता ।
एकैकमप्यनार्थाय किमुयत्र चतुष्टयम् ॥

तरुणाई, धन, प्रभुता और अविवेकता, इन चारों में से जहां एक भी होती है वहां कुदशा होजाती है। परंतु जहां यह चारों हों वहां का क्या ठीक ? इन दोनों श्लोकोंको विचार मुञ्ज बहुत पछिताया और मूर्छित हो गया । थोड़ी देरके बाद चेत होने पर तलवार लेकर अपना सिर काटने को उद्यत हो गया, उस समय मंत्रियों ने बहुत समझाया । तब राजा ने कहा कि मैंने लोभ के वश होकर दोनों कुलों का नाश किया । ऐसा सुपूत गुणवान् अच्छे आचरण करने वाला सुन्दर एक ही पुत्र कुल को सुशोभित करता है, जिस प्रकार चन्दन के एक पेड़ से सारा बन सुगंधित हो जाता है। तब वत्सराज ने हाथ जोड़कर कहा कि मैं आप को दयालु प्रकृति को जानता था । इसी लिये मैंने भोज को नहीं मारा और आप को कृत्रिम सिर दिखला दिया । यह सुन राजा हरामरा होगया औरभोज

को बड़े समारोह से बुला गद्दी पर बिठा आप वानप्रस्थ ले पत्नी सहित बन को गया।

इसी प्रकार केरल देश में सुधार्मिक नाम एक राजा था, जिस के राज्य में सब प्रकार से प्रजा सुखी रहती थी। कालान्तर में राजा के पुत्र उत्पन्न हुआ जिस का नाम चन्द्रहास रक्खा गया। वह अभी छोटा ही था कि सुधार्मिक पर उस के वैरियों ने चढ़ाई की। लड़ाई में राजा मारा गया और पतिव्रता रानी राजा के साथ सती होगई। छोटा बालक बिना माता के रह गया, जिस को दाई कुन्तलपुर नाम नगर को लेगई, जहां बड़े प्रेम से उस का लालन पालन करने लगी जब वह तीन वर्ष का हुआ तो वह दाई भी परलोक को सिधारी। अनाथ बालक का अन्य नगर की स्त्रियां दया भाव से पालन करने लगीं। ज्योंही वह पांच वर्ष का हुआ एक दिन घूमता घामता कुन्तलपुर के प्रधान मंत्री धृष्टबुद्धि के यहां जा पहुंचा। वहां ब्रह्मभोज हो रहा था, चन्द्रहास के स्वरूप को देख मुनीश्वरों को अचम्भा हुआ, उन्हों ने मंत्री से पूछा यह भाग्यवान बालक किसका है? मंत्री ने अभिमान से कहा कि ऐसे हज़ारों बालक कुन्तलपुर की गलियों में डोलते फिरते हैं, जिन को मैं राज कार्य्यों के कारण नहीं जानता। धृष्टबुद्धि की बात को सुन मुनीश्वरों ने कहा कि मंत्री जी ऐसा न कहिये, यह बालक बड़ा होनहार है, यह भविष्यत् में तुम्हारी सम्पदा का मालिक होगा। वह तो सब वहां से चलेगये, परन्तु मंत्री को यह बात बहुत बुरी लगी और कहा यह अनाथ बालक मेरा उत्तराधिकारी क्योंकर हो सकता है? कभी नहीं मैं इनकी बात को झूठी कर दूंगा। यह ठान घातकों को बुला आज्ञा की, इस बालक को बन में ले जाकर मार डालो और इस का कोई अंग काट कर ले आओ। घातकों ने ऐसा ही किया। अर्थात्

वन में ले जाकर मारने को उद्यत हुए, उस समय उन के हृदय में दया का सञ्चार हुआ और विचारा कि यह छोटा बालक मंत्री जी की क्या हानि कर सक्ता है । ऐसा सोच उस के पैर की छोटी अँगुली को काट उस को वन में रोता छोड़ कर चले आये और मंत्री जी को वही अँगुली दे कर अपने घर को चले गये। इधर चन्द्रावती का राजा शिकार खेलता हुआ आ निकला और रोते हुये बालक को देख उस को दया आई और उस की सुन्दरता पर मोहित हो अपने घर ले जाकर उस को अपना दत्तक पुत्र बनाया। जहां उसका राजकुमारों की भांति लालन पालन होने लगा और उपनयन संस्कार के पीछे वेद वेदांग की शिक्षा दी गई जिस से तीव्रबुद्धि के कारण वह शीघ्र ही पंडित हो गया और धनुर्विद्या में भी चन्द्रहास बहुत निपुण हो गया।

राजा ने उस को युवराज बनाया। थोड़े काल के पीछे चन्द्रहास एक बड़ी सेना ले कर अपने पिता के शत्रुओं को जीत लूट में नाना प्रकार के मोती मूंगा माणिक्य भी साथ में लाया। यह राज्य भी कुन्तलपुर के अधीन था, इस लिये बहुत से माल के छकड़े कुन्तलपुर को भी भेजे, जिसमें से कुछ धृष्टबुद्धि नामक मन्त्री को भी दिये । छकड़ों के साथ आये हुये सेवकों से उसने पूछा कि यह धन कुलिन्दक ने कहां पाया? उन्होंने उत्तर दिया— युवराज चन्द्रहास शत्रुओं को जीत लूट में यह धन लाये थे उसी में से ये छकड़े आप की भेंट के लिये हमारे राजा ने भेजे हैं।

दूसरे दिन धृष्टबुद्धि अपने राजा की आज्ञा ले कर चन्द्रावती को गया । कुलिन्दक ने आदरपूर्वक उसका स्वागत किया, उसने चन्द्रहास सहित धृष्टबुद्धि की पूजा की और सम्मान के साथ उसे आसन पर बिठाया। कुशल प्रश्न के उप-

उपरांत धृष्टबुद्धि ने पूंछा, तुम्हारे यह पुत्र कब उत्पन्न हुआ, यह सोलह वर्ष का होगया और तुमने हमें सूचना भी न दी। कुलिन्दक ने उत्तर दिया कि चन्द्रहास हमारा औरस पुत्र नहीं है। एकवार शिकार खेलते हुये हम उस बन में जा निकले, जो कुन्तलपुर से कोई चार कोस पर है, वहां मैंने छठी अंगुली कटे रोते हुये इस बालक को देखा। मैं इसे अपने यहाँ ले आया और अपना दत्तक पुत्र बनाया।

धृष्टबुद्धि को बड़ी चिन्ता हुई। हो न हो यह वही बालक है जिस को मैंने घातकों द्वारा मार डालने का प्रबन्ध किया था, पर घातकों ने छठी अँगुली दिखा कर मुझ को धोखा दिया। अब फिर कोई ऐसा उपाय करना चाहिये कि जिससे मुनीश्वरों की बात झूठी हो जाय और यह मेरा उत्तराधिकारी न हो। यदि कहीं इस को मेरी सम्पदा मिल गई तो मेरे पुत्र अमल और मदन क्या करेंगे। निदान योंही सोच विचार कर कुटिल धृष्टबुद्धि ने उसके मारने की युक्ति निकाली। उसने ऊपर से बड़ी प्रसन्नता प्रकट की और बड़ी प्रीति से उसने कुलिन्दक से कहा—

"मैं तो अभी दोचार दिन ठहरूँगा, पर कुन्तलपुर में मेरा एक बड़ा आवश्यक काम है, उस काम के लिये चन्द्रहास को भेजदो, मैं अपने ज्येष्ठ पुत्र मदन के नाम एक पत्र उसके हाथ भेज दूँ तो उस से सब कार्य्य चला जायगा"।

कुलिन्दक भेजने पर राज़ी हो गया और चन्द्रहास जाने की तैय्यारी कर मंत्री जी का पत्र जेब में रख कुन्तलपुर की ओर रवाना हो गया। कुन्तलपुर के निकट एक अति रमणीय उद्यान था, वह वसन्त ऋतु के कारण बहुत ही शोभा युक्त था। इस बाग़ के पास आकर चन्द्रहास को थकावट मालूम हुई, उसने सोचा कि चलो यहाँ कुछ आराम करलें तब कुन्त-

लपुर में प्रवेश करेंगे। यह सोच, घोड़े को वृक्ष की जड़ से बांध, पृथिवी पर काठी बिछा, उस पर सो गया।

धृष्टबुद्धि के एक अति रूपवती 'विषया' नाम की कन्या थी, उस दिन वह अपनी सहेलियों के साथ सैर को निकली और फिरती २ वह इस बाग़ में पहुंची। बाग़ के बीचों बीच में एक अति सुन्दर तालाब था। और दूसरी लड़कियाँ तो तालाब की सुन्दरता को देखने लगीं, पर विषया उन से अलग हो इधर उधर घूमने लगी। घूमते २ वह उस स्थान पर जा निकली जहाँ चन्द्रहास सो रहा था। चन्द्रहास बड़ा सुन्दर और युवा था, विषया एक टक उसकी ओर देखती रह गई। चन्द्रहास का मुख ताकते २ उसकी दृष्टि जेब से निकले हुये एक लिफ़ाफे पर पड़ी और बिना कुछ सोचे उसने लिफ़ाफे को उठा लिया। उसके ऊपर अपने भाई मदन का नाम देख अपने पिता की लिखावट को पहचान वह मन में बहुत प्रसन्न हुई। उसने समझा कि हमारे घर से इसका कुछ सम्बन्ध भी है। लिफ़ाफे को बड़ी सावधानी से उसने खोला और पत्र निकाल कर वह पढ़ने लगी। पत्र में यह लिखा था:—

प्यारे पुत्र!

पत्र वाहक चन्द्रहास तुम्हारे पास आता है। तुम इसकी सुन्दरता का ध्यान न करना, इसकी किशोर अवस्था पर न जाना, पत्र पाते ही तुरन्त इसे विष दे देना।

तुम्हारा स्नेहशील पिता—

धृष्टबुद्धि.

पत्र पढ़ कर विषया चकित हो मन में कहने लगी कि पिता को क्या हुआ जो ऐसी क्रूरता पर कमर बांधी। जो हो, मैं

पिता के वचन को पलट दूँगी। यह सोच विषया ने "तुरन्त इसे विष दे देना" की जगह "तुरन्त इसे विषया दे देना" लिख लिफ़ाफे में पत्र को रख चन्द्रहास की जेब में डाल दिया। और आप चुपके से अपनी सहेलियों में जा मिली और हंसती हुई घर को गई। इधर चन्द्रहास की जब आंख खुली तब वह घोड़े पर चढ़ कर कुन्तलपुर की ओर रवाना हुआ और मंत्री के मकान पर पहुंच कर वह पत्र मदन को दिया। पत्र को पढ़ मदन बहुत प्रसन्न हुआ। और झटपट मुहूर्त विचरवा कर विषया का विवाह चन्द्रहास के साथ कर दिया।

इधर चन्दनवती में चन्द्रहास के चले जाने पर धृष्टबुद्धि ने प्रजा को कष्ट देकर बहुत सा रुपया वसूल किया। बुड्ढे कुलिन्दक से कुछ करते धरते न बना। धृष्टबुद्धि की क्रूरता ने उसको बहुत तंग किया। धृष्टबुद्धि बहुत सा रुपया इस तरह वसूल कर कुन्तलपुर लौट आया। वह मन में सोचता था कि चन्द्रहास कब का मरगया होगा। मैंने मुनीश्वरों का भविष्यवाद झूठा कर दिया।

पर कुन्तलपुर पहुँचने पर और ही कुछ गुल खिला। उसने देखा जिस को मैंने मरा हुआ समझा था वह मेरा दामाद बन गया है। अब क्या किया जाय, भावी को कौन टाल सकता है। परन्तु क्रूर धृष्टबुद्धि कब मानने वाला था। उसने कहा चाहे विषया विधवा होजाय, परन्तु चन्द्रहास के जीवन का अन्त किये बिना न मानूंगा। यह विचार कर मन्त्री ने शहर के बाहर एक सुनसान स्थान में दो घातकों को नियत कर उनको आज्ञा दी कि आधी रात को जो कोई यहां आवे मार डालना।

इधर चन्द्रहास से कहा कि बेटा, हमारे यहां यह रीति है कि विवाह के बाद दामाद बाहर जंगल में देवता की पूजा करने जाते हैं, आज विवाह हुये कई दिन होगये इसलिये आज आधीरात के पीछे तू भी पूजा करडाल! अपने ससुर की आज्ञा को मान चन्द्रहास एक थाली में पूजा का सामान और दीपक रख चला।

इधर कुन्तलपुर के महाराज ने रात को बुरा स्वप्न देखा जिसको देख उन्होंने अपने मन्त्रियों तथा मुख्य मन्त्री धृष्टबुद्धि के पुत्र मदन को बुला सभा की, और कहा कि मेरा जीवन बहुत थोड़ा है मेरे कोई पुत्र भी नहीं है, अब मैं राज्य का भार किस को सौंपूं।

मदन चन्द्रहास को अपना बहनोई होने के कारण बहुत ही चाहता था, उसने चन्द्रहास को गद्दीका स्वामी बना देने को कहा। राजा ने भी उसके बहुत बुद्धिमत्ता के कार्य्यों को देखा था, अतएव वह भी चाहता था और मन्त्रियों ने भी उसही को युवराज बनाने की सम्मति दी। सभा समाप्त हुई, मदन अपने घर चले। चलते २ बारह बजेके उपरान्त नगर में पहुंचे बीच में चन्द्रहास मिले। मदन ने कहा कि चन्द्रहास तुम कहां? उस ने कहा कि तुम्हारे पिता ने पूजा करने भेजा है। उसने कहा कि नहीं तुम मत जाओ तुम्हारे बदले मैं पूजा किये आता हूं, तुम कुन्तलपुर जाओ वहां राजा तुम्हारी प्रतीक्षा कर रहे हैं। चन्द्रहास कुन्तलपुर चला गया और दूसरे दिन ही उसका राज्याभिषेक होगया। इधर मदन ज्योंहीं उस निर्जन वन में पहुंचा कि घातकों ने उसे मारडाला। दोपहर को धृष्टबुद्धि को समाचार मिले कि चन्द्रहास का तो राज्याभिषेक होगया। वह दौड़ा जंगल को गया, देखा तो वहाँ उस

का पुत्र मदन मरा पड़ा है। फिर क्या फिर तो धृष्टबुद्धि ने भी वहां सिर पटक २ अपने जीवन को समाप्त कर दिया।

इस लिये प्यारी यशोदा! इन उपरोक्त बातों को विचार लोभ को त्याग व्यर्थ की डाह और ईर्षा को छोड़ सन्तोष को धारण करो, क्योंकि विना सन्तोष के अधिक धनवान् होनेपर भी उसकी आशा पूर्ण नहीं होती और न उसको शांति शुद्धता और धैर्य्य की प्राप्ति होती है। देखो, भूख लगने पर भोजन खाने, प्यासे होने पर पानी पीने से तृप्ति होजाती है; परन्तु धन मिलने से मन की आशा पुर्ण नहीं होती। वरन् ज्यों २ धन मिलता जाता है त्यों २ लोभ बढ़ता जाता है। यथार्थ में यह एक प्रकार का असाध्य रोग है। मेरी समझ में लोभियों को कोष का सन्तरी समझना चाहिये। ऐसी स्त्रियाँ जब तक जीती रहती हैं तब तक सन्तरी के समान धन की रखवाली करती रहती हैं, मरने पर अपनी सम्पत्ति दूसरों के लिये छोड़ जाती हैं जिससे उन को किसी प्रकार का लाभ नहीं होता। इस लिये हे यशोदा! तुम लालच और धन की डाह को छोड़ यथार्थ रीतिसे धन को व्यय कर बहुओं का वस्तु आभूषणादि से सत्कार कर प्रसन्नता पूर्वक वार्तालाप किया करो और कोष की कुंजियां बेटों को दे दो। क्योंकि धन, मित्र और पृथ्वी यह फिर भी मिलते हैं परन्तु मनुष्य शरीर बारम्बार नहीं मिलता। इस लिये उत्तम जनमान को ही श्रेष्ठ धन समझते मध्यमजन मान के साथ धनको चाहते हैं-और अधम नर नारी केवल मात्र धन सञ्चय की ही ओर ध्यान देते हैं अतः तुम श्रेष्ठोंकी भाँति धनपर लात मार ईश्वर भजन आदि अर्थात् सत्कर्मों के करने में ध्यान दो देखो। फिर तुम्हारे घर में कैसे २ सुख और आनन्द की वर्षा होती है। समय मिलने पर उत्तम २ पुस्तकें पढ़ा करो, क्योंकि इसी को स्वाध्याय यज्ञ कहते हैं।

ऋषियों के ऋण से उद्धार वही स्त्री पुरुष हो सक्ते हैं जो ऋषि प्रणीत ग्रन्थों का पाठ करते हैं। बारम्बार पढ़ने और विचार करने से मन को शांति और ज्ञान प्राप्त होता है और स्वदेश व अन्य देशों के इतिहास पढ़ने से देश और प्रजा व राजा के कर्त्तव्य कर्मों का ब्यौरा मालूम होता है। उत्तम २ उपन्यास पढ़ने से अनेक प्रकार की चतुरताओं का अनुभव होता है। समाचार पत्रों के अवलोकन से अनेक अपूर्व और अद्भुत घटनायें और देश देशान्तरों के व्यौपार, पदार्थविद्या सम्बन्धी और शिल्प-विद्या की अपूर्व रचनायें, चालाक स्त्री पुरुषों की चालाकियां, भूगोल खगोल के समाचार इत्यादि बातों का परिज्ञान होता है।

इसलिये तुम पढ़ बहुओं को भी सुनाया करो, फिर वह तुम्हारी चेरी हो जायँगी, गृह आनन्द भवन बन जायगा। अब संध्या का समय हो गया है इसलिये अब मैं इसको समाप्त करती हूं।

यशोदा पर प्रियंवदा के उपरोक्त कथन का ऐसा प्रभाव हुआ कि उन्होंने तुरंत ही पुत्रों और बहुओं के बुलाने के लिये प्रियंवदा जी से प्रार्थना की।

प्रियंवदा—बीबी जी मैं संध्या करने जाती हूं, यह समय बेटों के बुलाने का नहीं है क्योंकि संध्या के पीछे भोजन फिर आराम करने का समय हो जायगा। कल प्रातःकाल मैं पुत्रों को बुलाऊँगी।

यशोदा—बहुत अच्छा, अब मैं जाती हूं तुम संध्या करो।

प्रियंवदा—चन्द्रमुखी, तू देवी जी के साथ जा।

चन्द्रमुखी—बहुत अच्छा-दोनों गाड़ी में बैठ कर चलदीं।

इधर सुनीति ने आसन बिछा, पानी भर कर रख दिया। प्रियंवदा जी ने संध्या करने में चित्त लगाया और जप करने के पश्चात् हवन कर निम्नलिखित सायङ्काल की प्रार्थना की:-

सायंकाल की ईश्वर प्राथना।

कृपा कीजे मोपै, जेहि पवित्र विश्वास हित से।
बढ़े प्रीती तेरी; प्रति दिन समीपी हम बसे॥
अहो परमेश्वर तू मुझपर दया कीन भवना।
करी तूने नाना, प्रथित करुणा वर्णन बना॥ १॥
उसी लिये तुझको, मुहु मुहु नमस्कार कर हूं।
लिया आनंद मैंने, निखिल सुख मंगल प्रवरहूं॥
पिता माता भ्राता, परम प्रिय त्राता हितु सखा।
तुही है दीनन को, भरण परिपोषी हितु सखा॥ २॥
सुदीनी करते हैं, कृत सकल मेरे प्रिय हरे।
पितृस्नेह नैव, दिवस भर मेरे सहचरे॥
करी रक्षा मेरी, मन तन मयी मोद शुभगा।
भलाई करने के, मिलिय सदुपाया तव मगा॥ ३॥
विशुद्धा जे भावा, मम हृदय में उद्भव भये।
घने सत् कर्मों को, किया ग्रहण हरिजी नितनये॥
उसी कारण तोकूं, करहु धनवादं मम पती।
कुबुद्धी को मेरी: सपदि कर दूरी प्रिय पती॥ ४॥
सदा सर्वज्ञस्त्वं, विहित परमैश्वर्य सुलभा।
किये पातक मैंने, यहि दिवस में जानत प्रभा॥
तुम्हारी इच्छा के, सहज अनुयायी हम भये।
त्रुटी अन्तर्यामी, निहि छिपि तुम्हारे चितचये॥ ५॥

दया तेरी त्राता, भवजनित जे तापहि तपा ।
करो मे आत्मा को, पवित्र परिपूर्ण तव जपा ॥
करो ऐसी दृढ़ता, पतित नहिं होऊं प्रिय पती ।
महापापों मध्ये, स्मरण तव पूजा हित रती ॥ ६ ॥
अतिक्रामी करते, बहुतहि प्रलोभी नहिं गती ।
विना तेरी दाया, विनय करती पालक पती ॥
अहो नारायण तू, अटल विश्वास प्रबलता ।
मया करके दीजे, कुपथ निवृती की शुभ सता ॥ ७ ॥
सभी दिन जीवन के, तव इछित अनुसार निकसे ।
अहो करुणानाथ ! अनुमति करहु पूर्ण मन से ॥
सदा विश्वासी हो, शयन रजनी के मधि करूं ।
जबैं जाग्रत होऊं, तव भजन कार्यें सहचरूं ॥ ८ ॥
परन्तु ये रात्री, यदपि भव में मोद सहिता ।
यही शेषा रात्री, जगति परलोकेपि महिता ॥
तव प्रासादेन, प्रतिदिन प्रमोदेन विहिता ।
परा प्राप्ती होऊं, विभव विन संख्या प्रियपिता ॥ ९ ॥

इस के बाद ही मनोरमा भोजन करने के लिये बुलाने के हेतु आई अतः प्रियंवदा देवी, वहां गईं और सबके साथ आनंद से भोजन किये एवं यथा समय रामबाग में शयन किया। उधर यशोदा देवी ने भी अपने स्थान पर पहुंच कर सोने का विचार किया परन्तु नींद का पता न था। वह बारम्बार उठतीं और मनही मन कहती थीं कि कब प्रातःकाल हो और द्रव्य के मार की कुंजी बेटों को देकर छुटकारा पाऊं।

—:o:—

शोदा ने ज्यों त्यों कर सवेरा कर पाया, शैय्या से उठ प्रातःकालिक कार्य्यों को करने लगी, सात बजते बजते प्रियंवदा देवी की दासी चन्द्रमुखी सबको बुलाने के लिये आगई, फिर क्या, आधे घंटे के भीतर-भीतर यशोदा पुत्र, बहुओं समेत रामबाग़ पहुंच गई। कुछ देर समयोचित वार्तालाप होने के पीछे देवी जी ने कहा देखो बेटो, तुम्हारी माता ने तुम्हारे लिये प्रतिदिन ईश्वर से प्रार्थना की, बड़े २ नियमों का पालन किया और तुम्हारे लालन पालन में अनेकान कष्ट उठाये, तुम्हें इतना बड़ा किया। फिर विवाह उत्सव के उछाह में फूल कर हज़ारों रुपयों को न्यौछावर कर बहुओं के मुंह देखे। फिर कैसे शोक की बात है कि वह माता अब दुःखी हो। माता का स्नेह संसार के सब स्नेहों से निराला है; बन्धु और मित्रादि के स्नेह काल पाकर न्यूनाधिक होते रहते हैं परन्तु माता का स्नेह कितने ही दुःख देने पर भी न्यून नहीं होता। इस कारण शास्त्रों में कहा है कि मनुष्य सब ऋणों से उद्धार होजाता है परन्तु माता के उपकारों से छुटकारा नहीं पाता। यही आदि गुरु है, यही पूर्ण उपकार करती है, स्नेह का पूर्ण पात्र है क्योंकि सहस्रों क्लेशों को

सहन करने पर भी सन्तानों पर प्रेम ही करती रहती है। क्या ऐसी माता के किसी कटुवचन आदि का बुरा मानना सन्तान का धर्म है? इन की पूर्ण सेवा का ही नाम श्राद्ध और तर्पण है। मरने के पीछे लड्डू खिलाना आदि सब झूटे झगड़े हैं। फिर क्यों तनक २ सी बातों पर घर का खाज मारते हो। धन, पृथ्वी, सन्तान आदि वैभव सब यहीं रह जाते हैं केवल कर्मों की गठरी साथ जाती है। अच्छे प्रकार तुम सब को स्मरण रखना चाहिये कि जो कुछ हो रहा है वह सब कर्मों का ही फल है। इस लिये माया के पाशों से बच दुष्कर्मों को त्याग सत्कर्मों को कर कल्याण प्राप्त करो। देखो किसी समय एक धनवान् व्यापारी बहुत से रत्नादि लिये रथ पर सवार बनारस को व्यौपार के लिये जा रहा था. मार्ग में उसे एक संन्यासी मिला, व्यापारी ने सोचा कि संत्संग से बड़ा लाभ होता है और यह संन्यासी आकृति से सज्जन जान पड़ता है. यदि यह भी बनारस ही जाता हो तो इसे भी इसी रथ में ले चलना उत्तम होगा। यह बात सोच व्यापारी ने अपने सारथी से रथ रुकवा संन्यासी से कहा कि "महाराज यदि आप भी बनारस हो जाते हों तो इस रथ में बैठ लीजिये. मैं सहर्ष वहाँ पहुंचा दूंगा"। संन्यासी ने उत्तर दिया-"भाई! मैं भी बनारस ही जा रहा हूं। चलते २ थक गया था। अतः तुम्हारी इस कृपा का बड़ा कृतज्ञ हूं"।

यह कहकर संन्यासी बाबा भी रथ में बैठ गये। मार्ग में संन्यासी जी के लाभदायक उपदेशों से व्यापारी मुग्ध होगया। दोनों में परस्पर वार्तालाप होरहा था कि इतने में रथ सड़क की एक मोड़पर रुकगया क्योंकि मार्ग छोटा था और चावल से भरी एक गाड़ी, जिसका एक पहिया निकल गया था, बीच में खड़ी थी। गाड़ी का मालिक निकले हुये पहिये को ठीक करने में लगरहा था।

कुछ देर रुकने के बाद उस धनवान् व्यापारी को बड़ा क्रोध आया और अपने सारथी को मार्ग से उस गाड़ी के हटा देने की आज्ञा दी। बलवान् सारथी ने अपने स्वामी की आज्ञानुसार तत्काल ही उस बैलगाड़ी को खींचकर मार्ग के नीचे डालदिया। ऐसा करने में उस गाड़ी पर से बहुत सी चावल की बोरियां गिरपड़ीं। यह देख कर संन्यासी जी तुरंत उतर पड़े और धनी व्यापारी से कहा-"इतनी देर आप के रथ में बैठने से मेरी थकावट जाती रही। आपकी कृपा का मैं बड़ा अनुग्रहीत हूं। परन्तु क्षमा कीजिये कि अब मैं आपके साथ नहीं चल सकता"।

यह सुनकर व्यापारी तो आगे चला और संन्यासी उस दीन बनिये को सहायता देने लगे। वह दीन मनुष्य भी एक व्यापारी ही था, वह भी बनारस अपने चावल बेचने जा रहा था। उसने इस उदार संन्यासी को महापुरुष समझ कर पूछा-"महाराज इसका क्या कारण है कि जिस मनुष्य को मैंने कभी कुछ कष्ट नहीं पहुंचाया उसने मेरे साथ ऐसा अनुचित बर्ताव किया"। बाबा ने उत्तर दिया-जैसा तुमने पूर्व जन्म में उस धनी व्यापारी के साथ किया वैसा उसने तुम्हारे साथ किया। जो तुमने बोया था, उसका फल तुम्हें मिलरहा है। इस पर व्यापारी ने कहा महाराज आप ठीक कहते हैं आज से मैं समस्त प्राणियों में समभाव व उदारता दिखाने की चेष्टा करूंगा।

इतनी बातों के अनन्तर गाड़ी में चावल की बोरियां भर और पहिया ठीक कर वह चावल वाला व्यापारी संन्यासी को विठाकार बनारस की ओर चला।

थोड़ी दूर जाने पर उसे एक अशर्फियों से भरी थैली मिली उसे संन्यासी ने, यह समझ कर कि वह उसी धनी व्यापारी की होगी और असावधानता के कारण मार्ग में गिर

पड़ी है, उठाकर साथी व्यापारी को दी और कहा इस थैली को लो और बनारस पहुंचने पर अमुक २ जगह जाकर उस धनाढ्य व्यापारी को इसे देदेना, और कहना कि मैं तुम्हारे व्यापार की उन्नति का आकांक्षी हूं। और इस बात का ध्यान रक्खो उसकी उन्नति से तुम्हारी उन्नति होगी। यदि वह तुम से और कुछ प्रश्न करे तो उसको अमुक स्थान पर मेरे पास भेज देना।

जब वह धनी व्यापारी बनारस पहुंचा तब उसने देखा कि उसका मित्र जिसके द्वारा वह व्यापार करना चाहता था, बड़े दुःख में है। धनी व्यापारी के मित्र ने कहा—"मित्र! मैं बड़े कष्ट में हूं। यहाँ के एक दूसरे व्यापारी ने यह जान कर कि मैंने काशी नरेश के यहाँ कल उत्तम चावल पहुंचाने का ठेका लिया है, नगर भर के चावल खरीद लिये हैं। अतः यदि कल नियत समय तक मैं चावल न पहुंचा सका तो मैं सदा के लिये बिगड़ जाऊंगा और वह बन जायगा। जब तक एक गाड़ी चावल मुझे न मिले तब तक मेरा चित्त शान्त न होगा"। अपने मित्र के ऐसे वचन सुनकर उस धनी व्यापारी को भी बड़ी चिन्ता हुई, धीरे २ वह अपना असबाब रथ से उतारने लगा।

असबाब संभालते समय उसको अशर्फियों वाली थैली न मिली। इस पर उसने निश्चय किया कि मेरे सारथी ने ही थैली चुरा ली है-ऐसा विचार उसने सारथी को पकड़ कोतवाल को सौंप दिया। कोतवाल ने उससे पूंछा-"तूने थैली ली है"? उसने कहा-"नहीं"। इस पर वह खूब पीटा गया। पीटते समय वह अति स्वर से चिल्लाया-"मैं निर्दोष हूं, मुझे छोड़ दो"। परन्तु कोतवाली वाले भला काहे को सुनते हैं। उस समय सारथी ने सोचा कि यह मेरे ही दुष्कर्मों का फल है।

इतने में वह चावल वाला व्यापारी भी बनारस पहुंचा, और उस धनी व्यापारी को खोज उसकी अशर्फियों वाला थैली उसे सौंपदी। जब यह समाचार कोतवाली में पहुंचा, तब वह निरपराध सारथी छोड़ दिया गया, परन्तु अपने स्वामी से अप्रसन्न हो उसने नौकरी छोड़दी। और चोरों के एक दल में मिलगया चोरों ने उसे खूब मोटा देख अपना प्रधान बनाया।

इधर उस चावल के ठेकेदार ने बड़ा अच्छा अवसर जान चावलों की पूरी गाड़ी खरीद ली और अच्छा मोल दिया। वह धनी व्यापारी अपनी थैली पाकर बहुत प्रसन्न हुआ और उसी व्यापारी से संन्यासी का खोज लगा उस संन्यासी के पास गया।

संन्यासी ने उस धनिक व्यापारी से मिलने पर कहा, "बच्चा! अपने ही समान सब प्राणियों को समझो! अन्य प्राणियों की सेवा उसी तरह करो जैसे कि तुम अपनी सेवा उनसे कराना चाहते हो। अच्छे बीज बोओ, जिनसे तुमको इसलोक व परलोक में सदैव अच्छे २ फल मिलें। अविद्या पापों का मूल है, जो अविद्या के कारण माया के पाशों में बद्ध है वह संसार का सच्चा ज्ञान नहीं प्राप्त करसका"।

संन्यासी के ऐसे वचन सुन कर उस धनिक व्यापारी ने कहा "महाराज! आप सच कहते हैं। मैं आप के इन अमृत रूपी वाक्यों का प्रतिपालन करूंगा। देखिये मैंने आप के साथ थोड़ी सी ही कृपा की उसका परिणाम यह हुआ कि मेरी थैली मिल गई। मेरे मित्र का ठेका भी पूरा हो गया नहीं तो ये दोनों बातें कैसे होतीं? अवश्यही हम और हमारे मित्र दोनों का सत्यानास हो जाता। महाराज! अब मैं जानेकी आज्ञा मांगता

हूं"। बाबा ने कहा कि बच्चा जाओ और मेरे कहे हुये वाक्यों का स्मरण रखना।

कुछ काल के बाद वह धनी व्यापारी अपने गृह को लौट आया और जब उस का अन्त समय उपस्थित हुआ तब उसने अपने घर के स्त्री पुरुषों को अपने पास बुलाकर यह उपदेश दिया—

"मेरे प्यारे पुत्रो! यदि तुम किसी कार्य्य में फलीभूत न हो तो दूसरों को दोष न देना, किन्तु अपनी निष्फलता का कारण अपने ही कर्म्मों को समझना। यदि तुम अविद्या से मदान्ध न हो जाओगे तो तुमको तुम्हारी निष्फलता का कारण मालूम हो जायगा। माया के पाशों से सदैव बचे रहना और ध्यान रखना कि मनुष्य ही अपने कर्म्मों का कर्त्ता है, ईश्वर नहीं। यदि तुम मेरे इन वचनों को मानोगे तो तुमको अवश्य ही मोक्ष मिलेगा। क्योंकि धर्म में रुचि, मुख से मधुर वाक्य, और दान करने में उत्साह, गुरु जनों से नम्रता, अन्तःकरण में गम्भीरता, आचार में पवित्रता, गुण में रसिकता, शास्त्रों में विशेषज्ञान, मित्र जनों के विषय में निश्चलता, सुन्दर स्वरूप और परमात्मा में भक्ति—यह बातें जिन स्त्री पुरुषों में रहती हैं वही मनुष्य शरीर के सुखों को प्राप्त करते हैं। परंतु यह सब बातें ब्रह्मचर्य व्रत के पालन से प्राप्त होती हैं, इस लिये वीर्य की रक्षा करना सर्वोपरि है। क्योंकि सप्त धातु, जिनसे हमारा शरीर बना है उनमें वीर्य ही प्रधान है। यही स्मरण शक्ति को बढ़ाता है, यही बुद्धि को तीव्र करता है, शरीर को आरोग्यता प्रदान करने वाला यही है, इसी के प्रताप से अर्जुन का नाम धनुष धारियों, कृष्ण महाराज का योगियों, भीष्मपितामह का जितेन्द्रियों में प्रसिद्ध हुआ। इसी तरह दशरथ पुत्र राजकुमार लक्ष्मण विवाह होजाने पर भी यती नाम से पुकारे

जाते थे, क्योंकि पुत्रो, उन्होंने उस कठोर व्रत का बड़ी धीरता से पालन कर अपनी आत्मा को बलिष्ठ बनाया था, मैथिली के साथ वह वन में लगातार रहे थे परंतु जब श्रीरामने सुग्रीव के दिये सीता के आभूषण उन्हें दिखलाये तब यती लक्ष्मण ने कहा—

पग भूषण मैं सकत चिन्हारी ।
ऊपर कबहुं न सीय निहारी ॥

अर्थात् हे भ्राताजी ! मैं इन भूषणों को नहीं पहचान सकता, क्योंकि मैं उन के पैरों की वन्दना करता रहा मैंने कभी ऊपर को दृष्टि नहीं की, इस लिये पैरों के भूषणों को जानता हूं अन्य को नहीं, देखा, इस दृष्टि को, व्रत नाम इसका है ? । लक्ष्मण में यही प्रताप था यही अपूर्व बल था जिसके आश्रय उन्होंने रावण पुत्र मेघनाद को मारा, जिसने किसी समय इन्द्र महाराज को भी अपना वधुआ बनाया था, परंतु यती लक्ष्मण के बल के आगे उसकी कुछ भी न चल सकी।

अतएव पुत्रो, इस पर अवश्य ही ध्यान रखना चाहिये इस के अतिरिक्त जो स्त्री पुरुष अपने कुटुम्बी और अपनी जाति के साथ लड़ाई करते हैं वह अन्य शत्रुओं के वश में होजाते हैं और उन को सुख किसी प्रकार से नहीं मिलता। देखो प्राचीन समय में किसी व्याध ने पक्षी पकड़ने के निमित्त पृथ्वी पर जाल को बिछाया उसमें एक साथ रहने वाले एक ही जाति के दो पक्षी जिन में आपस में अत्यन्त प्रेम था गिरे और दोनों मिलकर जाल समेत आकाश में उड़गये, जिस को देख व्याध बड़ा दुःखित हो पक्षियों के पीछे दौड़ा। उस समय किसी मुनि ने देखकर कहा—हे व्याध, तुम पैरों से चलकर आकाश में जाने वाले पक्षियों का पीछा करते हो, यह देख मुझ को बड़ा आश्चर्य होता है।

व्याध—महाराज, यह दोनों पक्षी जब आपस में लड़ेंगे तब इन को पकड़ लूंगा, इस लिये पीछा करता हूं। थोड़ी देर के पश्चात् वह दोनों पक्षी आपस में लड़ने लगे और थोड़ी दूर चल कर नीचे गिर पड़े। उस समय व्याध ने उन दोनों पक्षियों को क्रोध से भरे और लड़ते हुये देख धीरे २ उन के निकट जा कर पकड़ लिया और दोनों को मार डाला इस लिये तुम सब इन बातों को जान आपस के विरोध को त्याग दो। देखो श्रीमान् पं० लक्ष्मीधर वाजपेयी जी ने सत्यपूर्ण सुखजनक उपदेश दिया, सुनो मैं वह कविता तुम्हें सुनाती हूं।

जग में पाकर नर अवतार,
करो सदा शुभ काज विचार।
जिससे पाओ सुख अभिराम,
जग में रहे तुम्हारा नाम ॥१॥
सत्यवान और सत्याचार,
करो सदा सब का उपकार।
छोड़ो मन के सभी विकार,
जिससे तुम पाओ सुख सार ॥२॥
क्षमा खड्ग नित रक्खो पास,
होता उससे शत्रु विनाश।
क्रोध सभी पापों का मूल,
करो सदा उस को निर्मूल ॥३॥
दया, धर्म, सब में सिर मौर,
देते यही स्वर्ग में ठौर।
सब जीवों को एक समान,
जान करो सब का कल्यान ॥४॥
विद्या धन सम धन नहिं और,
रहता पास सदा सब ठौर।

विद्यादिक गुण-गण का दान,
देना है शुचि पुण्य महान ॥५॥
पर दारा, निज माता जान,
पर धन को तृण सम अनुमान।
छूते जो न कदापि सुजान,
वेही पंडित विज्ञ महान ॥६॥
सुन्दर मधुर वचन दिन रात,
ईश वन्दना सायं प्रात।
करते हैं यह व्रत जो धीर,
जग में उनका सफल शरीर ॥७॥
आलस छोड़ करो पुरुषार्थ,
जिससे सधे सुखद परमार्थ।
करो सदा इसका उद्योग,
तजो दुखद विषयों का भोग ॥८॥
पैदा करके सभी पदार्थ,
रक्षण उनका करो यथार्थ।
रक्षित वस्तु बढ़ाओ नित्य,
करो सदा उपकारी कृत्य ॥९॥
निशि दिन करो सत्य उपदेश,
जिस से रहे न दुःख कलेश।
ज्ञान भानु का होय प्रकाश,
अंधकार अज्ञान विनाश ॥१०॥
निज संतति को कर विद्वान,
शोभित उन से करो जहान।
अपनी उचित आप अनुसार,
सदा खर्च का करो विचार ॥११॥
सत्संगति-सुद-मंगल मूल,
दुर्जन संग करो मय भूल।

बिना पुण्य मिलते नहिं सन्त,
उन से होते लाभ अनन्त ॥१२॥
भूत काल पर दृष्टि न डालो,
वर्तमान के काज सम्हालो।
कर के विविध उपाय विचार,
करो मातृ भाषा उद्धार ॥१३॥
दशा देश की देखो पुत्र,
क्या से क्या है हुई विचित्र।
इसका भी कर खूब विचार,
भारत का तुम करो सुधार ॥१४॥
देशी चीज़ों का अनुराग,
वस्तु विदेशी का कर त्याग।
करो सभी इस का उद्धार,
बिन्ती यही पुकार पुकार ॥१५॥

इतना कह देवी जी चुप हो गईं।

* * * *

प्रभाव।

श्रीमती जी के प्रथम कथन का प्रभाव यशोदा जी पर हो ही चुका था, परन्तु आज के कथन ने पुत्रों और बहुओं और देवी जी के हृदय को और भी कम्पायमान कर दिया। प्रत्येक का आँखों के सन्मुख संसार और उसके पदार्थों की असारता का चित्र खिचगया। आंखों से अविरल अश्रुओं की धारा बहने लगी। सब से प्रथम यशोदाजी ने कहा।

यशोदा—प्रिय सखी प्रियंवदा! तुम्हारे सत्यप्रिय कथन ने मेरे हृदय से अज्ञान रूपी अंधकार को निकाल ज्ञानसे प्रका-

शित कर दिया। इसलिये मैं आप को कोटिशः धन्यवाद देती हूं साथही यह की-कुंजियां बेटों को देती हूं और अबसे बहुओं को पुत्रियों के समान समझ उनको सब प्रकार से सुख पहुंचाने का यत्न करूंगी और किसी से भी कटुवाक्य न कहूँगी। प्रथम जो मैंने आपकी शिक्षा नहीं मानी, उसका फल मैंने अच्छी तरह भोगा। इसलिये अब मैं बारम्बार प्रण कर कहती हूं कि मैं जीवन पर्यन्त आप के कथनानुसार कार्य करूंगी। आशा है, परमात्मा मेरी सर्व प्रकार की मनोकामनायें पूर्ण करेंगे। इतना कह यशोदा जी चुप होगई।

जयचन्द्र—माता जी, अब हम को कोष की कुंजियां नहीं चाहियें, हां आप हम सबको कोमल वाणी से शिक्षा करती हुई पालन कीजिये। हम तन मन से आप के चरणों के सेवक हैं। इसी हेतु हम बारम्बार आपको प्रणाम करते हैं और अपने अपराधों की क्षमा चाहते हैं और श्रीमती का धन्यवाद देते हैं कि जिन्होंने हमारे गृहव्यधि की पूर्ण रूप से चिकित्सा कर हम सबको शान्त किया। इतना कह बैठ गये।

बड़ीबहू—हम आपकी पुत्री के समान हैं आप हमारी माता हैं। हमारी अज्ञानता के कारण जो घर में क्लेश रहता था, उसकी हम क्षमा मांगती हैं। अब हम आप को साक्षात् देवी समझ सेवा करेंगी। यथार्थ में आप की पूजा से हम को सर्व प्रकार के सुख मिल सके हैं जैसा देवी जी ने कहा है। हाय, हाय, हमारे कारण आपको इतने दिनों क्लेश रहा, न मालूम क्या २ दण्ड हम को मिलेंगे। श्रीमती क्षमा कीजिये और मधुर भाषण कर हम को अपनी सच्ची पुत्री जान हितोपदेश कर कल्याण का मार्ग दिखलाइये, जिससे आगे हम को भी सुख के दर्शन हों। हम सब अपनी प्रियंवदा देवी

जी के उपकार को जीवन भर नहीं भूल सक्तीं। परमेश्वर ऐसी धर्मात्माओं की दीर्घायु करे।

प्रियंवदा—प्यारे बेटों और बहुओं! तुम को गृहस्थाश्रम में रहते हुये जब ही सुख मिल सक्ता है कि माता पिता की आज्ञा पालन करते हुए सबसे प्रेमपूर्वक बर्ताव करो। देखो वेद में लिखा है—

संगच्छध्वं संवदध्वं संवोमनान्सि जानताम् ।
देवाभागं यथापूर्वे सञ्जनानामुपासते ॥

एक साथ मिल कर चलो, एकस्थान पर बैठो, मिलकर प्रेम से संभाषण करो, तुम्हारे मन के विचार एक हों, तुम सब के व्यवहार एक हों: क्योंकि जहां एकता होती है वहीं ही आपस में प्रेम होता है। कवियों ने कहा है कि सब फांसों से प्रेम की फाँस अधिक पैनी होती है। इसी से प्रेम के वशीभूत होकर भक्त संयम, ध्यान, कीर्त्तनादि बड़े २ कठिन कार्य मनुष्य करते हैं। परन्तु इस प्रेम की झलक उसी समय झलकती है जब कि प्रेम रूपी यज्ञ में स्वार्थ की आहुति देकर परस्वार्थ की लौ उनके हृदयों में चेतन्य हो जाती है। फिर वह निन्दा, ताप और दुःखों को सहन करते हुए प्रेम की अपार महिमा को अनुभव कर परमानन्द को प्राप्त करते हैं। इस विषय में श्रीमहाराय ब्रजनन्दन सहाय जी ने क्या ही उत्तम कहा है—

शिक्षास्थली है प्रेम की, संसार निश्चय जानिये।
जो प्रेमकी शिक्षा न पाता, अधम उसको मानिये ॥ १ ॥
नर जन्म उसका व्यर्थ है, जो प्रेम का भूखा नहीं।
जो प्रेम का करता निरादर, सुख नहीं पाता कहीं ॥ २ ॥
अतएव वाचक छोड़कर छल प्रेम की सेवा करो।
हिय की कटोरी प्रेम के पीयूष से प्यारे भरो ॥ ३ ॥

पारस्परिक द्वेषादि तजकर, प्रेम के रंग में रंगो।
अवसर नहीं फिरफिर मिलेगा, मोह निद्रासे जगो ॥ ४।
मनोरमा—भोजनों के लिये चलिये।

प्रियंवदा—चलो। इतना कह सब गाड़ी में बैठ चल दी और वहां पहुंच भोजन कर अपनेअपने कमरे में जा विश्राम किया

* * * *

२ बजे के पश्चात् ज्योंही प्रियंवदा जी हाथ मुंह धोकर स्वस्थ होकर बैठीं त्योंही यशोदा पुत्रों और बहुओं व सुशीलादिक सहित पहुंचीं और यथा योग्यके पश्चात् सब बैठगईं।

यशोदा—प्रियसखी! अबहम सबको कुछ और उपदेश दो।

प्रियंवदा—मेरी प्यारी पुत्रियो, तथा प्यारे बेटो, एवम प्रिय सखी यशोदा! संसार में सब मनुष्य और स्त्रियों का सुधार गृहस्थाश्रम से होता है और इस आश्रम में पतिव्रता स्त्री और स्त्रीव्रत पतिही सुख का कोष है। इस लिये स्त्रियों को पतिव्रत धर्म का पालन करना सर्वोपरि है। उन की और उन के सम्बन्धियों की सेवा और टहल करना ही सर्वोपरि तीर्थ है। इस हेतु स्त्रियों को उचित है कि नियम पूर्वक गृहस्थाश्रम के सम्पूर्ण कार्यों को कर आनन्द प्राप्त करें। वृथा इधर उधर स्वतन्त्र होकर किसी अन्य तीर्थ में जाने की इच्छा न करें। क्योंकि स्त्रियों के लिये पति ही तीर्थ और पति ही देवता है। उन्हीं की प्रसन्नता से स्त्री को स्वर्ग की प्राप्ति होती है। अन्यत्र मेले आदि स्थानों में जाने से सच्ची लज्जा का परित्याग हो जाता है। जो स्त्रियों का एक भूषण है। और इस के अतिरिक्त नाना प्रकार के कष्ट स्वतन्त्रता पूर्वक कार्य करने से होते हैं।

देखो मिरजापुर के पास पंडरा में पंडित रामनारायण मिश्रवास करते थे। जाड़े का मौसम था, सवेरे के समय घर की मालिकिन बैठी घाम ले रही थीं। भौलवा की मां (मजदूरनी) गाय की सानी कर रही थी, मिश्रानी जी के समीप उन की दो पोतियां और एक पोता खेलरहे थे। उधर बीच २ में बड़ी बहूको रसोई बनानेके लियेभी कहती थीं। रसोईघर में बड़ी बहू रसोई बनाती थीं, दाल होरही है, छोटी बहू आटा गूंद रही थी। दोनों देवरानी जिठानी में इधर उधर की बातें घट रही हैं। बातें करते २ छोटी बहू ने कहा जिठानी जी अब के कुम्भ का बड़ा भारी मेला होगा। चलो न, हमलोग भी नहाआवें। फिर तो बारह वर्ष में जाके कहीं ऐसा मेला होगा, तब तक कौन मरा कौन जिया; चलो छुट्टी हुई, मन का हौसला मनही में रह जायगा। गोपी ने बड़ी लम्बी सांस लेकर कहा अरी कहां की बात, भला हम लोगों को कौन साथ लेचलेगा। सुना है वहां तो करोड़ों आदमियों की भीड़ होगी फिर भला हम कैसे जा सकेंगी।

श्यामा—एलो तुमने तो अभी से हिम्मत हारदी, भला ज़ोर देकर जेठजी से कहो तो सही। मेरा मनतो यही कहता है कि जरूर २ लेचलेंगे, क्योंकि कहीं नातेदारी में तो जानाही नहीं है, सो बिना बुलाए कैसेजायं? रही भीड़ की बात,सो तुमने अच्छी कही। भला तीरथ में भीड़ न होगी तो और कहां होगी। काशी में विश्वनाथ और अन्नपूर्णा के मन्दिर में क्या कम भीड़ होती है, तो क्या हम लोग दर्शन करने को नहीं जातीं। और सब जान दो, ग्रहण पड़ने पर तो करोड़ों आदमियों की भीड़ होती है फिर हम लोग कैसे नहा आतीं हैं।

छोटी बहू की मीठी २ बातों को सुन गोपी ने कहा अच्छा तुम लालाजी (देवर) को कह सुन कर राजी करो, बस

फिर सब ठीक हो जायगा। चलने लगो तो मुझे भी साथ ले लेना। ला अब आंटा ला।

इतने में भोलुवा की मां एक टोकरी गोबर लेकर आई और खड़ी होकर कहने लगी "काहो बहू का सल्लाह होत बाय परागजी नहाये चलन जावः काहे भाई हमहूं के लिया-वत चलः"। छोटी बहू उसपर नाराज होकर कहने लगी—"मर निगोड़ी, इतना चिल्लाती क्यों है? क्या गले में बाँस अटका है"। भोलुवा की महतारी धीरे से कुछ घिघियाकर कहने लगी–"ऐ मोर बहू, अब मैं न चिल्लैहों। तोहरे पंचके गोड़ल पड़त हैं। जायेलाग्यः तो हमहूँ के लेत जाय"।

बड़ी बहूने कहा–"अरी बावली तो नहीं होगई रे, सूत न कपास कोरी से लाठ्ठिमलट्ठा"। अभी तू गोबर पाथने नहीं गई? जा!

नन्हीं बहूजी कल बुआ के घर गई थी वहां सुन आई कि बहिन भौजाई और अड़ोसन पड़ोसिन सब जायगी। इस लिये नन्हीं बहूजी को चैन कहां। चित्त में चटपटा मचगई, पेट में चुहियां कूदने लगीं कि हाय क्या तद्‌बीर करूं। जब मेरी सखी सहेली बहिन भौजाई कुम्भ मेले से लौट कर अनोखी २ बातें कहेंगी तब मुझ को मुँह ताकना पड़ेगा।

अमावास्या के दो चार ही दिन रह गये हैं। नन्हीं बहू को कुम्भ नहाने के सिवाय और कुछ फिकर ही नहीं है। गोद में एक साल का लड़का है। वह बेचारा अब समय पर दूध तक नहीं पाता? भला उसके तेल उबटन की कौन कहे। एक दिन बच्चे के तो तेल उबटन किया ही नहीं, पर हां झट तेल की कटोरी लेकर सास के पास जाकर बोली। "अम्मा! इस साल तो तुम्हारे बहुत ही पैर फटगये हैं, लाओ, जरा तेल उब-

दन कर दें"। सास देवता मन ही मन अचकचा कर कहने लगीं–आज बहू को कहां से ऐसी भक्ति उमड़ आई, रोज तो पुकारने पर भी नहीं आती थीं, आज पूरब से पश्चिम तो सूर्योदय नहीं हुआ। खैर चलो अच्छी बात है। प्रत्यक्ष में कहा—"हां बेटा आओ तुम लोगों को तो फुर्सत ही नहीं मिलती" यह कह पांव पसार कर बैठ गई। छोटी बहू धीरे २ तेल मलने लगी, उधर उनका बच्चा रोने लगा। सास ने बहुतेरा कहा रहने दो जाओ पहले लल्लु को चुप करो तब लगाना। पर छोटी बहू ने एक न सुनी और लगाती ही रहीं, इधर उधर की बात करते २ आपने कहा कि क्यों अम्मा तुम कभी कुम्भ नहाने गई या नहीं ?

सास ने कहा नहीं बेटा, कहाँ का, नहाना कहां का धोना ? तुम्हारे चाचा जी को तो कुछ भाता ही नहीं, वे तो कहते हैं कि मन चङ्गा तो कठौती में गङ्गा। घर में बैठो अच्छे काम किया करो। एक बेर बड़ी मुश्किल से भाबी जी के साथ प्रयाग गई थी सो भी मेले में नहीं। तब फिर छोटी बहू ने कहा "चलो अम्मा, इस वार नहा आओ और हम को नहला लाओ"।

सास ने कहा अरे बेटा हम लोगों को कौन लिवा ले जायगा। तुम्हारे लाला को तो दम फूलता है, वे इस जाड़े में जाने से रहे, यज्ञदत्त (बड़ा लड़का) तो घर ही पर नहीं रहा, सोमदत्त (छोटा लड़का) वह तो अंग्रेज़ी पढ़कर पूरा किरस्तान होगया है।

इतने में मिस्सर जी पोती का हाथ पकड़े आ पहुंचे और हंसकर बोले "लो, तुम्हारी कितनी सेवा होती है तुम इतने पर भी झाखा करती हो कि मेरे हाथ पैर का करनेवाला कोई नहीं।

उन्होंने उत्तर दिया, "अरे सुना नहीं, छोटी बहू प्रयाग जाने को कहती है"।

"प्रयाग ! कुम्भ के मेले में ! राम राम ! वहां जाना बहू बेटियों का काम नहीं"।

ससुर के मुंह से ऐसी बात सुन बहू रानी तो मन ही मन में कुढ़ गई और झटपट दो चार हाथ मसल अपने कमरे में घुस गई। वहाँ पति ने कहा कि कुम्भ २ करके तो तुमने हमारे नाकों दम करदिया, न जाने कहां से तुम्हारे सिर पर कुम्भकर्ण की प्रेतात्मा सवार होगई। जाना है तो अपने भाई के साथ चली जाओ, सिर पच्ची मत करो। जाओ वहाँ बच्चे को लेकर जाड़े में मारना हो तो मार डालो।

बहू रानी ने कहा वह लड़का (पहला लड़का) तो तुम्हारे ही घर पर मरा था, तब मैं उसे कहां लेगई थी। सच तो यह है कि जहां जिसकी मौत आजायेगी उसे कहीं कोई रोक नहीं सकता है।

अन्त को बुआ और उसके बेटे की विन्ती करने पर घरके लोगों ने बड़ी मुश्किल से छोटी बहू को प्रयाग भेजने की आज्ञा दी। छोटी बहू मारे खुशी के फूले अँग नहीं समाई। झटपट थोड़ासा खानेको कर चट गठरी मुठरी बाँध जाने के लिये तय्यार होगई। उनके छोटे भाई शिवशंकर उन्हें विदा कराने आये। छोटी बहू सब से बिदा होनेलगीं। जिठानी जी ने कहा लो तुमतो पुण्य करने चलीं और हम सब यहाँ ही रहगईं, जाओ राजी खुशी लौट आना। मिश्रानी लल्लूको गोद में लेकर दुलारने लगीं, सोमदत्त को ढूंढा पर वे न मिले। फिर मिश्रानी ने शिवशंकर से कहा कि देखो मैं तुम्हारे भरोसे लल्लू को जाने देती हूं, इस बच्चे का भार तुम्हारे ऊपर है।

मेरे लल्लू को कोई तकलीफ न हो। उन्होंने उत्तर दिया नही मां जी, आप बेफिकर रहिये, किसी बात की चिन्ता न कीजिये। मेरे घरके लोग भी तो जारहे हैं सब को बहुत आराम से लेजाऊंगा। ईश्वरकी कृपा और आप सबके आशीर्वाद से हम सब राजी खुशी लौट आवेंगे।

छोटी बहू इक्के में बैठगईं, मिश्रानी जी ने पोते का मुंह चूम बहू की गोदी में देदिया। उनकी आँखें भर आईं। करुणार्द्र स्वर से उन्होंने कहा लल्लू जिस दिन से भया है मेरेही पास बराबर रहा है आज पहला दिन है कि मैं उसको अपनी आँखों से पृथक् करती हूं देखो शंकर खबरदार रहना।

छोटी बहू तो गईं पर बिचारी भोलुवा की माँ मुंह ताकते ही रहगई।

मिरजापुर के रेलवे स्टेशन पर बड़ी भीड़थी, यथा समय गाड़ी आ खड़ी हुई। इतने में सोमदत्त भागते हुये आये। शिवशंकर ने अचकचा कर पूछा कि तुम कैसे आए। उत्तर दिया लल्लू तुम्हारे साथ आया तब मैं घर पर न था, आने पर सुना कि सब चलेगये। लल्लू के देखने के लिये चित्त घबड़ाया सो आया हूं। इतने में गाड़ी आगई, लल्लू तो पिता को देख कर मारे खुशी के पिता के गले से लिपट गया। इतने में पहली घंटी हुई सोमदत्त ने शिवशङ्कर से छोटी बहू की तरफ देखते हुए कहा तुमलोग अच्छी तरह बैठ गये न? अच्छा, मेरा नमस्कार लो। लल्लू अब तुम अपने मामा के पास जाओ। लल्लू भला पिता को क्यों छोड़ने लगा। उसने बड़े जोर से रोना शुरू किया। शङ्कर ने ज्यों त्यों लल्लू को लिया। पिता पुत्र परस्पर एक दूसरे की ओर प्रेमभाव से देखहीं रहे थे कि रेल सांड ने सीटी देदी और आग खाती पानी पीती धुआं

फेकती हड़हड़ाती हुई चली, मानों वह संसार को अनित्यता का सजीवन दृष्टान्त दिखला गई। अब छोटी बहू सुचित्त होकर बैठगई और अपनी बहन सुलक्षमा से बोली-सब लोग कहते थे कि रेल में बड़ी भीड़ होगी तुमको बैठने तक की जगह न मिलेगी। यह सबको न भेजने का बहाना था। अरी हमारी सासराम, देखने को तो बड़ी सीधी हैं पर हैं बड़ी खोटी। खुटाई उनकी नस २ में भरी है। उनकी उमर तो ताला कुंजी संभालते और जिठानी जी को चूल्हा चौका करते बीत जायेगी। वे लोग कभी तीरथ बरत-दान, पुण्य न करेंगी और न दूसरों को करने देंगी। सुलक्षमा ने भी छोटी बहू की हां में हां मिलादी।

आज अमावस्या का दिन है। प्रयागराज में त्रिवेणी के तट पर एक अपूर्व दृश्य दिखाई दे रहा है। जिस समय अन्य धर्म्मावलम्बियों को लिहाफ़ से मुंह तक निकालना कठिन जान पड़ता था, उस समय से लेकर बर्फ से भी अधिक ठंढे पानी में असंख्य बाल वृद्ध वनिताएं सहर्ष आनन्द पूर्वक ग़ोते लगारही हैं। उसी अगण्यमानव समूह के बीच हमारी छोटी बहू भी दिखलाई दीं। बाँध के नीचे जहाँ कुछ भीड़ कम थी, वहीं पर भाई भौजाई बुआ के सहित लल्लू को गोद में लिये आप खड़ी हैं। छोटी बहू ने भाई शिवशङ्कर से कहा "भैया आज लल्लू ने अभी तक कुछ नहीं खाया, इसके लिये कुछ लादो"। भैया ने उत्तर दिया-"अच्छा ठहरो, लाए देता हूं"। इतने में एक विशालाकार हाथी बिगड़ा। उसके बिगड़ने से सारे मेले में हलचल मचगई। सेवा सम्मति वालोंने उसको शान्त किया। पुनः साधुओं का अखाड़ा निकल जाने पर नहाने वालों के लिये रास्ता (जो अबतक रुका हुआथा) खोल दिया। बस फिर क्या पूंछना था मानों मनुष्य रूपी महासागर में तूफान आगया। सभी के जी में यह तरंग उठी कि सबसे पहले मैं ही

गोता लगा पुण्य का ढेर उठालूं। आंधी की भांति आदमी पर आदमी गिरने लगे। इस भीड़ में पड़कर बेचारी छोटी बहू अपने साथियों से अलग होगई। उस समय उस बेचारी की दशा बड़ी शोचनीय होरही थी। इतने में एक ऐसा भारी धक्का लगा कि लल्लू मां की गोदी से अलग जापड़ा, छोटी बहू चिल्ला २ कर रोने लगीं। सबसे बच्चे के उठाने के लिये विनती करने लगी और रह २ कर द्रौपदी की भांति भैया २ कहके पुकारने लगीं। पर नक्कारख़ाने में तूती की आवाज़ कौन सुनता है। जब किसी ने भी उस निःसहाय दीन अबला की आवाज़ न सुनी, तब लाचार होकर वह आपही लड़के को उठाने के लिये झुकी थी कि वह भी औंधे मुह जापड़ी। ऐसी अवस्था में ज़रा सिर का उठाना भी बड़े २ पराक्रमी पुरुषों की सामर्थ्य से बाहर था, तब उस बेचारी अबला की कौन गिनती।

उधर शिवशङ्कर की बुरी दशा थी। नहाना धोना तो अलग रहा, दिनभर के भूखे प्यासे सबको ढूंढ रहे हैं। दोपहर के बाद सुलक्षमा और उनकी स्त्री रोती पीटती क़िलेके नीचे मिलीं। सुलक्षमा के गले की चम्पाकली न जाने कहां गिरगई। उनकी स्त्री की नाक में से नथका पता नहीं, साथहीनाकका एक हिस्सा भी ग़ायब। मानो वे शूर्पणखा की (ट्रू कापी) सच्ची नकल बनगई हों। शरीर के कपड़े लत्ते खून से सराबोर। उधर जब झोंपड़ी में आए तब मातादीन ने कहा, कि भाई लंगड़े लूले सब का ही पता लगा, पर छोटी बहू का तो पता लगाओ। अब छोटी बहू के लिये शिवशङ्कर को बड़ी घबड़ाहट पैदा हुई। वे सोचने लगे, सोमदत्त और उनके घर के लोग सुनेंगे तो क्या कहेंगे। हाय अब मैं उन लोगों के सामने कौन सा मुंह लेकर जाऊंगा। मुझे जाने का साहस ही कैसे होगा। वे

लोग क्या न कहेंगे, कि आप तो चले आये हमारी बहू को कहां छोड़ आए।

हे भगवन्! मैंने कौन सा ऐसा घोर पाप किया था जिसके बदले मेरे सिर पर यह कलङ्क का भारी बोझा रक्खा जा रहा है। हाय! स्त्रियों की बात में पड़कर मुझे कैसी दुर्गति भोगनी पड़ी। मुझे मौत आकर गोद में रख लेती तो अच्छा था। अब मैं कहां जाऊँ, कहां ढूंढूं, कहीं भी तो उसका पता नहीं लगता। इस तरह तनज़ीन मनमलीन होकर पागल की तरह एक २ जगह को वे दस दस बार ढूंढने लगे। कभी त्रिवेणी के तीर कभी झोंपड़ी के भीतर, कभी मुर्दों के ढेर में और कभी पुलिस वालों के यहां। अन्त में एक बुढ़िया से पता लगा कि सेवासमिति के सदस्यों ने ज़्यादह घायल होने के कारण छोटी बहू को अस्पताल भेजदिया। यह सुनते ही शिवशङ्कर अस्पताल पहुंचे। जाके देखा तो छोटी बहू एक खाट पर पड़ी है। उसके कलेजे में ऐसी भारी चोट लगी है मानों किसी ने एक भारी पत्थर से कुचल डाला हो। शिवशङ्कर को देखते ही छोटी बहू ज़ख्मी छाती को दोनों हाथों से पीट २ कर 'लल्लू लल्लू' कहकर रोने लगी। भैया, भैया, तुम मेरे लल्लू को लादो। हाय! अभी तक मेरे लल्लू ने कुछ खाया न होगा। लाओ, जल्दी जाकर उसे लाओ, मैं उसे खिलाऊंगी। अब अंधेरा हुआ जाता है वह किस के पास सोवेगा? मैं कौन सा मुंह लेकर घर जाऊंगी? जब अम्मा गोद से लल्लू को लेने आवेंगी तब मैं क्या कहूंगी? भैया एक बार जाकर तुम फिर खोजो। कहीं इधर उधर पड़ा होगा उठा लाओ।

अरी अभागिन छोटी बहू! अब तेरे बच्चे का इस धरा-धाम में एक चिह्न भी नहीं उसका वह मक्खन सा कोमल शरीर लाखों आदमियों के पैर तले पड़ कर सत्तू होगया!

इस समय शोकातुर माता की व्याकुलता और मर्मभेदी कातरोक्ति लिखने की सामर्थ्य नहीं !!!

हे यशोदा ! जिस किसी ने ऐसे करुणोत्पादक दृश्य को अपनी आंखों से देखा होगा, वही इस पुत्र वियोगिनी जननी के हार्दिक भाव का अनुभव कर सकेगी। छोटी बहू को रोते रोते रक्त वमन होने लगा और कुछ ही देर बाद मूर्छा होगई दूसरे दिन तार पाने पर सोमदत्त प्रयाग पहुंचे, वहां यह शोकदायक घटना सुन पहले तो बहुत रोये । छोटी बहू भी उन्हें देखते ही मुंह ढांप रोने लगीं। थोड़ी देर बाद सोमदत्त ने शिवशङ्कर से कहा पुण्य का फल तो हाथों हाथ मिलगया, अब किसी सूरत से इन्हें घर ले चलो। छोटी बहू रोती हुई कहने लगी, अब मैं घर न जाऊंगी। मैं अपने लल्लू के ही पास जाऊंगी। छोटी बहू की दशा देखने से ज्ञात भी यही होता था कि उन्हें ईश्वर शीघ्र ही उनके लल्लू के पास भेज देगा !, हुआ भी ऐसा ही थोड़ी देर में उनके प्राण यमपुर को पधार गये।

इस लिये यशोदा ! इन निरर्थक बातों को छोड़कर नित्यप्रति गृह में रह सच्चे तीर्थों में ही स्नान करना अभीष्ट है।

किशोरी—माता जी, मुझ को इस में कुछ शङ्का है, आज्ञा हो तो पूंछूँ ?

प्रियंवदा—बेटी, आनन्द पूर्वक पूछो।

किशोरी—तो हरिद्वार, मथुरा, प्रयाग, सिंध तीर्थ हैं वा नहीं, वहां जाना चाहिये कि नहीं ?

प्रियंवदा—तीर्थ के अर्थ तरने उतरने मुक्त होने के हैं और वे तभी तक तीर्थ थे, जब तक उन में उपदेश होता था। चौबे पण्डे अब उन ऋषियों के स्थान बताकर पैसे मांगते हैं। वहाँ अपने पूर्वज ऋषि मुनियों के स्थान देखने में पाप नहीं, वरन चित्त प्रसन्न होता है। किन्तु वे स्थान हमें कुछ उपदेश नहीं देते हैं, स्थानों के देखने मात्र से मुक्ति नहीं होती, न पाप कटता है। हे बेटी! स्त्रियों के लिये पति सास और श्वसुर, माता व पिता गुरु यानी उपदेशक मूर्त्तिमान तीर्थ और प्रत्यक्ष देव हैं। इनकी प्रसन्नता से अगम्य फलों की प्राप्ति होती है। परन्तु इनकी सेवा सत्य, क्षमा, संतोष, इन्द्रियनिग्रह आदि सुन्दर गुणों के धारण करने से होती है। रोरी, अक्षत और बेलपत्री, फूल, फल आदि के चढ़ाने से नहीं। न शिव २, न बं बं, न राधेकृष्ण न सीताराम आदि शब्दों के जपने से।

प्राचीन समय में भी स्त्रियां उपरोक्त व्रतों का पालन कर तीर्थ स्नान करती थीं। तुमने सीता, द्रौपदी, इन्दुमती, सुदक्षिणा, अनुसूया के भी वृत्तांत सुने होंगे। जिनके प्राण पति ही में वास करते थे। वह उनकी आज्ञा पालन में इतनी मग्न रहती थीं, कि संसार के सारे सुखों को तृणवत् समझती थीं पति का वियोग ही उनके लिये अपार दुःख होता था। देखो तुम्हारी हमारी राजराजेश्वरी महारानी विक्टोरिया ने इसी पति सेवा रूपी व्रत को धारण कर यथावत् तीर्थ स्नान किये थे जिसका प्रमाण उनके उस पत्र से स्पष्ट प्रकट होता है, जो उन्होंने पति के वियोग होने पर अपने एक कुटुम्बी को लिखा था।

महारानी का पत्र।

कि मेरे सांसारिक सुख का पति के वियोग के साथ ही अंत होगया, मुझे तो संसार सूना जान पड़ता है, अब मैं यदि

जीती रहूं तो केवल अपने बच्चों के लिये, जो बिना पिता के होगये हैं। अपने दुःखी देश के लिये जिसने अलबर्ट को खोकर अपना सर्वस्व खो दिया। मैं वही करूंगी जिसको मेरा पति अच्छा समझेगा, क्योंकि मैं जानती हूं, वह सदा मेरे पास हैं। पति की आत्मा ही मेरी पथदर्शक होगी। पर हाय ४२ वर्ष की अवस्था में ही मुझ से मेरा पति सदा के लिये बिछुड़ गया। मैं अपने रानीपने को बिल्कुल पसन्द नहीं करती। राजकार्य्य का भार मैं केवल अपने पति के कारण करने में सामर्थ्यवान् हुई हूं। मुझको विश्वास था कि परमेश्वर हम दोनों को बहुत काल तक साथ रहने देगा और साथ ही साथ बूढ़े होंगे। पर ऐसा नहीं होने पाया। हाय, मेरे साथ कैसी निर्दयता हुई।

दुःखी विक्टोरिया.

देवी जी अब सन्ध्या समय होगया है।

हां, अच्छा बहन यशोदा, इससे आगे अब कल सुनाऊंगी।

बहुत अच्छी बात है।

ऐसा कहने के साथ ही वह उठकर अपने २ सायंकालिक कृत्यों में लग गई।

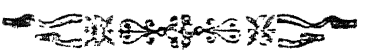

षष्ठ-परिच्छेद

प्रातःकाल राम बाग में यशोदा का पुत्र, बहुओं और सुशीलादि के साथ पधारना।

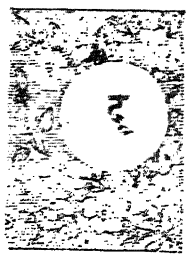

सरे दिन प्रातःकाल यशोदा अपने पुत्र और बहुओं तथा सुशीलादि के सहित राम बाग में गई और प्रियंवदा से सबों का यथायोग्य होने के पश्चात् यशोदा ने प्रियंवदा से कहा कि कृपया शेष विषय को प्रारम्भ कीजिये। हम लोगों को सुनने की बड़ी अभिलाषा है।

प्रियंवदा—हे यशोदा! वर्त्तमान समय में अविद्या के कारण स्त्रियों ने पति के सच्चे प्रेम के स्थान पर अनेक तीर्थ और उपवास तथा देवते आदि बना लिये। पति की आज्ञा का उल्लंघन करना पाप न रहा, फिर भला सुख कहां। देखो कांचीपुर नगर में एक सेठ रहते थे। उनके मुरला नाम की एकलौती पुत्री थी। यह बड़ी रूपवती, लाड़ली, हठीली कन्या थी। जिस बात के लिये हठ करती उसको बिना पूरा किये न छोड़ती। इस के हठ कभी वृथा न जाता। निदान जब यह १० वर्ष की हुई, तब जनकजननी को वर खोजने की चिन्ता

हुई, अन्त को उसी ग्रामके बाबू नीलमणि घोष के पुत्र बाबू मन्मथ घोष के साथ विवाह होना निश्चित हुआ। विवाह होने के पश्चात् मन्मथ बाबू भी अपनी सास की आज्ञानुसार ससुराल में ही रहने लगे। थोड़े दिनों के पश्चात् बाबू नीलमणि घोष के यहां एक बहुत बड़ा हवन हुआ। इस उत्सव में बाबू नीलमणि घोष ने मुरला के पिता से कहा कि कल के होने वाले उत्सव में आप मुरला को अवश्य भेज दें। दूसरे दिन मन्मथ बाबू ने बहुत कुछ कहा सुना, पर हठीली मुरला कब मानने वाली थी। माता, पिता के बहुत कुछ समझाने पर भी २-३ घंटे के लिये वह ससुराल को न गई। इस पर उस के पति मन्मथ बाबू क्रुद्ध होकर विदेश को चले गये, इसी शोक में मुरला की माता का भी देहान्त हो गया। मुरला के पिता ने बहुत कुछ ढूंढ भाल की, परन्तु कुछभी पता न लगा। अन्त को वह भी निराश हो गये और २-३ वर्ष के बाद उनको कठिन मलेरिया रोग हो गया। बहुत कुछ डाक्टरों का इलाज कराने पर भी कुछ सेहत न हुई, तब उन्होंने ज़िमीदारी का कार्य संभालने के लिये अपने समधी बाबू नीलमणि घोष को बुलाया। पर उन्होंने उत्तर में कहला भेजा कि जिसके लिये दौलत चाहिये थी, जब वही नहीं रहा तो मैं लेकर क्या करूंगा। इस के दूसरे दिन ही सेठ बैजनाथ का अन्त हुआ, बिचारी मुरला अनाथ होगई। एक दिन उसने अपने श्वसुर को बुला भेजा परन्तु वह अभिमान के मारे न आये। आखिर मुरला दीवान के सहारे ज़मींदारी का कार्य्य करने लगी। इसी तरह कार्य्य करते २ उसको ३।४ वर्ष व्यतीत होगये। मुरला को अब मन्मथ बाबू के मिलने की निराशा होगई, तब मुरला ने कठिन व्रत उपवास करना शुरू करदिये, जिसके कारण वह थोड़े ही दिनों में गलकर कांटा होगई। एक दिन सहसा कार्य्यवश दीवान जी भीतर गये तो मुरला की दशा देखकर चकित रहगये।

तब मुरला ने कहा कि दीवान जी अब शीघ्र ही मेरे सब दुःखों का अंत होगा। इसको सुन दीवान जी ने कहा कि बेटी! अब हम शीघ्र ही तुझ को सुसराल ले चलेंगे। तब वह मुरला को पालकी में बिठा ले चले। वह जब वहां पहुंची तो बाबू नीलमणि घोष ने कहा कि इस पिशाचिनी के लिये मेरे घर में जगह नहीं। लेकिन दीवानजी ने ज़बर्दस्ती कहारों को पालकी भीतर लेजाने की आज्ञादी। जब पालकी भीतर पहुंची, तो मुरला की सास पालकी के पास गई इधर मुरला जो उतरने लगी, त्योंही उसके शिर में पालकी का दर्वाज़ा लगा, लेकिन वह उतर कर अपनी सास के पैरों में पड़गई। इधर खून की धारा प्रबल हो रही थी। इसलिये उसको शीघ्रही मूर्छा आगई। वृद्धा ने मुरला को उठाकर पलंग पर लिटा दिया—और वहां अच्छे प्रकार से मुरला की चिकित्सा होने लगी।

इधर मन्मथ बाबू को गये बहुत दिवस होगये और उन्होंने विद्या उपार्जन के साथही धन को भी प्राप्ति करली तब उन्होंने सोचा कि अब गृहको चलना चाहिये। ऐसा विचार वह काशी से सीधे अपने गृह को आये। उस समय मुरला का अन्तिम श्वास चल रहा था। मन्मथ बाबू इस दृश्य को देख चकित हो मुरला के पास बैठगये। इतने में मुरला की जीवन-यात्रा समाप्त हुई। इसी प्रकार आपस के अप्रेम और पति की आज्ञा के पालन न करने से भारत का भारत होगया।

इस लिये श्रेष्ठ स्त्री वही है जो हठ को छोड़ माता, पिता, सास, ससुर, सम्बन्धियों, मित्रों, सहेलियों, सेवक और दासियों की विद्या, विनय और उत्तम पदार्थों से सेवा टहलकर प्रसन्न करती रहती है। उसके कुल का इस भांति प्रकाश होता है जिस भांति सूर्य्य चन्द्रमा से दिन रात, और उत्तम सेनापति

से सेना, अग्नि से जीवन, बिजली से प्रजा, सूर्य्य से दृष्टि और लक्ष्मी से शोभा।

मुझे शोक तो यह है कि तुम विद्यावती होनेपर भी पुस्तकों का अवलोकन नहीं करतीं, जिसके कारण तुमको और तुम्हारी बहुओं को यह भी नहीं मालूम कि सुलक्षणा स्त्रियों ने कैसे २ चतुरता के कार्य किये। मैं तुम सबको संक्षेप से इस विषय में कुछ स्त्रियों के वृत्तान्त सुनाती हूं।

१ कहानी।

किसी नगर में जगतनारायण नाम का एक वैश्य रहता था। वह बड़ा धनाढ्य था, परन्तु कुछ काल से दरिद्र आगया था। जिस के कारण वह बड़ा बेचैन रहता था। इतने में उस के पुत्र का विवाह होकर सुशीला नाम की बहू उस के घर में आई। जो अति सुशीला, गुणवती, और विद्यावती थी। गृह की अवस्था को देख धीरज धारण कर मन में विचार उसने एक दिन अपने ससुर से कहा कि पिताजी, घर का सब वृत्तान्त मैंने जान लिया, कुछ शोक करने की बात नहीं। क्योंकि पश्चात्ताप करने से कुछ नहीं होता, वरन् धीर स्त्री पुरुषों का यही धर्म है कि आपत्ति के समय में धीरज धारण कर कार्य्य करें।

ससुर अच्छा बेटी कहो।

बहू—आप जो कुछ काम करें मुझ से भी सम्मति ले लिया करें।

ससुर—अच्छा, आज कल हमारे पास केवल चार रुपये हैं। उससे हम निमक, तेल, मिठाई आदि गांव को ले जाया करते हैं।

बहू—अच्छा पिता जी, चार रुपये में से दो रुपये का अपना सौदा ले आइये। और दो रुपये में से एक रुपये के जौ (जो रुपये के २० सेर आते हैं) और एक रुपये में से लकड़ी दाल तरकारी तेलादि ले आइये और दो रुपये जो मैं देती हूं उसकी चार प्रकार की ऊन ला दीजिये।

ससुर—बेटी तू कहती तो ठीक है परन्तु हमको तो चार रुपये के सौदे में इतना नफ़ा नहीं होता जो रोटी चल सकें फिर दो रुपये से क्या होगा।

बहू—आप सत्य कहते हैं। परन्तु घर का सामान प्रतिदिन मंगाने में चार आने में तीन आने का माल मिलता है। फिर उस पर भी अच्छा नहीं, लाने वाले बेगार समझ कर कुछ ध्यान नहीं देते। इस के अतिरिक्त जो आया खाया पिया फिर वही चिन्ता ऐसी दशा में कुछ भी से और बरकत नहीं होती; और न इच्छानुसार जब चाहे रोटी आदि बनाकर खासकी हैं। इस हेतु आप की नफ़ा से यहां अधिक लाभ होगा।

यह सुन ससुर ने बहुत अच्छा बेटी, कह बाज़ार जाकर सब सौदा ला दिया और आप अपने कार्य को करने लगे।

इधर बहू ने ऊन के चार गुलूबन्द बनाकर बाज़ार भेजे, जिनकी कारागरी, सफ़ाई और सुन्दरता पर देखने वाले मोहित होगये और प्रत्येक एक रुपये को तुरन्त बिक गया। फिर दो रुपये की ऊन मँगाकर वही काम किया। इस प्रकार काम करते २ पन्द्रह रुपये बचाये, जिस में से चार रुपये ससुर जी को दे दिये। फिर मनन करके अपने पति से कहा, कि कुछ काम आपको भी करना चाहिये। क्योंकि उद्योग और विचार से सब कार्य्य सिद्ध होते हैं।

पति—जो तुम्हारी राय हो सो कहो।

बहू—आपने जितना पढ़ा है उसको काम के योग्य बनाने के लिये प्रति दिन रात्रि को दो घण्टे रोज़ पढ़ना आरम्भ कीजिये और प्रातः उठ शौचादि से निवृत्त हो सन्ध्या और अग्निहोत्र के पश्चात् बस्ती के बाहर जिधर से लकड़ी और ख़रबूजे आदि आते हैं उबाले चने और दो घड़े पानी ले जाकर नगर से थोड़ी दूर पर जहां छाया हो बैठ प्रेम पूर्वक वार्तालाप कर एक पैसे के आधपाव चने और ठंडा पानी पिला दिया करो। देखो ईश्वर क्या करते हैं।

पति—मुझ को स्वीकार है।

बहू ने एक रुपया देकर कहा कि जाओ अच्छे चने ले आओ।

पति—बहुत अच्छा, कह कर गये और चने ले आये और शाम से पढ़ना आरम्भ कर दिया।

बहू ने प्रति दिन की भांति प्रातः उठकर शौचादि से निवृत्त हो निमक मिर्च खटाई तय्यार की और चार पांच निमक की रोटीकर ससुर आदि को खिला कर पति से कहा कि आप एक आदमी से सब सामान लिवाकर कार्य कीजिये।

पति ने बहुत अच्छा, कह एक आदमी कर सब वस्तुयें लेकर नगर के बाहर छाया में बैठ काम किया और चार बजे शाम को लौटकर दो रुपया आठ आने लाकर स्त्री को दिये, इसी प्रकार प्रति दिन कार्य्य करने पर अपनी और पति की आमदनी से २५) रुपये बचाये और ससुर जी की बचत से गृह के काम चलाये।

ससुर अपनी बहू की चतुरता देख २ मनही मन में प्रसन्न होकर ईश्वर का धन्यवाद देते, बड़े आराम और चैन से दिन व्यतीत करते थे इस तरह कुछ दिन बीत जाने पर बहू ने फिर अपने ससुर से कहा कि पिता जी, अब आप बंजी छोड़ एक दूकान पर चूनी की कर लीजिये। इस में आप को भी आराम रहेगा। आप घर पर भी बने रहेंगे और मनोहर (देवर) को पड़ौस की अंग्रेज़ी पाठशाला में पढ़ने के लिये बिठला दीजिये।

ससुर—बेटी तुम कहती तो ठीक हो, परन्तु परचूनी की दूकान के लिये ५०) रुपये चाहियें वह कहां से लाऊँ और मनोहर की फ़ीस का एक रुपया माहवार चाहिये वह किस भांति दूं।

बहू—पिता जी यह लीजिये पचास रुपये और फ़ीस मैं दे दिया करूंगी।

ससुर ने रुपया लेकर दूकान खोल दी और मनोहर को पाठशाला में मास्टर साहब को सौंप दिया। दूकान खुलने के साथ बहू ने ससुर जी से हाथ जोड़ कर कहा कि प्रायः भारत के दूकानदार सत्य का व्यवहार नहीं करते और माल भी अच्छा नहीं बेंचते। इसके उपरांत अन्य अनेक प्रकार की चालाकियां करते हैं, इस लिये प्रथम तो धनवान ही नहीं होते और होने पर भी उनको सुख नहीं मिलते, नाना प्रकार के क्लेश बने रहते हैं। इस लिये आप वेदानुकूल सत्य का व्यवहार कीजिये, और धर्म के साथ धन को उपार्जन कीजिये, क्योंकि सब शुद्धियों में धन की शुद्धि ही विशेष फलदायक होती है बिना इसके शरीर शुद्धि पूरा फल नहीं देती। यदि आप सत्य का व्यवहार करेंगे तो आपकी दूकान प्रसिद्ध हो

जायगी, तब आप मालामाल हो जायेंगे। इस लिये माल उत्तम रखने का यत्न करते रहिये। इसके उपरांत दूकान पर एक नोटिस मोटे अक्षरों में लगा दीजिये कि "यह दूकान १० बजे से ५ बजे तक खुली रहती है चोखा और उत्तम माल मिलता है।"

ससुर-बहू के कार्यों से चित्त में प्रसन्न थे इस लिये उसकी यह बातें सुन कहा कि बेटी, जैसा तुम ने कहा यह सब ठीक है यथार्थ में सत्य की नाव ही पार जाती है। बेटी, हमारे घर का सत्यानाश बेईमानी ही के कारण हो गया। मैं तेरी सब बातों को मानता हूं अब मैं इसी प्रकार से कार्य करूंगा।,

मनोहर ने ५ वर्ष में मिडल पास कर दो वर्ष में एन्ट्रेंस पास कर लिया और ५०) रुपये पर एक कारख़ाने में बाबू बन गये। इधर पति को दो घंटे रोज़ पढ़ा गुना कर एक अच्छा मुनीम बना दिया जो लाला त्रिवेणीसहाय जी के यहां चालीस रुपये के सब से बड़े मुनीम बन गये।

बहू जी के ऐसे उत्तम प्रबन्धों से दश वर्ष में प्रत्येक प्रकार की आमदनियों से हज़ारों रुपये का माल हो गया नौकर-चाकर चलने लगे, गाय, भैंस, बग्घी, घोड़े के उपरांत पक्के मकान बाग़ बग़ीचे, कमरे तैयार हो गये। उनमें घड़ियां बोलने लगीं। इतरदान आदि सब आनन्दमंगल के सामान आगये और चारों ओर यश फैलने लगा। तब बहू ने एक दिन ससुर जी से कह कर परचूनी-दूकान पर अपने सम्बन्धियों को बिठा ससुर को हुंडी की दूकान खुलवा दी। उधर बाबू मनोहरलाल क़ानून का इम्तिहान देकर तहसीलदार हो गये और लाला जी को साहिब कलेक्टर बहादुर ने आनरेरी मजिस्ट्रेट बना दिया।

इधर जब गृह की उत्तम दशा हो गई तो सुशीला ने एक पुत्रीशाला प्रचलित की जिस का प्रबन्ध ऐसी उत्तमता से किया कि उस पाठशाला का नाम चहुं ओर हो गया। जो देखता प्रसन्न हो जाता। यहां तक कि एक बार ज़िलाधीश ने मये अपनी पत्नी के उस को देख और प्रसन्न हो सुशीला को "विद्याभूषण" की पदवी से भूषित किया। सुशीला अपने गृह के हिसाब किताब को प्रतिदिन सुना करती थी, नौकर, चाकर, दास, दासियों के कार्यों की देख भाल भी करती रहती थी। सहेलियों और सम्बन्धियों आदि के साथ बड़े प्रेम और नम्रता से वार्तालाप किया करती था। गृह के सारे काम नियम पूर्वक होते थे, अर्थात् ४ बजे से ६ तक शौच, स्नान, संध्या, हवन, ६ से ८ तक सासु आदि की सेवा, दास दासियों के काम की देख भाल, ८ से १० तक समाचार पत्र पुस्तकों का पढ़ना, घर के कार्यों की उन्नति पर विचार, १० से ११ तक भोजन, ११ से १ बजे तक आराम, १ से २ तक गृह की स्त्रियों के साथ विचार व पढ़ाना, २ से ३ तक आमदनी और खर्च की देख भाल, ३ से ४ तक अन्य आवश्यक कार्यों में आना जाना और बाहर की आने वाली स्त्रियों से मेल मिलाप, ४ से ५ तक भोजनादि का प्रबन्ध, ५ से ६ तक पुष्पवाटिका में वायु सेवन, संध्या हवनादि, ७ से ८ तक भोजन, ८ से ९ बजे तक कथा-प्रसंग, ९ के पश्चात् शयन, जिस से किसी को किसी प्रकार का क्लेश न होता था। गृह में आनन्द ही आनन्द दृष्टि आता था। वहू के ऐसे उत्तम प्रबंध के कारण वह घर जगत् में प्रसिद्ध हो गया।

कहानी २

इंग्लैंड देश में चतुर्थ विलियम के परलोक गमन होने पर उनकी भतीजी महारानी विक्टोरिया राज्य सिंहासन पर सुशोभित हुई। इन्हों ने अपनी विद्या और योग्यता से राज्य-शासन करने में भूमंडल पर अपना नाम प्रख्यात कर दिया और न्याय परायण सुशीला महारानी के नाम से सबही स्त्री पुरुष इनको जानते हैं। वह हिन्दू, मुसलमान, ईसाई आदि अपनी समस्त प्रजा को समान दृष्टि से देखतीं थीं और वह सब भी उन पर प्यार करते थे। यह १८ वर्ष की अवस्था में राज्यसिंहासन पर सुशोभित हुई। इनका विवाह सैक्सकोबर्ग के सुयोग्य विद्वान् राजकुमार अलबर्ट से हुआ था, इन्हों ने प्रजा के सुखचैन के लिये, भारतवर्ष में विद्या का प्रचार रेल तार आदि अनेक उपयोगी कार्य्य प्रचलित किये। इनकी वक्तृता ऐसी बुद्धिमत्ता से पूर्ण होती थी कि जिसको सुनकर पार्लियामेंट के सुयोग्य मन्त्री भी अचम्भित होजाते थे। इनके शासन करने की रीति भी ऐसी विचित्र थी कि इङ्गलैंड की जो प्रजा कभी अपने राजा पर विश्वास न करती थी, उसने इन के शासन को विश्वास एवं प्रेम का यंत्र समझा और इस देश की इस प्रकार उन्नति हुई कि जनसंख्या दूनी, धन प्रायः तिगुना और व्यापार छै गुना बढ़गया। इसके अतिरिक्त आस्ट्रेलिया में २०००० अङ्गरेज़ रहते थे, अंत में उनकी संख्या ५०००००० होगई। कनैडा में हर समय उपद्रव हुआ करते थे, अब वहां की प्रजा सच्ची राजभक्त होगई। बहुधा स्टीम भाप के ज़ोर से चलने लगे। बिजली के नये आविष्कार इन्हीं के समय में हुए। पृथ्वी पर तो तार जाताही था, समुद्र के नीचे भी तार का प्रचार हो गया। अफ़रीका में भी बहुत उन्नति हुई। भारतवर्ष के निकट

ब्रह्मदेश भी अधिकार में आगया. अर्थात सन १९०१ में संसार के चतुर्थांश भाग में अङ्गरेजी राज्य की विजय-पताका फहराने लगी। पचास वर्ष राज्यशासन के पश्चात् सन १८८७ में जुबली का उत्सव मनाया गया और इसके १० वर्ष पीछे साठवें वर्ष की हीरा जुबली मनाई गई, जिसमें महारानी की समस्त प्रजा ने दिल खोल राजभक्ति दिखलाई। अंत को ८२ वर्ष की अवस्था में २२ जनवरी सन १९०१ को इस दुःखमय संसार से परलोक गमन किया, जिससे समस्त संसार में शोक छागया। उस समय इस हृदयविदारक घटना पर सम्पूर्ण प्रजाने अत्यंत शोक प्रगट किया।

कहानी २

किसी नगर में एक गोविन्दराम नामी गृहस्थ रहते थे। इनके एक पुत्र था जब वह १८-१९ वर्ष का हुआ तो कुसंगत में पड़ कर बिगड़ने लगा और दो वर्ष में ही सब अवगुणों की खान हो गया। पिता उनके बड़े सीधे सच्चे पुरुष थे, अतएव उनसे पुत्र की दशा न सुधर सकी। माता जो पढ़ी लिखी और चतुर थी, प्रतिदिन अपने पति से इसी विषय में वार्तालाप करती रहती थी। अंत को विचार करते २ एक दिन माता ने पुत्र से कहाकि जितना रुपया तुम को चाहिये; मुझ से लेलिया करो। पुत्र को और क्या चाहिये था, अतएव उन्हों ने बड़ी प्रसन्नता से स्वीकार कर लिया। अब माता नित्य प्रति जितना धन वह मांगता, दे दिया करती। एक दिन सेठ पुत्र ने अपनी माता से कहा कि आप को नित्य प्रति देने का कष्ट उठाना पड़ता है इस लिये एक ही बार में सब धन की कंजियां

दे दीजिये। तब माता ने कहा कि बेटा, तुम झूठ बोलना छोड़ दो और एक घंटे नित्य प्रति पढ़ लिया करो, मैं तुम को सब धन की कुंजियां दे दूंगी। फिर पुत्र ने कहा कि इस में कौन बड़ी बात है, मैं आज से ही झूठ बोलना छोड़ता हूं और पढ़ना भी आज से ही आरम्भ कर दूंगा। इतना कह वह अपने मित्रों के यहां गये।

वहां जुये की ठहरी, और खेल कर जब मित्रों के साथ जारहे थे कि बीच में कोतवाल साहब मिले, तब उन्हों ने पूछा कि जनाब लाला साहब, किधर से आ रहे हो। तब सेठ पुत्र ने उत्तर दिया कि अभी जुआ खेल कर आता हूं। इसको सुन कोतवाल साहब हँस कर चले गये। कोतवाल साहब के चले जाने के पश्चात् सेठ पुत्र से उनके ज्वारी मित्रों ने कहा कि तुमने तो सत्य ही कह दिया क्या ऐसे कह कर हमको भी पकड़वाओगे। अब हम तुम को अपने साथ नहीं खिलावेंगे। तब सेठ पुत्र ने कहा कि चाहे तुम खिलाओ चाहे न खिलाओ मैं तो सत्य ही कहूंगा। फिर सेठ पुत्र को कभी किसी ने नहीं खिलाया। निदान इस तरह जुआ खेलना छूट गया।

दूसरे दिन आप चमेली के तेल की शीशी लिये हुये जारहे थे कि जमादार साहब ने पूछा कि लाला साहब किस तरफ़ जा रहे हो, तब सेठ पुत्र ने उत्तर दिया कि मेहरजान के यहां जाता हूं। उसी स्थान पर उक्त वेश्या की दासी खड़ी थी, उसने इस वृत्तान्त को सेठ पुत्र के पहुंचने के पहले ही कह-दिया। जिस को सुन वेश्या सेठ पुत्र के पहुंचने पर बड़ी क्रोधित हुई और खूब फटकारा। उस दिन से सेठ पुत्र कभी वेश्या के यहां न गये इस तरह बदमाशी भी छूट गई। एक दिन आप रात को चोरों के साथ चोरी करने जाते थे। बीच में दारोगा जी मिले, उन्होंने पूछा कि लाला जी इस समय कहां

जाते हो। तब सेठ पुत्र ने उत्तर दिया कि चोरी करने जाता हूं। दारोग़ा जी ने हँसी जान कुछ न कहा। सेठ पुत्र के साथ थोड़ी दूर चलने पर चोर मित्रों ने कहा कि तुमने तो दारोग़ा जी से सचही कह दिया क्या इस तरह कहकर हमको भी पकड़वाओगे। अब हम तुम को अपने साथ नहीं ले चलेंगे। तब सेठ पुत्र ने कहा कि चाहे लेचलो अथवा न लेचलो, मुझ से जो कोई भी पूछेगा तो मैं सत्य २ कह दूंगा इस प्रकार सेठ पुत्र को चोरों ने भी छोड़ दिया और अकेले चोरी करने का साहस नहीं था. इसलिये चोरी की आदत भी छूट गई। इस प्रकार एक २ करके माता की बुद्धिमानी से सम्पूर्ण बुरे स्वभावों की इति श्री होगई। इधर विद्या का भी प्रकाश उसके हृदय में हुआ, फिर क्या १ और १ ग्यारह. फिर तो माता,न प्रसन्न होकर सम्पूर्ण कोष की तालियां दे दीं। जिसको पाकर उन्होंने बड़ी योग्यता से अपने कार्य्य का सम्पादन किया और माता व पिता इत्यादि की प्रतिदिन देववत् पूजा की, जिससे उनका संसार में नाम होगया।

इतनी कथा होने पाई थी कि मनोरमा ने आकर कहा कि श्रीमती ने भोजनों के लिये बुलाया है।

प्रियंवदा—यशोदा जी, अब भोजनों के लिये चलिये दो बजे के पश्चात् शेष कहानी सुनाऊंगी।

यशोदा—बहुत अच्छा चलिये।

इतना कह सब गाड़ी में बैठ चल दीं और वहाँ सबों ने भोजन कर अपने २ स्थान पर जा विश्राम किया।

* * * *

दो बजे के पश्चात् ज्योंही प्रियंवदा जी हाथ मुंह धो स्वस्थ होकर बैठीं, त्योंही यशोदा बहुओं और सुशीलादि के सहित पहुंची और यथायोग्य के पश्चात् बैठ गईं।

यशोदा—प्रिय सखी! शेष विषय को प्रारम्भ कीजिये।

प्रियंवदा—सुनिये—

कहानी ४

बांकीपुर ग्राम में रामचरन नामक गृहस्थ रहते थे। इनके चार पुत्र पढ़े लिखे सदाचारी थे। कुछ दिनों के पश्चात् सब से छोटा पुत्र कुसंगति में पड़कर बिगड़ गया। उसकी इस प्रकार बुरी दशा देख माता ने उससे प्रेम बढ़ाना आरम्भ कर दिया। एक दिन मा पुत्र परस्पर बैठे बातें कर रहे थे कि माता ने कहा।

माता—बेटा, जाओ अच्छे स्वच्छ कपड़े पहन आओ।

पुत्र—माताजी मैं तो साफ़ कपड़े पहने हूं।

माता—नहीं इनको उतार कर और पहन आओ।

माता का इतना अगाध प्रेम देख प्रसन्न हो वह गया और कपड़े पहन माता के पास आ बैठ गया। तब माता ने कहा बेटा। रसोई के पास वाली कोठरी के भीतर पले में कोयले रक्खे हैं, उनको कुर्ते में भर दूसरी कोठरी में उँडेल आओ। पुत्र माता की इस आज्ञा को सुन अति दुखित हो कोयले भर निश्चित स्थान पर रख, माता के पास आ कुर्ते को झाड़ने लगा।

माता—बेटा यह क्यों झाड़ते हो।

पुत्र—क्या कहें माता जी ? अभी तो आपने मुझको स्वच्छ कपड़े पहनाये, फिर कोयले भरवाये, भला देखो तो सही, तुम ने मेरे कपड़े कैसे काले करा दिये। इस पर कैसे धब्बे पड़ गये हैं।

माता—बेटा, तुझे कपड़े काले होने और उस पर धब्बे पड़जाने का कितना शोक है। इसी प्रकार सोच, कि जो तू नीचों में बैठता, नीच कर्म करता है, इसका जो कालोच और धब्बे तेरे हृदय में पड़ते जाते इसका मुझको कितना शोक है। तेरे कपड़ों के धब्बे तो धोबी के यहां जाकर भी छूट जायेंगे। परन्तु यह धब्बे क्योंकर छुटेंगे।

माता के इस कथन का उसके चित्तपर ऐसा प्रभाव पड़ा, कि उसी दिन से उसने नीच पुरुषों का कुसंग और नीच कर्मों के त्यागने की प्रतिज्ञा मनमें करली, और थोड़े ही दिनों में वह एक योग्य पुरुष बन गया।

कहानी ५

किसी नगर में भजनलाल नामक सेठ रहते थे। दैवयोग से उनके कोई सन्तान न थी, और कंजूस वे इतने थे कि बड़े धनाढ्य होने पर भी कोई नौकर न रखते थे। परन्तु उनकी धर्मपत्नी बड़ी चतुरा, बुद्धिमती थीं। एकदिन रात को १२-१३ चोर घुसे और सेठजी को मारने लगे तब बुद्धिमती स्त्री ने कहा कि भाई तुम इनको क्यों मारते हो, चलो मैं तुमको तहखाना बतलादूं। बस चोरों को और क्या चाहिये था। सेठानी

के पीछे २ चल दिये तब बुद्धिमती ने उनको तहख़ाने के नीचे उतार संदूक दिखलाये, चोर संदूकों को देख मोहित हो, टटोलने लगे, और ताली मांगी। तब चतुरा ने कहा कि तालियाँ ऊपर रहगई। यह सुन चोरों ने कहा कि शीघ्र लाओ। सुनते ही चतुरा चलदी और बाहर आते ही तहख़ाने का ढक्कन ऊपर से बंद कर क़िले में सूचना दी। प्रातःकाल पुलिस ने ढक्कन खोला और चोरों को पकड़ उस बुद्धिमती को पुरस्कार दिया और वह सब राजदंड के भागी हुये।

कहानी ६

काजीपुर नाम एक नगर था उसमें काज़ीमुल्ला बहुतायत से रहते थे। वहीं भोलेराम नामी एक धनाढ्य निवास करते थे, एक दिन दैवयोग से पहरे वाले सब सोगये, चोर घर में घुस आये लालाजी तो भोले भाले थेही, चोरों को आहट पा और ढीले होगये। परन्तु हाथ से अपनी धर्म्मपत्नी महारानी को जगा दिया। जिसने सब वृत्तान्त जान ऊँचे स्वर से लालाजी से कहा, कि आप ने मुझको योंहीं जगा दिया, मैं इस समय एक अच्छा स्वप्न देख रही थी।

सेठजी—क्या स्वप्न था।

महारानी—मैंने देखा कि मेरे सन्मुख भगवान् आये और मुझ से प्रसन्न हो कहा कि तुम्हारे तीन पुत्र होंगे, भला सेठ जी बतलाइये तो आप उनके क्या २ नाम रक्खेंगे।

सेठजी—तू बड़ी मूर्खा है, अभी से क्या चिन्ता, जब पुत्र होंगे तब देखा जायगा।

सेठानी—नहीं मैं तो अभी रखती हूं।

सेठजी—अच्छा तू अभी रखले।

सेठानी—अजी मैंतो एकका नाम काजी, दूसरेका मुल्ला, तीसरे का नाम चोर रक्खूंगी।

सेठजी—भला यह नाम किस काम के हैं।

सेठानी—मैं तो यही नाम रक्खूंगी और इन्हीं नामों से पुकारा करूँगी अच्छा सेठजी! ज़रा उठिये तो सही मेरे मन में तो अभी से पुकारने की है। आप भी मेरे साथ छत्त पर चलिये

सेठजी—अरे क्यों बावली हुई है।

महारानी—क्या आप मेरे मनकी इतनी भी न करेंगे।

इधर यह बातें हो रहीं थीं उधर चोर बातें सुन हंस रहे थे। यह दोनों कैसे बावले हैं, उधर हठ पूर्वक वह उनको छत्त पर ले गई और कहा कि पुकारो। भोलेराम का पुकारना तो एक ओर रहा वह यह भी नहीं समझे कि यह मामला क्या है। वह चुप चाप खड़े रहे। तब महारानी ने साहस पूर्वक पुकारना आरम्भ किया कि "काजी मुल्ला चोर!" इस भांति कई बार पुकारा जिसका परिणाम यह हुआ कि अड़ोस पड़ोस के रहने वाले काजी मुल्लाओं ने यह जाना कि सेठजी के यहां चोर आये हैं, लाठी ले २ कर महल में आये। इतने में लाला जी के सेवक भी जाग गये सब ने मिलकर चोरों को पकड़ लिया। जिन को सब प्रकार से दण्ड मिला।

प्रिय यशोदा! योग्य स्त्रियों के सुयोग्य कार्य्यों से इतिहास

के इतिहास भरे पड़े हैं। परन्तु शोक तो यही है, कि तुम अपनी जाति की आप अवनति करती चली जाती हो और प्राचीन वीराङ्गनाओं की योग्यता पर दृष्टि नहीं डालतीं। अब उठो और बुद्धिमानी से कार्यों को कर सुयश को प्राप्त करो। कार्य करने में पुरुषार्थ की भी आवश्यकता होती है। क्योंकि विना इसके धनादि पदार्थ नहीं मिलते। इस हेतु पुरुषार्थ से सुवर्णादि धन को सञ्चय कर सुख उठाना चाहिये। परन्तु अतिलोभ, वा अन्याय से जो दूसरों के सुख को नष्ट करता है, उसको कभी पूर्ण सुखों की प्राप्ति नहीं होती। देखो—

पाटन नगर में एक विहारीलाल सेठ रहते थे जो बड़े सुशील, सदाचारी और धार्मिक थे। ईश्वर की कृपा से उनके अगम्य धन था। सेठजी के पांच पुत्र थे, जिनमें से बड़े पुत्र का नाम कुञ्जविहारीलाल था। जो बड़ा अन्यायी, दूसरों को कष्ट देने वाला, क्रोधी, क्रूर स्वभाव वाला था। कुछ दिनों के पश्चात् बड़े सेठजी की मृत्यु हुई। उधर वह अपने भाइयों से प्रलग होगये। फिर उन्होंने बेइमानी करके बहुत धन उपार्जन किया और धन होने पर वह दूसरों तथा-नौकर आदि को बहुत दुःख देने लगे।

कालांतर में एक बहुत बड़ा अकाल पड़ा। तब लाला जी अमरीका से गेहूँ लेने गये। दो तीन दिन सफर करने के बाद एक दिन रात को लाला जी का नौकर व लाला जी दोनों सो गये, इस बीच लालाजी का संदूक (जिसमें सब रुपया रक्खा था) किसी ने उठा लिया जब आँख खुली तब संदूक देखा अब सन्दूक कहां वह तो पहले ही से चोरी जा चुका था। खैर ज्यों त्यों कर अमरीका पहुंचे, और गृह से फिर रुपया मंगाया। इधर लाला जी के पीछे गृह में आग लग गई, और नौकर चाकर तो उनका मन से बुरा चाहते ही थे-दिखावे के

लिये इधर उधर दौड़ते रहे। पुनः वह आग बहुत बढ़ी और सरकार की सहायता से बुझाई गई। उधर रुपया पहुंचने पर लाला जी अन्न खरीद उसको ५० जहाजों में भरवा कर स्वदेश को लौटे। चलते २ एक दिन समुद्र में बड़े ज़ोर से तूफ़ान और आंधी आई जिसके कारण सारे जहाज डगमगाने लगे और हिलते डुलते एक २ करके डूबने लगे। इस घटना को देख लाला जी के प्राण हवा होगये। एकाएक लालाजी का जहाज एक बर्फ़ी चट्टान से टकरा गया और धीरे २ वह भी सर्वदा के लिये समुद्र गर्भ में विलीन होगया। उधर गृह में आग लग जाने के कारण, लालाजी के लड़के और स्त्रियादि सब लालाजी के भाई के घर में रहने लगीं। एक दिन चचा भतीजे में खूब लड़ाई हुई, यहां तक कि मुकद्दमे की ठहरी। भाग्यवश लाला जी के पुत्र ही हार गये और दोनों पुत्रों को चार २ वर्ष की सजा हो गई, देखो किसी कवि ने क्या ही ठीक कहा है—

रहे न कौड़ी पाप की, ज्यों आवे त्यों जाय।
जिमि अंधी पीसति मरे, चून स्वाननी खाय॥

इस हेतु सपरिश्रम जो कुछ प्राप्त हो उसी में संतोष के साथ मग्न रहना उचित है। जिस प्रकार जल समुद्रों को भर जीवों की रक्षा कर मोती आदि रत्नों को उत्पन्न करता है, उसी भांति धर्म से धन को बढ़ाकर सुख की प्राप्ति करना ही श्रेष्ठ है। यही सर्वोपरि शुद्धि है। बिना द्रव्य शुद्धि के जल और मिट्टी से जो शुद्धि की जाती है। वह पूर्ण फल को नहीं देती। इसके उपरांत यह भी स्मरण रखना योग्य है कि जहां धनादि पदार्थों की बढ़ती होती है, वहां के बहुधा स्त्री पुरुष निद्रालु, आलसी, कर्महीन हो जाते हैं। जिस के कारण उस घर से लक्ष्मी उत्साही स्त्री पुरुषों के यहां शीघ्र चली जाती

है। फिर बिना धन के नाना प्रकार के कष्ट सहन करने पड़ते हैं।

प्रिय यशोदा! सुखी रहने के लिये जहां अनेक बातें शास्त्रों में बताई, उनमें विशेष बात यह है कि शारीरिक आरोग्यता के नियमों को पालन करते हुए मानसिक रोगों की शांति के लिये सदा उत्तम पुरुष व स्त्रियों का सत्संग तथा उत्तम पुस्तकों का स्वाध्याय करे। क्योंकि मानसिक रोगों के उत्पन्न होने की जड़ कुसंग है। इस लिये झूंठ बोलने, प्रति समय शृङ्गार में लिप्त रहने, तिरछी दृष्टि देखने, सदा बीमारी का बहाना करते अपने गृह की खिड़कियों से मार्ग के आने जाने वालों को देखते रात दिन नाइन, बारिन, कहारिन इत्यादि से मेल रखने से बचो। तथा जो स्त्रियां मेले आदि में रात दिन जाती हों, प्रत्यक्ष में व्यभिचारिणी प्रसिद्ध हों एवम् अत्यन्त क्रोधी, अति लोभी और कामी का कभी संग न करो। इसके संग से हानि के अतिरिक्त लाभ की प्राप्ति नहीं होती। इस लिये सुपात्र, सुशीला, विदुषी, महिलाओं का सत्संग करो, जिनकी संगति से कुसंस्कार दूर हों। स्वधर्म में रुचि उत्पन्न हो जाती है, जिसके कारण अपार सुखों की प्राप्ति होती है। इसके उपरान्त ऐसी सुशीलाओं की मित्रता और सहेली भाव अचल होता है और वह विपत्ति के समय में कभी भी साथ नहीं छोड़तीं, वरन् बुद्धि के बल से उस विपत्ति को टाल आनन्द का मार्ग दिखलाती हैं। प्रिय यशोदा! क्या तुमने कभी रामायण में सीता, त्रिजटा, व सरमा का संवाद नहीं सुना?

यशोदा—क्योंकर है, आप ही कहिये।

प्रियंवदा—जब रावण सीता को पञ्चवटी से हर ले गया।

और अशोकवाटिका में रक्खा, वहां उनकी रक्षा के लिये बहुत सी राक्षसियों को नियुक्त कर दिया। उन में ये दो राक्षसी बड़ी सीधी थीं और जो दुःखी व विलाप करती हुई सीता को समझाया करती थीं। दूसरे पांचवे दिवस रावण भी सीता को दुःखित करने जाया करता था। एक दिन रावण अपनी स्त्रियों समेत जहां जानकी बैठी थीं तहां आया और बहुत कुछ लोभ तथा भय दिखाकर कहा कि हे सीते! जो तुम हमारी इच्छा पूर्ण न करोगी तो दो मास के अनन्तर तुम्हारा हम रुधिर पान करेंगे। इतने में प्रहस्त नामक सेनापति किसी कार्य वश रावण से मिलने आया, द्वारपाल से यह सुन रावण अशोकवाटिका से चला गया। तब सीता जी ने त्रिजटा से कहा।

जानकी–हे माता! तू मेरी विपत्ति की साथिन है अब शीघ्र उपाय करो मैं देह त्यागन करूं, काठ लाकर चिता बनादो। मैं उस में बैठ जाऊं। तुम आग लगा देना।

त्रिजटा–हे मैथिली! तुम दुःखी मत हो रामचन्द्रजी शीघ्र ही तुम्हारा दुःख दूर करेंगे। हे राजकुमारी! रात में आग नहीं मिलेगी। तब सीताजी बहु प्रकार से विलाप करने लगीं! प्रातः रावण माया से रचा हुआ, रामचन्द्र जी का शिर तथा धनुषबाण सीता जी के दिखाने के लिये लाया और बोला।

रावण–हे सीते! जिस अपने पतिके भरोसे हमारी प्रार्थना को स्वीकार नहीं करती थीं वे खर के मारने वाले तुम्हारे भर्त्ता रामचन्द्र भाई सहित मारडाले गये। यह देखो रुधिर लगा हुआ उनका शिर भी हमारा सेनापति लाया है। सीताजी शिर को बार २ उलट पुलटकर देख बड़ी दुःखित हुईं विलाप करती हुई मूर्छित हो अध कटे केले के समान गिर पड़ीं। इतने में

अनीकस्थ नामक एक राक्षस आया और विशेष वृत्त कह रावण को सभा में लेगया। सीता जी को इस प्रकार दुःखी देख सरमा नामक राक्षसी जानकी जी के निकट आ बोली।

सरमा—हे सीते! जो रावण ने तुम से कहा है यह सब झूंठ है। उन पुरुष सिंहशार्दूल रामचन्द्र जी को कोई नहीं मार सक्ता। और यह जो तुमने शिर व धनुष देखा है, यह रावण ने विद्युज्जिह्व द्वारा माया से बनवाकर दिखाया है। श्रीरामचन्द्र जी महाराज तो अपनी विपुल सेना सहित समुद्र उतर, सुवेल नामक पर्वत पर ठहरे हैं। मैं स्वयं उन विशालाक्ष को भ्राता समेत देख आई हूं। हे मैथिली! हम तुमको शीघ्रही आये हुये रामचन्द्र जी की गोद में बैठी हुई देखेंगी।

पश्चात् श्रीरामचन्द्र महाराज कई दिन युद्ध करने पर रावण को सकुटुम्ब मार विभीषण को राज्य दे मैथिली को ले पुष्पक विमान में बैठ अयोध्या को गये।

इसी तरह जब धन के लोभ से दुर्योधन ने छल से लाख के घर में कुन्ती समेत पाँचों पाण्डवों को फूंक देने का विचार कर उनको उत्सव के बहाने वारणावत में लाख के घर में रहने को भेजा इस दुष्ट अभिप्राय को विदुर ने जान युधिष्ठिर को सचेत कर दिया युधिष्ठिर ने यह वृत्तान्त जान प्रतिदिन लाख के घर से मृगया के लिये बन में जाना प्रारम्भ करदिया। एक दिन घूमते २ एक चक्रा नगरी में पहुंचे। वहां वह सहर्ष माता समेत पाँचों पाण्डव एक ब्राह्मण के घर रहने लगे। ब्राह्मण की स्त्री और कुन्ती से बड़ी मित्रता होगई। इस प्रकार रहते २ बहुत दिवस व्यतीत होगये। एक दिन चारों भाई कहीं बाहर गये हुये थे, परन्तु भीमसेन माता के पासही थे। एकाएक कुन्ती ने उस ब्राह्मण के घर से अतिदारुण रुलाई सुनी, उसको सुन भीमसेन से कहा--

कुन्ती—बेटा हम धृतराष्ट्र के पुत्रों से छिप इस ब्राह्मण से सत्कार पाय सुख से रहते हैं। इस उपकार के बदले मैं क्या उपकार करूँ? और जो जितना उपकार करता है पलटे में उस का उतना उपकार नहीं करते वे अवश्यही दुःखी होते हैं। मुझको निश्चय जान पड़ता है कि इस ब्राह्मण के घर कोई अवश्य भारी विपत्ति आई है जिस के कारण वह विलख २ कर रुदन कर रहा है।

भीम—हे माता! आप ब्राह्मण का दुःख जान मुझसे कहें अगर कठिन हो तो मैं भी उसके दूर करने का प्रयत्न करूँगा।

यह सुन कुन्ती ने ब्राह्मण के घर जाकर देखा कि, ब्राह्मण महाराज मलिन मुख किये बैठे हैं और स्त्री, पुत्र तथा कन्या के सहित कहते हैं कि संसार केवल दुःख की जड़ है? देखो जीने से ही परम दुःख तथा पीड़ा भोगनी पड़ती है। क्योंकि जीते हुये मनुष्य को निश्चय ही दुःख घेर लेता है। अतएव मैं गहरी विपत्ति में पड़ा हूं। हाय! इस विपत्ति से बचने का उपाय नहीं दीखता। अहो! मुझपर धिक्कार है! आज परिवार सहित मेरी कोई गति नहीं, परिवार सहित ही प्राण छोड़ना ही मेरे लिये मङ्गल दायी है।

ब्राह्मणी—हे द्विज श्रेष्ठ! साधारण मनुष्यों की भांति शोक करना कदापि आप को नहीं सोहता, क्योंकि आप विद्वान् हैं। अब दुःख करने का समय नहीं है। भूमण्डल पर के सब मनुष्यों को अवश्य ही मरना पड़ेगा. अवश्यमेव होने वाले विषय का दुःख करना उचित नहीं है। अतएव अपनी सुबुद्धि से मनः पीड़ा त्याग देवें। मैं स्वयं वहां जाऊँगी। संसार में स्त्री के लिये सनातनधर्म यही है। कि वह प्राण दे कर के पति का हित करे। हे पुरुष श्रेष्ठ! मैं जो कहती हूं वह श्रेष्ठ धर्म है।

उपरोक्त बातें सुन कुन्ती बोली–देवी ऐसे दुःख करने का क्या कारण है ! यदि उससे पार पाने का उपाय होगा तो अवश्य करूंगी।

ब्राह्मण–हे तपोधने ! तुम जो कहती हो वह सब साधुओं के योग्य ही है। पर यह दुःख दूर करना मनुष्य शक्ति के बाहर है। क्योंकि इस नगर के निकट महाबली एक राक्षस रहता है, वह मनुष्य मांस से पुष्ट, बली, दुष्ट बुद्धि असुर राज सदा इस देश की रक्षा करता है। एक गाड़ी अन्न और दो पैसे व वह मनुष्य जो लेकर जाता है, यह सब उस राक्षस के भोजन के लिये वेतन स्वरूप में निर्दिष्ट है इस देश का हरएक गृहस्थ अपनी २ पारी मे एक २ दिन के हिसाब से नित्य वह भोजन भेजता है। आज हमारी कुलनाशी वह पारी आई है। राक्षस के भोजन के लिये वेतन स्वरूप में एक मनुष्य देना पड़ेगा। हे सुन्दरी ! अब ऐसा कोई उपाय नहीं, जो इस दुष्ट राक्षस के हाथ से स्वजनों को बचा सकूं। इसलिये अपार दुःख में डूबा हूं।

कुन्ती—हे ब्रह्मन् ! तुम इस दुःख से मत दुखी हो मैंने उस राक्षस से बचने का उपाय निश्चय किया है। तुम्हारा एक शिशु पुत्र और एकही व्रतशीला कन्या है। और तुम्हारी स्त्री अथवा तुम्हारा जाना मैं उचित नहीं समझती। मेरे पांच पुत्र हैं, उनमें से एक तुम्हारे उपकार के लिये उस पापी राक्षस के यहां उपहार लेकर भेजूंगी।

ब्राह्मण–मैं अपना जीव बचाने के लिये कभी ऐसा कार्य नहीं करूंगा मैं स्वजनों के बचाने के लिये अतिथि रूप में आई हुई तुम व तुम्हारे पुत्र को (फिर हमारी इस पक्षों से तुम्हारा अधिक प्रेम है) क्योंकर भेजने का साहस करूं। क्योंकि जो

नीच वंश में उत्पन्न हैं वे भी ऐसे कार्यों में हाथ नहीं डालते। पण्डितों ने कहा है कि अतिथि व प्रेम का ऋण व शरण लिये हुये और मांगने वाले को मार डालना अति निष्ठुर अनुचित काम है। महात्माओं का वचन है कि निन्दित और निष्ठुर कर्म कभी मत करना। अतएव आज ही मैं स्त्री सहित प्राण छोड़ूंगा।

कुन्ती—हे द्विजोत्तम! तुमने और मेरी प्यारी सहेली तुम्हारी इन धर्मपत्नी ने मेरा और मेरे पुत्रोंका आदर सत्कार कर महत् उपकार किया है इसलिये तुम्हारा प्रत्युपकार अवश्य करना चाहिये। मेरा पुत्र वीर्यवन्त और तेजस्वी है सो वह राक्षस उस को नष्ट करने में समर्थ नहीं होगा। मुझ को निश्चय है कि मेरा पुत्र उस राक्षस को भोजन पहुंचा भी देगा और अपनी रक्षा भी करेगा। हे ब्राह्मन्! तुम यह बात प्रकाश मत करना। ब्राह्मण ने कुन्ती से यह बात सुन कर स्त्री के साथ प्रसन्न हो अमृत सदृश मान लिया। तब कुन्ती ने उस कठोर कार्य करने को भीम से कहा। माता की आज्ञानुसार भीम उस राक्षस के स्थान पर भोजन सामग्री लेकर गये और थोड़े ही काल में उस दुष्ट राक्षस को मार घर आ कुन्ती व ब्राह्मण को सब कथा सुनाई।

हे यशोदा! देखो कुन्ती ने अपनी सहेली को नहीं वरन् सब नगर को ही दुष्ट राक्षस से बचा दिया।

चम्पक नाम नगरी में रामलाल नामक गृहस्थ रहते थे। इन की स्त्री विदुषी सुशीला तथा उदार थी। ईश्वर की कृपा से इन के अगम्य धन और चार पुत्र थे। इन के विवाहादि संस्कार हो प्रत्येक के सन्तानें भी थीं। कुछ काल के पश्चात् सेठानी जी गंगा स्नान को चलीं। जहां हमारी सेठानी जी को

रावटी थी उसी के समीप गंगाबाई नामक सुशील सुन्दरी विदुषी, पंडिता स्त्री ठहरी हुई थी। अति निकटवर्ती होने से हमारी सेठानी और गंगाबाई में कुछ वार्तालाप होने लगा तीन चार दिन वार्तालाप होने पर सेठानी जी की मित्रता हो गई और चलते समय परस्पर पत्रोत्तर की भी प्रतिज्ञा हो गई गंगाबाई के बहुत मना करने पर भी मित्रता का उदाहरण स्वरूप हमारी उदार सेठानी जी ने सुवर्ण का अति सुन्दर हार दिया और परस्पर जुदाई हुई। पुनः सेठानी जी गृह आ पत्र डालती रहीं। कुछ दिनों के पश्चात् गंगाबाई के पुत्र का विवाह हुआ उस में निमंत्रण आने पर सेठानी जी सहर्ष आईं और वहां पुष्कल धन व्यय किया। हे यशोदा! अब तो इतनी गाढ़ी मैत्री हो गई कि बिना गंगाबाई की सम्मति के कोई कार्य सेठानी नहीं करती थीं।

इस प्रकार बहुत काल बीतने पर सेठ जी की मृत्यु हुई इस दुःख की सूचना पा गंगाबाई भी आई और सेठानी जी को बहुत कुछ समझाया। जब सेठानी जी को कुछ शान्ति हुई, तब गंगाबाई अपने गृह को गई। गंगाबाई के चले जाने के पश्चात् भाई भाइयों मे परस्पर कुछ वैमनस्य होगया उस को जान सेठानी जी ने चारों पुत्रों को बुला कर कहा।

सेठानी—हे मेरे प्यारे बेटो! आज मैं तुम सब को कई दिन से उदास देखती हूं। सच २ मुझ को उदासी का कारण बतलाओ जिससे उसके निवृत्ति का उपाय किया जाय।

विहारीलाल—माता जी! अब कुशल तो इसी में है कि तुम सब जायदाद को बांट दो।

सेठानी—हे पुत्र! क्या तुम सबकी उदासी का यही कारण है तो तुम शीघ्र सब धन को बांटलो। पुनः सेठानी ने सब

पुत्रों को यथायोग्य भाग कर बांट दिया। परन्तु ऐसा करने पर भी सेठानी जी के छोटे दो पुत्रों को उदासी तथा वैमनस्य नष्ट न हुआ किन्तु वह वैमनस्य दिन दूना रात चौगुनी बढ़ने लगा। जब सेठानी जी को यह सब वृत्त ज्ञान हुआ तो उन्होंने इस के दूर करने का बहुत कुछ उपाय किया। परन्तु सब निष्फल हुआ। अन्त को हतोत्साह होकर सेठानी जी ने अपनी परम सहेली गंगाबाई को सम्पूर्ण वृत्त तथा शीघ्र आने को लिख पत्र भेजा। जिसको पाते ही गंगाबाई अपने पति की आज्ञा ले दूसरे दिन ही यात्रा कर पहुंची। इधर सहेली का आगमन सुन सेठानी जी बड़ी प्रसन्न हुई और अपने कमरे में ही ठहरा यथोचित आदर सत्कार खा पी, जब निवृत हुई तब सेठानी ने गंगाबाई से सब वृत्त कहा। दूसरे दिन गंगाबाई ने एकांत में उनके सब से छोटे पुत्र को बुलाकर पूछा।

गंगाबाई—ऐ बेटा! तुम दोनों में परस्पर किस लिये वैमनस्य है और वह क्यों कर दूर हो सकता है?

पुत्र—माताजी! मैं तुमको अपना बड़ा समझता हूं इस लिये तुम से मैं कुछ नहीं छिपाऊंगा। हमारी माता ने पिताजी की सब सामग्री से पूर्ण अति उत्तम कोठी मेरे बड़े भाई केदारनाथ को दे दी है अगर वह मुझे दे दे तो यह वैमनस्य दूर हो सक्ता है।

गंगाबाई—ऐ पुत्र, क्या सेठानी जी ने तुमको कोठी नहीं दी?

पुत्र—नहीं दी तो है, परन्तु वह मेरी कोठी से हजार गुणा उत्तम है अगर वह राजी से दे दे तो अच्छा है नहीं तो उनकी पाक बनाने वाली मिश्रानी "लाली" से मेरी सलाह हो गई है वह ता० ५ को सायंकाल के भोजन में बिष दे देगी। जिस से

शीघ्रही मृत्यु हो जायगी तब मुझे कोठी को छोड़कर सम्पूर्ण धन भी मिल जायगा।

गंगाबाई—अरे पुत्र, तुम्हारा यह विचार ठीक नहीं। देखो शास्त्र में लिखा है कि विष देनेवाला, विश्वास घात करने वाला, मित्र की धरोहर मारने वाला, आग लगाने वाला—ये सब दूषित कर्मों के करने वाले नरक अर्थात् नाना प्रकार के दुःखों को भोगते हैं। और उनके मांस को गिद्ध, और कुत्ते भी नहीं खाते। इसके उपरांत यह बांट तुम्हारी माताजी ने बड़े विचार से किया है अतएव तुमको उनकी आज्ञा पालन करना परम धर्म है। देखो महात्मा रामचन्द्र ने सौतेली माता की आज्ञानुसार लक्ष्मी की दौलत को परित्याग कर बनके अपार दुःखों का सहन किया और धर्म का परित्याग नहीं किया। बेटा, धर्म शास्त्र में पिता के पश्चात् बड़े भाई ही को पिता कहा है। इस लिये तुम को उनकी सेवा करना उचित है। न कि व्यर्थ इस प्रकार का द्वेष।

पुत्र—माता जी, आप का कहना सत्य है। परन्तु बड़े भाई को भी तो छोटे भाई पर स्नेह और प्रेम करना चाहिये। वह तो इस पुत्र स्नेह को त्याग कर अभिमान में चूर हो लाल पीली आंखें दिखाते हैं। लुच्चे गुण्डों को नौकर रख कर मेरे पिटवाने का प्रबन्ध करते हैं। फिर मैंने भी यही सोच लिया है कि शट की भांति कार्य करना चाहिये। जैसा कि लिखा है कि "शठंप्रति शठं कुर्यात्" इस के उपरान्त माताजी! धन, पृथिवी, स्त्री के लिये सदा संग्राम होते रहे हैं, इन्हीं के लिये रक्त की नदियां बहती रही हैं। देखो प्राचीनकाल में युधिष्ठिर और दुर्य्योधन का वैमनस्य भी धन के कारण ही हुआ था, रावण और राम का विरोध सीता के अर्थ ही हुआ था। फिर धन ही के सब मित्र होते हैं। धन ही को सब प्रतिष्ठा करते हैं। जैसा किसी ने कहा है—

टका कर्त्ता टका हर्त्ता टका मोक्ष प्रदायका ।
टका सर्वत्र पूज्यन्ते विन टका टकटकायते ॥

माता जी—केवल उस कोठी की मुझ को बनावट पसन्द है।

गंगाबाई--यह सब सत्य है कि सारे संसार के झगड़े धन, स्त्री पर ही होते हैं, परन्तु इसमें विचार यह है कि न्याय के प्रतिकूल जो मनुष्य कार्य्य करते हैं उनकी संसारी जन निन्दा करते हैं और निन्दित जीने से मरना अच्छा है। क्योंकि मरण समय नाना प्रकार के द्रव्य, पशू, बग्घी, चुरुट, उत्तम महल, कोठा, बाग, बगीचे, मित्र आदि सब यहां ही रह जाते हैं। केवल एक धर्म्म ही साथ जाता है । इस लिये तुम इस घृणित कार्य करने का मन से विचार त्याग दो। क्योंकि कर्म्मों का फल प्रत्येक को भोगना पड़ता है तिस पर जो द्रव्यादि अन्याय से लेता है उसके खानेवाले मित्र आदि कुटुम्बी खा पीकर पृथक् होजाते हैं और दण्ड केवल करनेवाला ही पाता है। इस लिये तू धन के लिये अपने भ्राता के खून का प्यासा मत बन। मैं तेरे सत्य कहने से अत्यन्त प्रसन्न हुई, परन्तु बेटे! इस अधम विचार को तुम मन से बिदा कर दो। आज मैं तुम्हारे भाई से भी मिलूंगी फिर तुम से।

पुत्र—माता जी, यह ठीक है परन्तु मेरा मन भाई के अभिमान और अन्याय के कारण आप की अमृत भरी शिक्षा को ग्रहण नहीं करता। किन्तु मैं फिर भी आप की शिक्षा के अनुसार मन को समझाने का यत्न करूंगा। अच्छा, अब मैं जाता हूं और पैर छू चल दिया।

सेठानी के छोटे पुत्र के चले जाने के पश्चात् गंगाबाई ने दासी द्वारा केदारनाथ को बुलाया।

केदारनाथ—माता जी राम २।

गंगाबाई—आओ भाई प्रसन्न तो रहे ? बैठो।

केदारनाथ—ईश्वर तथा आप की कृपा से आनन्द से हूं।

गंगाबाई—बेटा, भाइयों में अनबन होने का कारण तुम स्पष्ट २ कह दो। तुमने बी. ए. पास किया है, श्रीमान् पण्डित भीमसेन जी तथा पण्डित बंशीधर जी से योग्य पुरुषों का सत्संग किया है। समाचारपत्र व इतिहासों का अवलोकन करते हो।

केदारनाथ—माता जी! पृथिवी गन्ध को छोड़ दे, जल निज रस को छोड़ दे, ज्योति रूप को छोड़ दे, चन्द्रमा ठण्डी किरणों को छोड़ दे तथापि मैं सत्य को किसी प्रकार नहीं त्यागूंगा, इस लिये मैं आप से स्पष्ट २ कहता हूं कि यह सारा झगड़ा कोठी के ऊपर है।

गंगाबाई—अरे केदार! क्या तूने यह नहीं सुना कि संसार के सारे मनुष्य मुहर्लिग के मार्ग से ही आयु व्यतीत करते हैं। फिर तेरे पढ़ने लिखने से क्या लाभ जब कि तू भी इन्हीं मार्ग में जा रहा है। देख लोभ के समान कोई शत्रु नहीं यह सब दुःखों की खान है, पाप की मूल है, प्राणों का हरने वाला है। फिर देखो वह तुम्हारा छोटा भाई है। तुम उस के पितावत् हो। तुम को स्वयं विचार कर योग्य मित्रों की सम्मति से इस घरेलू झगड़े को झटपट शान्त कर देना चाहिये। घर के शत्रु के समान कोई शत्रु नहीं, क्योंकि इधर उधर के बैरी ऐसे समय को पाकर शीघ्र अपना प्रयोजन निकाल घर का सत्यानाश करा देते हैं। शास्त्र में लिखा है कि कुल की रक्षा के लिये एक को ग्राम की भलाई के लिये कुल को, देश की भलाई के लिये ग्राम को आत्मा के लिये पृथ्वी को त्यागना उचित है।

केदारनाथ--माता जी ! अब जैसी आप की आज्ञा हो वही मैं करने को उद्यत हूं। परन्तु अगर उस को यही इच्छा थी तो मुझ से कहना न कि दूसरों से कहला कर मुझ को धमकाता वह स्वयं कहता तो मैं प्रसन्नता पूर्वक दे देता।

गंगाबाई-अच्छा मैं अभी तुम्हारे भाई को बुलवाती हूं और शीघ्र ही दास भेजकर बुलवाया।

जगन्नाथ—माता जी क्यों क्या आज्ञा ?

गंगाबाई—भाई बैठो। मैंने इस लिये बुलाया है कि तुम्हारे इस घरेलू झगड़े की अब शीघ्र निवृत्ति हो जानी अच्छी है।

जगन्नाथ—मेरी तो यही इच्छा है।

गंगाबाई—अच्छा जगन्नाथ ठीक सत्य २ बतला कि वह उत्तम कोठी कितने मूल्य की होगी।

जगन्नाथ—माता जी भ्राता जी से प्रथम पूछिये।

गंगाबाई—नहीं तुम्हीं बताओ।

जगन्नाथ—कम से कम २० हज़ार की।

गंगाबाई—अच्छा जगन्नाथ अगर तू मेरी एक बात मान ले तो इस की निवृत्ति हो सकी है।

जगन्नाथ—अवश्य २ मानूंगा।

गंगाबाई—भाई तू अपने बड़े भाई को ५ हज़ार नक़द और अपनी कोठी देदे।

जगन्नाथ–मुझ को सहर्ष स्वीकार है।

गंगाबाई–भाई तुम कहो।

केदारनाथ–मुझे आपकी आज्ञा में कभी इंकार होसक्ती है।

गंगाबाई–अरे जगन्नाथ! तूने अपने बड़े भाई का बड़ा अपमान तथा अपराध किया, इस लिये इनसे क्षमा मांग पुनः कभी ऐसा अनर्थ मत करना।

जगन्नाथ–अच्छा आप के ही सम्मुख भ्राता जी से क्षमा मांगता हूं और आज से कभी बिना इनकी आज्ञा के कोई कार्य न करूंगा। और साथ ही मेरी यह भी इच्छा है कि अब उस पिताजी की अनुपम कोठी को यही लें और मैं भी उसी में बैठा करूंगा।

केदारनाथ–भाई मैं सहर्ष तुम्हारे अपराध को क्षमा करता हूं और आज से ही पुत्रवत् मानूंगा और कोठी में सहर्ष बैठा करो जो तुमने मुझे पांच हज़ार रुपये दिये हैं उनको भी मैं तुम्हें ही वापिस करता हूं।

जगन्नाथ–बड़ी कृपा।

केदारनाथ–अच्छा माता जी अब मैं जाता हूं, जगन्नाथ तुम चलते हो?

जगन्नाथ–अभी चलता हूं।

दोनों पैर छू चल दिये। गंगाबाई वहां से उठ सेठानी जी के पास गईं और यह शुभ संवाद सुनाया जिसको सुन सेठानी

जी बड़ी प्रसन्नहुई और गंगाबाई का कोटिशः धन्यवाद दिया। दो चार दिवस रहने के उपरान्त गंगाबाई अपने गृह को गई।

हे यशोदा! इन सब बातों को जान तुमभी योग्य स्त्रियों का सत्संग कर प्रत्युपकार करने का स्वभाव बनाओ, इसके उपरांत कभी २ धन, अवस्था, विद्या समान न होने पर अन्य कारणों से भी मित्रता हो जाती है तो फिर योग्य पुरुष और सुयोग्य स्त्रियां अच्छे प्रकार से निर्वाह करती हैं जैसा कृष्ण महाराज का गुरुकुल में सुदामाजी से मित्रता होगई थी जिस का निर्वाह उन्होंने अच्छे प्रकार से धनादि देकर किया। जो मनुष्य और स्त्रियां ऐसा नहीं करतीं उनको भी नाना प्रकार के क्लेश उठाने पड़ते हैं। इसके लिये मैं राजा द्रुपद और द्रोणाचार्य का प्राचीन इतिहास सुनाती हूं। जो प्रत्येक स्त्री पुरुष के लिये विचारणीय है देख।

प्राचीन काल में भारद्वाज के पुत्र द्रोणाचार्य और राजा पृषत के पुत्र द्रुपद, ये दोनों बाल्यावस्था में महर्षि अग्नि वेष के यहां वेद विद्या और धनुर्विद्या सीखते थे। इस लिये इन दोनों में परस्पर गाढ़ मैत्री होगई थी और जब द्रुपद की शिक्षा समाप्त होगई और वह अपने गृह जाने लगे, तब द्रोणाचार्य से बिदा होते समय द्रुपद ने कहा-

द्रुपद-हे प्यारे मित्र द्रोण! मैं महानुभाव पिता का बड़ा प्यारा पुत्र हूं। सो मैं तुम से सत्य प्रतिज्ञा करता हूं कि जब पाञ्चालराज मुझको राज्य पर बैठावेंगे तब उस राज्य का तुम भोग करोगे। हे मित्र! मेरा भोग, ऐश्वर्य और सुख सब तुम्हारे हाथ रहेंगे। ऐसा कह वह अपने राज्य को चले गये। कुछ काल के व्यतीत होने पर द्रोणाचार्य के अश्वत्थामा नामक पुत्र हुआ। एकदिन वह बालेपन में गाय का दूध पीने के लिये

बहुत रोया। तब द्रोणाचार्य द्रुपद की पूर्व प्रतिज्ञा को स्मरण कर उनके पास जाकर मित्रता से बोले।

द्रोणाचार्य—हे पुरुष व्याघ्र! मैं तुम्हारा मित्र हूं। यह सुन ऐश्वर्य्य से उन्मत्त क्रोध से जीभ और भौंहें बिगाड़ आंखें लाल कर द्रुपद बोले।

द्रुपद—हे विप्र! तुम्हारी बुद्धि नहीं सुधरी। क्योंकि तुमने एकाएक मुझसे कहा, कि मैं तुम्हारा मित्र हूं। हे स्वल्पबुद्धे! अनन्त ऐश्वर्य्य युक्त भूपालों की कभी ऐसे श्री वर्जित और निर्धन जनों से मित्रता नहीं होती। काल सब वस्तुओं को तोड़ फोड़ देता है। उससे मित्रता भी टूट जाती है। पहले समान होने से मित्रता हुई तो थी पर भूमण्डल में मित्रता कभी बनी नहीं रहती, क्योंकि काल से वह दूर हो जाती है, अथवा क्रोधसे वह जड़ सहित उखड़ जाती है। सो तुम उस पुरानी मित्रता की पूजा मत करो। ऐसा न समझो कि वह अभी तक बनी है। हे द्विजों में श्रेष्ठ जन! अवश्यही किसी प्रयोजन से तुम से मेरी मित्रता हुई थी। देखो दरिद्री कभी धनी का मित्र नहीं हो सकता, मूर्ख पंडित से, वीर्य वर्जित जन कभी वीर का मित्र नहीं हो सक्ता। फिर तुम क्यों पहले की मित्रता चाहते हो? जिनके धन, बल समान होते हैं उन्हीं की मित्रता हो सक्ती है।

प्रतापी भारद्वाज पुत्र द्रोणाचार्य द्रुपद की यह सब बातें सुन क्रोध से जल हस्तिनापुर नामक कौरवों के नगर को गये, और वहां भीष्म के कहने से कौरव कुमारों को अस्त्रविद्या की यथावत् शिक्षा करने लगे। कुछ काल के पश्चात् जब सब कुमारों की शिक्षा समाप्त होगई, तब द्रोणाचार्य्य गुरु दक्षिणा के लिये आज्ञा कर बोले कि तुम लड़ कर पाञ्चालराज द्रुपद

को पकड़ कर मेरे पास लाओ क्योंकि उसने मित्रता की सत्य प्रतिज्ञा भंग की है। ऐसा करनेसे ही तुम अच्छी दक्षिणा दोगे ऐसा सुन कर सब शिष्यगण द्रोणाचार्य्य के साथ रथों पर चढ़ पांञ्चालदेश को गये। तब पाण्डु पुत्र अर्जुन द्रोणाचार्य्य के प्रिय करने के लिये अपने शौर्य्य को प्रकट कर राजा द्रुपद को शीघ्रता से पकड़ आचार्य के सामने लाया द्रुपद को देख उनके अभिमानयुक्त वचनों को स्मरण कर द्रोणाचार्य्य बोले।

द्रोणाचार्य्य—हे द्रुपद! मैंने बल पूर्वक तुम्हारे राज्य को मथडाला, परन्तु हे श्रेष्ठ जन! मुझ से और तुम से महर्षि अग्निवेष के यहां जो मित्रता हुई थी उसका मुझको स्मरण है! और मेरे तुम्हारे पास आने पर जो तुमने अभिमान पूर्वक लाञ्छन करके मुझको अपमानित किया, परन्तु मैं उस पर ध्यान न देकर जीते हुये इस राज्य का आधा भाग देता हूं। हे राजन्? श्रेष्ठ जन कदापि ऐसा घृणित कार्य नहीं करते, जैसा कि तुमने किया।

द्रुपद—हे ब्रह्म! मैं अपने पूर्व अपराधों की क्षमा चाह कर अब सदास्थायी मित्रता की प्रतिज्ञा करता हूं। हे यशोदा! तुम कदापि ऐसे घृणित कार्य मत करो।

सुशीला—देवी जी! अब सन्ध्योपासनका समय होगया है, इस लिये समाप्त कीजिये।

प्रियंवदा—अच्छा मैं भी सन्ध्या करूंगी।

सुशीला—चलिये, आप भी आज मेरी यज्ञशाला की वाटिका में ही सन्ध्या कर पुनः भोजन कर यहां आजावें।

प्रियंवदा—अच्छा चलो। इतना कह सब चलदीं और वहां जाकर सबने वाटिका में सन्ध्या हवन किया, पश्चात् भोजन कर शयनार्थ अपने २ स्थानों को गईं।

सप्तम-परिच्छेद

प्रातःकाल नैमित्तिक कर्म से निवृत्त होकर यशोदा का मुशीला, जयचन्द्र कृष्णचन्द्र वा बहुओं सहित रामबाग़में पधारना।

प्रातःकाल सब रामबाग़ में पहुंच यथा योग्य के पश्चात् सब बैठ गईं। और यथेष्ट वार्त्तालाप होने के उपरान्त यशोदा ने कहा-देवी जी! शेष विषय को प्रारम्भ कीजिये।

प्रियंवदा-प्रिय सखियो! बहुधा गृह कार्य ऊपरी स्त्री पुरुषों अर्थात् भृत्यों द्वारा ही चलते हैं, अतएव आज मैं आप सब को यह बतलाती हूं कि सेवकों की किस प्रकार परीक्षा करनी चाहिये और उनको किस प्रकार रखना चाहिये।

देखो जिस प्रकार धातु घिसने, तपाने, छेदने और पीटने आदि से अच्छी बुरी जानी जाती है। उसी प्रकार कर्म, गुण, शील, और सहवास से स्त्री पुरुषों की परीक्षा होती है जो भृत्य निरालस होकर मन वच कर्म से कार्य करता हो और सदा शुद्ध कोमल वाणी बोलता हो और अन्याय में सम्मिलित न हो, स्वामी की वाणी में कभी शंका न करे और न स्वामी

की न्यूनता को किसी पर प्रकट करे, इसके उपरान्त उत्तम २ कार्य्यों में शीघ्रता और निन्दित कार्य्यों को विलम्ब से और स्वामी के सम्बन्धियों को स्वामी के समान समझ उनकी आज्ञा पालन में यथावत् उद्यत रहे। अन्य के अधिकार की इच्छा न करे, रात्रि दिन वस्तु धारण किये रहे, मासिक से अधिक व्यय न करे, स्वामी के विरुद्ध जो बात सुने उसको तुरन्त एकान्त में कहदे, उसको उत्तम भृत्य जानना चाहिये। जो लोभी, भीरु, प्रत्यक्ष में प्रियवादी और व्यसनी अर्थात् मादरा पानादि में प्रवृत्त हो, प्रति समय दुखी घूस लेने में लिप्त, दम्भी, असत्यभाषी, मर्मभेदी वाक्य का कहने वाला, अति क्रोधी, विना विचारे कार्य करने वाला और शठ हो वह सेवक अच्छा नहीं होगा। मासिक योग्यता के अनुसार उत्तम, मध्यम, निकृष्ट देना चाहिये, इसके अतिरिक्त जो स्त्री और पुरुष उत्तमता से कार्य करें और आपत्ति के समय स्वामी का न त्यागें उसकी मासिक वृद्धि और प्रशंसा करना चाहिये। वर्ष के अन्त पर १५ दिन की छुट्टी और यदि रोग होतो विशेष कर छुट्टी तथा धनादि से सहायता करनी चाहिये। और यदि वह स्वामी के कार्य में मारा जाय तो उसके स्थान पर उसके पुत्रादि को नियुक्त करे। अब मैं तुमको श्रेष्ठ और शठ सेवक का दृष्टान्त सुनाती हूं।

जयचन्द्र—अति कृपा होगी।

प्रियंवदा—सुनिये।

सुशील मुनीम।

गोयनपुर शहर में एक बैजनाथ नामी प्रसिद्ध धर्मात्मा सुशील और सदाचारी सेठ निवास करते थे। ईश्वर की कृपा

से उनके अगम्य धन और ८-१० गांवथे और उनके बुद्धिमान सुयोग्य ४ पुत्र थे। कुछ काल के पश्चात् सेठ बैजनाथ का अन्त हुआ, तब लालाजी के बड़े दो पुत्र बाबू मनमोहनसहाय और बाबू बीरेन्द्रसहाय अपने छोटे भाइयों तथा माता का पालन पोषण और ज़िमींदारी का काम मुनीम राधेकिशन के सहारे करने लगे। इस प्रकार कार्य करते २ बहुत दिवस व्यतीत होनेपर उस शहरमें मलेरिया रोग फैला, जिसमें सेठ जी के बड़े दोनों पुत्र भी काल करालगति को प्राप्त हुए। जिस का शोक सारे नगर में फैलगया। बिचारा सेठानी जी अपनी सुयोग्य बहुओं की वैधव्यावस्था देख बहुत दुःखित हुईं पर क्या किया जाय होनहार बलवान् होता है। जब पुत्रों का अन्त्येष्टि संस्कार होगया और सेठानी जी को कुछ शांति प्राप्त हुई, तब एक दिन मुनीम राधाकिशन भीतर गये और ज़िमींदारी के कार्य करने के लिये सेठानी जी से कुछ उपाय पूंछा।

सेठानी—अजी मुनीम जी! मैं तो आपके सहारे हूं, भला आप को छोड़कर कोन बाहर भीतर के कार्यों को करायेगा. आप जैसा उचितसमझें वैसा कर, इतना कह रुदन करनेलगीं।

मुनीम—सेठानी जी, अब रोने से कार्य न बनेगा। शांति को धारण करो। सुनो मैं पहले यहां १६ वर्ष की अवस्था में आया, तब सेठ जी ने मुझको पढ़ाया, खवाया, कपड़े आदि से सहायता कर इस दशा में कर दिया। इस घर का नमक मेरी नस२में भिदा हुआ है, इस लिये तुम्हारे काम को मैं अपना ही समझता हूं, नहीं तो इस समय चाहूं तो हज़ारों नहीं बल्कि लाखों अलग करलूं, पर मैं ऐसा करना पाप समझता हूं। क्योंकि शास्त्र में लिखा है कि जो विश्वासघात

करता है उसको इस जन्म में अनेकों दुःख भोगने पड़ते हैं और मरने पर उसके माँस को कौए और गिद्ध भी नहीं खाते इस लिये अब मेरी यह इच्छा है कि लोकेन्द्र और महेन्द्र को हाई स्कूल में भर्ती करादूं क्योंकि वहाँ आनन्द और सुरेन्द्र भी पढ़ते हैं।

सेठानी—मुनीम जी आपकी परीक्षा का यही समय आया है, क्योंकि कहा है—"धीरज धर्म मित्र अरु नारी। आपत्काल परखिये चारी"। आपकी समझ में जैसा उचित हो वैसा कीजिये। मैं आप के कार्य से बड़ी प्रसन्न हूं।

मुनीम—अब मैं बाहर जाता हूं, कल इन दोनों को अवश्य भरती कराऊंगा। इतना कह वह बाहर गये और सम्पूर्ण कार्यों को देख भाल करने लगे। जो चीज़ें व्यर्थ थीं उनको बन्द कर रखवा दिया, हिसाब, लेन देन, व्यौपार और जिमीदारी का कार्य भी स्वयं करने लगे। और दूसरे दिन ही सेठ-पौत्रों को स्कूल में भर्ती करा दिया।

इस प्रकार योग्यता से कार्य करते करते ५ वर्ष बीतगये ६ वर्ष के दूसरे मास में एक दिन दिन के १२ बजे मुनीम जी अपने गृह को गये। उसी समय ५०-६० मनुष्य हथियार लिये हुये घुस आये, घर में शोर मचने लग गया, सब नौकर चाकर इधर उधर भागने लगे, इतने में यह भीषण सूचना किसी ने मुनीम जी को जा सुनाई। विचारे सुनते ही तत्काल पुलिस दारोगा के पास गये और सब वृत्तान्त कहा, जिसको सुन वह शीघ्रही दल बल समेत घटनास्थल पर आगये। ईश्वर की कृपा और कोतवाल साहब के अनुग्रह से सेठ जी के गृह पर सब कुशलता रही। जानमाल दोनों ही बच गये। डाकू पकड़े गये। सेठानी जी ने मुनीम जी वा कोतवाल साहब तथा ईश्वर

को धन्यवाद दिया। पुनः सब कार्य भले प्रकार होने लगे, आनन्द की वर्षा होने लगी। उधर आनन्द और सुरेन्द्र ने एफ. ए. पास कर लिया, तब मुनीम जी ने दो वर्ष में इन दोनों को बी. ए. पास करा स्कूल से बुला लिया और जब उनको गृह पर आये एक मास व्यतीत होगया, तब एक दिन मुनीम जी सेठानी जी के पास गये और यथायोग्य कर बैठ जाने के पश्चात् कहा—

मुनीम—सेठानी जी! ईश्वर की कृपा से आनन्द और सुरेन्द्र दोनों विद्वान् होगये हैं अब मेरी यह इच्छा है कि मैं एक बड़ा उत्सव करूं। जिसमें शहर के प्रत्येक मनुष्य को बुलावा दिया जाय, तत्पश्चात् मैं इन दोनों को सब धन तथा ज़मींदारी का कार्य सौंप दूं। पश्चात् इस प्रसन्नता में रात्रि को नगर के सब स्त्री पुरुषों को निमन्त्रण दे भोजन कराये जांय।

सेठानी—मेरी भी यही सम्मति है। परन्तु यह तो कहिये कि लोकेन्द्र व महेन्द्र क्या पढ़ते हैं। और आप यदि श्रेष्ठ समझें तो दो दिन के लिये उनको भी बुलालें; तो हम भी देख लेंगे। परन्तु यह कार्य अब शीघ्र कीजिये।

मुनीम—हां मैं अवश्य बुलाऊँगा तथा यह भी शीघ्र ही करूँगा। अब मैं जाता हूं।

मुनीम जी ने दूसरे ही दिन से उत्सव की तैय्यारियां करनी आरम्भ कीं, और सेठ बैजनाथ के पौत्रों को भी पत्र डाल बुलाया। पश्चात् नियत तिथि पर बड़े समारोह से उत्सव हुआ। मुनीम जी ने नागरिक स्त्री पुरुषों के सम्मुख कोष की तालियां तथा सब ज़मींदारी के काग़ज़ों को सौंप दिया जिसमें ६ लाख का मुनाफ़ा दिखाया गया। तब आनन्दसहाय सुरेन्द्रसहाय ने मुनीम जी को कोटिशः धन्यवाद देने के साथ अपने मुनीम

राधाकिशन की कार्यवाही (जो उन्हों ने विपत्ति के समय की) वर्णन कर कहा कि मुनीम हो तो ऐसा हो, जिन्हों ने हमारे गिरते समय में तन मन से दृढ़ता और उत्साह से कार्यों को कर, घर को उन्नति के शिखर पर पहुंचाया । हम को अपने पुत्रों की भांति शिक्षा कराई तथा हमारी माता को प्रत्येक प्रकार से धीरज दे सुख पहुंचाया। इस लिये आज हम अपने मुनीम जी को धन्यवाद देकर एक लाख रुपये की जायदाद पुरस्कार में देते हैं और हम दोनों भाई अपने जीवन पर्यन्त इनकी आज्ञा पालने में तत्पर रहेंगे। ईश्वर सब को ऐसे ही योग्य अनुचर दे। पश्चात् सभा विसर्जन हुई ।

सुशीला दासी ।

कर्नाल नगर में शूरसिंह और वीरसिंह ये दो भाई रहते थे. कुछ काल के पश्चात् ये दोनों भाई ग़रीब होगये और लकड़ी बेंच २ कर अपना गुज़ारा करने लगे । एक दिन वीरसिंह जंगल में लकड़ियां काटने के लिये गया, वहीं पर डाकुओं का गुप्त एक बड़ा मकान था। दैवयोग से उसी समय डाकू समुदाय सहित शहर से आ रहे थे । वीरसिंह उन को देख समीपवर्त्ती ऊँचे बरगद पर चढ़ गया । इधर डाकू अपने मकान के पास आये और बाहर से कल घुमा. द्वार खोल, भीतर जा, लूट का धन रख, बाहर आ, द्वार बन्द कर चले गये । उधर वीरसिंह यह सब देखता रहा । पुनः डाकुओं के चले जाने पर वृक्ष से उतर गृह गया और चार खच्चर ला, उसी रीति से द्वार खोल, खच्चरों में रुपये अशर्फी, मोती, मूंगा, मणि, नीलम, हीरा, जवाहर आदि खूब भर, बाहर आ, द्वार बन्द कर पुनः ऊपर से खच्चरों पर लकड़ी भर गृह को लेगया ।

इसकी स्त्री बड़ी सीधी और भोली थी, अतएव वीरसिंह ने गृह में उचित स्थान पर धनादि रख स्त्री से कहा कि देख यह रक्खा हुआ धन किसी को मत बतलाना। यह सुन उत्तर में स्त्री ने कहा कि मैं कभी न बतलाऊंगी। इतने में शूरसिंह की स्त्री अपने गृह से किसी कार्य वश आई। दैव योग से शीघ्रता के कारण वीरसिंह के रखने में एक हीरे की कनी पड़ी रह गई जिस को वह अवसर पा उठा लेगई और रात्रि को शूरसिंह को दिखाकर कहा कि तुम्हारे भाई कहीं से माया ले आये हैं, उनसे कहो कि हमें भी आधी बांट दें। शूरसिंह इस बात को सुन बड़े प्रसन्न हुये और प्रातः वीरसिंह से सब हाल कहा जिसको सुन वीरसिंह ने कहा कि:-

वीरसिंह-भाई! जहां से मैं लाया हूं वह स्थान मैं तुम को भी चलो बता दूं। यह कह दोनों भाई खच्चर ले चले और वहां जा वीरसिंह ने पूर्वानुसार द्वार खोल बंद करने की रीति बताकर कहा, कि मैं जाता हूं और तुम शीघ्र घर बंद कर आ जाना क्योंकि अब डाकुओं के आने का समय होता आता है।

ऐसा कह वीरसिंह गृह को चला आया और उधर शूरसिंह भर कर भीतर से निकले, त्योंही डाकू आगये और शूरसिंह को धन ले जाते देख तत्काल मार, धन छीन द्वार बन्द कर चले गये।

इधर जब सायंकाल हो गया, और शूरसिंह गृह न आये तब उनकी स्त्री ने वीरसिंह से कहा कि तुम उनको कहां पहुंचा आये जो अब तक लौटकर नहीं आये, यह सुन वीरसिंह ने कहा। मैं कल सवेरे ही देखने जाऊंगा।

प्रातः वीरसिंह वहां गये और उस घटना को देख शोकान्वित हो शीघ्र उनको गाड़ खच्चरों में धन भर गृह ला सब

वृत्त को कह शूरसिंह की स्त्री को दे दिया। अब पुनः धनकी बढ़ती होने से मकान, बाग़ बग़ीचे, दास दासियें आदि सर्व प्रकार से राजसी ठाठ होगये।

उधर डाकू भी आये और अपनी सम्पत्ति को चोरी हुई जान बड़ा आश्चर्य माना, तब उन सर्व डाकुओं ने सर्व सम्मति से उनतालिस बड़े पीपे बनवाये (जिन में एक मनुष्य अच्छी तरह से बैठ सके) जिनमें गुप्त रीति से छेद भी रक्खे, अब उन पीपों को बड़ी गाड़ी में रख वीरसिंह की ही ओर से व्योपारियों की सी आवाज़ देते हुये निकले। भाग्यवश वीरसिंह के एक नौकर ने उनको खड़ा कर सब हाल पूछ वीरसिंह को सूचना दी. वीरसिंह ने उनको अपने अति निकट मकान में ठहरा खान पानादि का प्रबन्ध कर दिया। अब जब सायंकाल के आठ बजे, तब डाकुओं के सरदार गदाधरसिंह ने अपने साथियों को उन पीपों में बिठा बन्द कर वीरसिंह से आकर कहा।

डाकू—अजी महाराज! वहां जो मेरे पास घी के पीपे रक्खे हैं, उनको आप अपने पास रखवालें, क्योंकि मैं बाहर रहूंगा तो माल की हज़ार जोखम होती है।

वीरसिंह—अच्छा मैं अभी रखवाये लेता हूँ।

यह कह वीरसिंह ने दासी मोहनी के शयनागार में रखवा दिये। रात के दश बजे स्त्री पुरुष नौकर दासी आदि सभी अपने २ स्थानों पर जा सोये। इधर मोहनी भी अपनी सेठानी के सम्पूर्ण कार्यों से निवट अपने स्थान पर सोने को गई, परन्तु ज्योंही वह खाट पर लेटी त्योंही उस को रक्खे हुये पीपों में परस्पर कुछ आवाज़ सुनाई दी। पुनः मोहनी ने अच्छी

तरह उन पीपों में मनुष्य होने का निश्चय कर वीरसिंह की स्त्री व भावज कमला और चपला से कहा।

मोहनी—श्रीमती कमलादेवी जी! मेरे शयन स्थान में जो सेठजी ने उनतालीस पीपे घी के रखवा दिये हैं। उनमें घी नहीं वरन् मनुष्य हैं और मुझे अनुमान से प्रतीत होता है कि यह सब डाकू हैं। इन्हीं में से एक बाहर ठहरा हुआ है।

चपला—अरी यह कब और कहां से आकर यहाँ ठहरे हैं।

मोहनी—आज सायंकाल पांच बजे के समय जो बाहर आदमी सो रहा है। वह गाड़ी में इन पीपों को रख कर घी बेचने के मिस से आया है। सेठ जी ने शाम होजाने से कहा कि सवेरे घी तुलावेंगे रातभर यहीं ठहरो।

कमला—अरी मोहनी! अब यह बता कि इनसे हमारा जान और माल क्योंकर बच सकता है।

मोहनी—मेरी सम्मति में तो यह है कि ४ कड़ाव खूब भर कर तेल औटाऊं और वह खौलता हुआ तेल उन पीपों में डाल दूं जिससे वह उन्हीं में जल कर मरजावेंगे।

कमला—यह बहुत ही ठीक है। परन्तु यह काम अब तू शीघ्र कर और जब गर्म तेल डाल चुके तो तू मुझे भी सूचना देना।

मोहनी—हां मैं अब जाती हूं। और वहां चल मोहनी ने अपने वासस्थान के समीप ही तेल गर्म कर शीघ्र उन पीपों में बहुतायत से डाल कमला को जाकर सूचना दी और एक तलवार ले पुनः अपनी जगह जाकर बैठगई। इतने में डाकू सरदार भी अपने स्थान से उठ वीरसिंह के स्थान को चला

और प्रथम स्त्रियों को मारने के लिये ऊपर चढ़ गया, उस समय कमला और चपला दोनों ही जग रही थीं। इस लिये वह उनको सचेत देख आगे बढ़ गया। सरदार मोहनी के कमरे को वीरसिंह का शयन स्थान जान कमरे के भीतर घुस गया। वहां अपने सब पीपों को रखा हुआ देख बहुत प्रसन्न हो पीपों के खोलने के लिये ज्योंही झुका त्योंही मोहनी ने तलवार से सरदार की गर्दन पर प्रहार किया।

तलवार के लगते ही सरदार का शिर धड़से अलग हो-गया। पुनः मोहनी सफल मनोरथ देख शान्तिपूर्वक सो गई। प्रातः यह हाल वीरसिंह को ज्ञात हुआ उन्होंने सरकार को सूचना दी। सरकार ने भी बुद्धिमती दासी मोहनी को धन्य-वाद दिया और सेठानी कमला और चपला ने मोहनी के इस कार्य से प्रसन्न हो एक बहु मूल्य रत्नजड़ित मोतियों का हार और पांच सौ रुपये इनाम दिये। और उस दिन से उसको दासत्व से छुटा दिया।

कृतघ्नी सेवक।

किसी नगर में लाला धनपतराय नामी प्रसिद्ध सेठ निवास करते थे। जिनके यहां जिमीदारी के अतिरिक्त लेन देन और व्यापार भी होता था। सैंकड़ों आदमी उनके यहां काम करते थे, रथ, घोड़ा, बग्घी, चुरट आदि सभी कुछ मौजूद थे। किसी समय में एक साईस की आवश्यकता हुई, सेठजी के मित्र ला० झुन्नालाल ने एक साईस को अपनी चिट्ठी लिखकर सेठजी के पास भेजा।

सेठजी—क्या तुम नौकरी करना चाहते हो।

साईस—जी हां।

सेठजी—क्या तनख़्वाह लोगे।

साईस—महाराज मैं ८) से कम न लूंगा। क्यों मैं घोड़ों की सब विद्या और उनके रोगों की चिकित्सा को अच्छे प्रकार जानता हूं।

सेठजी—यह तो हमने जाना परन्तु काम क्या २ करोगे।

साईस—घोड़े का कुल काम और सवारी कराऊंगा। परन्तु घास नहीं लाऊंगा। सेठजी ने मनही मन प्रसन्न हो कहा कि आदमी चतुर है। और प्रत्यक्ष में कहा।

सेठजी—भाई ६) रुपया लेलो।

साईस—नहीं सेठजी ८) से कभी कम न लूंगा।

सेठजी—अच्छा आठ ही तुम को देंगे। जाओ काम लेलो। साईस ने दूसरे से काम ले लिया और बड़ी बुद्धिमानी से अपना कार्य करने लगा। सेठजी उसके कार्य से मनही मन बड़े प्रसन्न थे। एकदिन सेठ पुत्र वायु सेवन के लिये घोड़े पर सवार हो साईस के साथ चले, शहर से थोड़ी दूर जाने पर घोड़ा बिगड़ा, सेठ पुत्रने बहुतेरा रोका परन्तु घोड़ा न रुका। ऐसी दशा में सेठ पुत्र ने साईस को घोड़ा पकड़ने तथा अपने बचाव के लिये बहुतेरा बुलाया परंतु वह दूर खड़ा रहा। इतने में घोड़े की एक ऐसी चपेट लगी जिस से सेठ पुत्र उलटे मुंह नीचे गिर पड़े। इधर इस दृश्य को देख इधर उधर के बहुत से मनुष्य इकट्ठे हो गये। उन्होंने ज्यों त्यों सेठ पुत्र को उठा घर पहुंचाया। यह वृत्तांत जब सेठ जी ने जाना, तब उन्हों ने साईस को बुला कर कहा।

सेठजी—क्यों रामप्रसाद जब घोड़ा बिगड़ा, और लड़का गिर पड़ा तब भी तुमसे न उठाया गया।

साईस—सेठजी आप मुझ पर ऐसे क्यों क्रोधित होते हैं। जब मैंने आप के यहां नौकरी की थी, उस समय मैंने यह नहीं ठहराया था, कि जब लाला गिरेंगे तब मैं ही संभालूंगा।

यह उत्तर सुन सेठजी को बड़ा क्रोध आया और उन्होंने शीघ्र ही उसका शेष वेतन दे उस को अपने यहांसे पृथक् कर दिया। प्रिय यशोदा, ऐसे निठुर उत्तर देनेवाले दास दासियों को रखने से नाना प्रकार की हानि होती है। इस लिये ऐसे दास दासियों को कदापि न रक्खो। इस के उपरान्त स्वामी को सब के साथ मीठे वचन क्षमा और प्रेम से वर्ताव कर अन्न, जल, फल, सुन्दर वस्त्र, सवारी और आभूषणों से सत्कार करना योग्य है। क्योंकि सेवक अपमान से शत्रु हो जाते हैं। मान से प्रसन्न होते हैं, मीठे वचनों से शांत होते हैं। जिस स्थान पर अनेक काम हों, वहां योग्यता के अनुसार प्रत्येक अलग २ स्त्री वा पुरुषों को नियुक्त करना चाहिये और उन की देख भाल को सर्व गुण सम्पन्न दृष्टा नियत करना योग्यहै।

कोषाध्यक्ष—जिसके प्राण धन में हों, चतुर बुद्धिमान हो।

वस्त्राधिपति—जिस को रेशमादि का अच्छे प्रकार ज्ञान हो मूल्य आदि को जानता हो और उनके ठीक रखने की क्रिया को जानता हो।

धान्यपति—अन्न की शुद्धि (छांटन) अन्य देशों, अपने देश की उत्पत्ति और भाव को जाने।

पाकनायक—शुद्धि और अशुद्धि का ज्ञान रस के संयोग वियोग की क्रिया में कुशल, द्रव्य के गुण का जानने वाला।

दानाध्यक्ष–दान शील हो लोभी आलसी न हो, दयालु कोमल वचन कहने वाला, पात्र का ज्ञाता, आदर का करने वाला हो।

मंत्री–नीति में जो कुशल हो। पंडित–जो धर्म तत्व का ज्ञाता हो, प्राड्विवाक (वकील) लोक और शास्त्र की रीति को जाने अमात्य–देश काल का ज्ञात हो। सुमंत्र–जो आय और व्यय का ज्ञात हो, दूत इशारों और नेत्र से इच्छा का जानने वाला, स्मृतिमान, देश काल का ज्ञाता, भय रहित, धैर्य्य से कहने वाला हो।

स्त्रियों में आने जाने योग्य वृद्ध, सुशील, विश्वास के योग्य सदाचार में तत्पर स्त्री वा पुरुष वा नपुंसक को नियत करे। हे यशोदा, और प्रिय पुत्रो ! तुम वेदनिन्दक वेदविरुद्ध आचरण करने वाले, मिथ्या भाषी, हठी, दुराग्रही, अभिमानी, अर्थात् आप जाने नहीं, औरों का कहा माने नहीं, कुतर्की, व्यर्थ बकने वाले, जैसे हम ब्रह्म हैं जगत् मिथ्या है इत्यादि संड मुसंडे अपने को बाबा, फ़क़ीर कहाने वाले जो गलियों में अनेक प्रकार की सदा या आवाज़ें महांनों लगाते हुए अनेकों ढोंग रचते हैं। जैसे—

"राम के नाम पर चुटकी दिवाय दे बच्चा"।

"जो देगा उसी से लेंगे"।

"हिन्दू को काशी मुसल्मान को मक्का। राजनपुर के बाग में कुँआ बनाय दे पक्का"।

"राधे २ बोल तेरा पड़ा रहेगा ढोल"।

"राम २ लड्डू गोपाल नाम खीर और केशव नाम मेसिरी तू घोर घोर पी"।

"याद रख भूल मत पल २ का लेखा लिया जायगा"।

"काली कलकत्ते वाली जिसका वचन न जावे खाली"।

"माया मरी न मन मरे मर २ गये शरीर।

आशा तृष्णा ना मरी सु कह गये दास कबीर"।

"साईं के दरबार में कमी काहू की नाहिं।

बन्दा मौज न पावहीं चूक चाकरी माहिं"॥

"रामा रामा रट नहीं यम पकड़ेंगे घट"।

"ऐसे पूरण ब्रह्म हो अलख तुम्हारा नाम।

ऐसे घट में विराजियो जो पूरण होजाय काम"।

"जती सती को भेज दे नहीं पैसे से काम"॥

"धर्म के बेटे भ्रमते फिरते चिन्ता क्यों नहिं करते हो"।

"फटा पुराना वस्त्र मांगें और तांबे का पैसा।

पैसा दोगे सदा फलोगे बिना दिया नहिं मिलता"॥

"अग्नि पलीता राज दण्ड चोर मूस ले जाता है।

सब दण्ड यह प्राणी सहे हरनाम कठिन होजाता है"॥

"ईश्वर के नाम पर दे दे, दे दे, बच्चा दे दे, देख हाथ का रक्खा न मिलेगा दे दे, बच्चा दे दे, बच्चा ईश्वर तेरा भला करेंगे" ॥

"चख डाल माल धन को कौड़ी न रख कफ़न को।
जिसने दिया है तन को देगा वही कफ़न को" ॥

इसी प्रकार अनेकों दोहे मसले पढ़ २ गा २ कर कम से कम रुपया बारह आना लेजाते हैं। कोई २ छोटी लड़कियों को साथ लेकर मांगते फिरते हैं कि बाबा इसका विवाह करादे. कोई २ आदमी बड़ी भयानक सूरत बना रोते चिल्लाते भले आदमियों के पास जा उनसे कहते हैं कि फलां दरवाज़े पर मेरा भाई मरगया है। मेरे पास कफ़न नहीं है। बाबा हैरान कर मालिक के नाम पर दे। इसी प्रकार बहुधा स्त्रियां अनेक प्रपंचों से भोली भाली अबलाओं को ठगती हैं। ऐसे स्त्री और पुरुषों का वाणी मात्र से भी सत्कार न करे. क्योंकि इनका सत्कार करने से ये वृद्धि को पाकर संसार को अधर्म युक्त करते हैं। और ऐसे अज्ञानियों को दान देने से दाता अधोगति को प्राप्त होता है। इनकी देखा देखी एक तिहाई भारतवासी भिखमँगे बन गये. अतएव यह दान नहीं वरन देश को हानि पहुंचानी है। इस के अतिरिक्त जो दान के पात्र हैं. वह विमुख रहजाते हैं जैसा कि अनाथ, रोगी, दुःखी. इनको कोई नहीं पूछता। और यह चिल्ला २ कर प्राणों को दे देते हैं। इसी लिये प्रिय यशोदा! देख भाल कर दान करो। इसके अतिरिक्त पशु और पक्षियों से नाना प्रकार के गुण ग्रहण करने चाहियें। जैसा कि चाणक्य ने लिखा है सिंह. बगुले से एक २ कुक्कुट से ४ कौवे से ५ कुत्ते से ६ गदहे से ३ गुण सीखना उचित है।

सुशीला—वह कौन २ से गुण हैं ?

प्रियंवदा—कार्य छोटा हो या बड़ा जिसको करना हो उस को सब प्रकार से करे। इस एक बात को सिंह से। इन्द्रियों को संयम करके देश और काल व बल को समझ कर कार्य करे यह बगुले से। समय पर जागना, रण में उद्यत रहना, बन्धुओं को उनका भाग देना, भोग करना, यह चारों कुक्कुट से। छिपकर प्रसंग करना, धैर्य्य संग्रह करना, सविधान रहना, शीघ्र किसी पर विश्वास न करना, यह पांचों कौवे से। बहुत खाने की शक्ति होने पर भी थोड़े में संतुष्ट होना, गाढ़ निद्रा रहने भी झट पट उठना, स्वामी की भक्ति, शूरता, यह छः कुत्ते से। अत्यन्त थक जाने पर भी थोड़े २ कार्य करते रहना, शीत, उष्ण, पर दृष्टि न करना, सदा संतुष्ट होकर विचरना, इन तीनों को गदहे से सीखना उचित है। हे यशोदा ! अब मैं उपदेश को समाप्त करती हूं। इतने में मनोरमा आगई।

मनोरमा—श्रीमती आती हैं और ज्वालादेवी ने आकर सब को नमस्ते की।

यशोदा—प्रिय बहन, बैठो देवी प्रियंवदा ने अपने ज्ञान-रूपी उपदेश से मेरे अज्ञान को दूर कर दिया। मैं इनका धन्यवाद देती हूं और विशेष कर तुम्हारा। क्योंकि तुम्हारे ही कारण से सर्व सुखों की प्राप्ति हुई।

ज्वालादेवी—अच्छा हुआ कि देवी जी का सदोपदेश आप सबों की समझ में आगया। उस पर चलने से अवश्य सर्व क्लेश दूर होजायँगे। अब आपको योग्य है कि देवी जी के कथनानुकूल गृह प्रबन्धादि कर बहुओं, पुत्रों में ऐक्यता का बीज बो, प्रेम रूपी अमृत की वर्षा कर सुख उठाओ। मैं इस प्रसन्नता में ५०० मुद्रा परोपकारी कार्यों के लिये दान देती हूं।

यशोदा—आप इनमें मेरे भी ६०० रुपये सम्मिलित कीजिये और आप ही विविध परोपकारी संस्थाओं को भेजदें।

ज्वालादेवी—बहुत अच्छा धन्यवाद है परन्तु अब सूची बनानेका समय नहीं क्योंकि भोजन बेला होरही है-अतः अब तो आप सब भोजनों को चलें, फिर अवकाश के समय यह होगा।

इसके बाद सब भोजनों को चली गईं एवं भोजनोपरांत विश्रामार्थ अपने २ स्थानों पर गईं।

२ बजे के पश्चात् ज्वालादेवी यशोदा, सुशीला, गंगादेवी, जयदेवी का रामबाग में जाना।

वहां यथायोग्य के पश्चात् सब बैठ गईं।

ज्वालादेवी—प्रिय प्रियंवदा जी! आज तो आप किसी दूसरे देश का वृत्त सुनावें।

प्रियंवदा—किस देश का सुनाऊं?

ज्वालादेवी—आप तो लंका गई हैं न?

प्रियंवदा—लंका तो मैं पारसाल हो गई थी।

ज्वालादेवी—अच्छा तो प्रथम लंका का ही सुनाइये।

प्रियंवदा—सुनिये। प्रथम मद्रास से नीलगिरी पर्वत पर जाना पड़ता है। वहां से पहाड़ी छोटी रेल में सवार होकर

म्यटापालियम, यहां से बड़ी लैन में बैठकर ई रोड फिर तूतीकोरन स्टेशन पर खड़ी हो रेल समुद्रतट पर खड़ी होती है। यहां सब यात्री उतरकर, एक छोटे से अग्निबोट में बैठते हैं। यह अग्निबोट एस० एस० पुर्निया नामक जहाज जो समुद्र से सात मील की दूरी पर खड़ा रहता है, केवल इसी तक पहुंचाता है।

सुशीला—यही जहाज समुद्र तट पर क्यों नहीं आता?

प्रियंवदा—जल के थोड़ा होने से।

पुर्निया के पास धूमपोत रुकने पर जहाज से एक लम्बी सीढी डाली जाती है, इस के द्वारा अग्निबोट से उतर जहाज पर यात्री जाते हैं। इस में यात्रियों के आराम का पूरा प्रबन्ध रहता है। जहाज के दर्जे को "कैबिन" कहते हैं। प्रत्येक कैबिन में हाथ धोने और पीने का पानी, आईना, ग्लास, साबुन, तौलिया, मोमबत्ती इत्यादि आवश्यक सामग्री रक्खी रहती हैं। एक पलँग पर साफ सुथरे बिछौने, तकिया, कम्बल होता है। कैबिन के भीतर हवा जाने के लिये एक गोल खिड़की जिसमें मोटे शीशे का द्वार होता है। इस खिड़की को पोर्टहोल कहते हैं। कैबिन में बिजली की रोशनी होती है।

यशोदा—वहां रावण के समय के कुछ चिन्ह पाये जाते हैं या नहीं?

प्रियंवदा—केवल लंका और रामेश्वर के बीच का सेतु। अब इसी सेतु के ऊपर से रामेश्वर से लंका तक रेल में जाने का प्रबन्ध होगया है।

यशोदा—लंका में कौन २ चीजें बहुत होती हैं?

प्रियंवदा—चाय, कहवा, इलायची, दालचीनी, कोको, नारियल, रबर, वहां से प्रति वर्ष लाखों मन चाय कहवा बाहर को जाती है। वहां रुपये के पैसे नहीं किन्तु स्यंट मिलते हैं। एक रुपये में १०० स्यंट होते हैं।

यशोदा -ये किस धातु के होते हैं?

प्रियंवदा—पैसों की तरह तांबे के।

लंका में जहां २ रेल हैं वहां तो भ्रमण करना सहल है, परन्तु जहां रेल नहीं वहां जाना दुस्तर है। परंतु वहां ठहरने के लिये हर स्थान पर अच्छे २ होटल और आरामगाह हैं, कलम्बो का ग्रांड ओरियंटल नामक होटल बहुत प्रसिद्ध है। उसे जी० ओ० यच० भी कहते हैं। होटलों और आरामगाहों में बिस्तर इत्यादि नहीं ले जाने पड़ते क्योंकि वहां तो अच्छे साफ बिछौने, तकिये, कम्बल आदि से लगे लगाये पलंग मिलते हैं। जहां एक यात्री ने कमरा खाली किया तहां सब बिछौने उठा कर धोने को दे दिये और दूसरा धुला धुलाय पलंग पर लाकर लगा दिया।

यशोदा—लंका में कौन २ सवारी मिलती हैं?

प्रियंवदा—मोटर, ट्रैमकार, पैरगाड़ी अच्छी २ घोड़ा गाड़ी और रिकशे मिलते हैं, रिकशेगाड़ी को केवल एक आदमी ही खींच कर ले जाता है।

यशोदा—खाने को क्या २ चीज़ें मिलती हैं?

प्रियंवदा—स्वदेशी मिठाई को छोड़ कर सब चीज़ें मिलती हैं। ताज़ी तरकारी तो सब प्रकार की बारहों मास मिलती

हैं। वहां के फल भारत वर्ष के फलों से अधिक बड़े होते हैं। चावल बहुत उत्तम होता है। दाल भी सब प्रकार की मिलती हैं। घी दूध भी उत्तम मिलता है। तरकारी के सिवाय सब पदार्थ महंगे मिलते हैं। गरम कपड़ों की कभी आवश्यकता नहीं होती। बारहों मास एकसा ऋतु रहता है।

सुशीला—वहां किस २ सम्प्रदाय के मनुष्य रहते हैं?

प्रियंवदा—विशेष करके ईसाई और मद्रास प्रांत के हिन्दू व्यापारी।

ज्वालादेवी—वहां किस धर्म को मानते हैं?

प्रियंवदा—वास्तव में बौद्धधर्म को।

सुशीला—और २ प्रसिद्ध स्थान हैं?

प्रियंवदा—वहां के प्रसिद्ध स्थानों में से (१) कलम्बो (२) कैंडी (३) अनुराधपुरा (४) न्यूरेलिया (५) रत्नापुर (६) केलनी (७) मिहिन्तले (८) पुलनेरुआ (९) कलेवावा (१०) केकरावा (११) एडम्सपीक है इन में से (१) (२) (३) (४) को रेल गई है। इन स्थानों को देख लेने से और कहीं जाने की आवश्यकता नहीं रहती।

सुशीला—वहां प्रथम किस का राज्य था और अब किस प्रकार की शासन प्रणाली है?

प्रियंवदा—१५०७ ईसवी से यूरुप देशवाले लंका में शासन करते थे। हमारी सरकार का शासन १७९६ ईसवी से है प्रति ६ वर्ष के लिये विलायत से गवर्नर नियत होकर आता है,

गवर्नर का मासिक वेतन ६६६६ रु० १० आने ८ पाई है। लंका में ९ प्रान्त हैं और प्रति प्रान्त में एक गवर्नर (हमारे यहां के डिपटी कमिश्नरों की भांति) रहता है गवर्नर महोदय कलम्बो कंड़ी और न्यूरेलिया में रहते हैं।

सुशीला— अब कृपा करके इन प्रसिद्ध स्थानों का भी संक्षेप से कुछ हाल कह दीजिये।

प्रियंवदा–अच्छा सुनिये।

प्रथम कलम्बो का बन्दरगाह बहुत ही विचित्र है। वह सब देशों के सौदागरी जंगी, और मुसाफ़िर ले जाने वाले जहाज आकर खड़े होते हैं। इस बन्दरगाह के चारों तरफ़ "ब्यूकवाटर वाल" नाम की दीवार है। यह दीवार ४२१० फीट लम्बी है। और जल के ऊपर १२ फीट ऊंची समुद्र में बनी हुई है। इस के बनाने में १,०५,००,००० रुपये लगे। इस के दो कोनों पर एक २ फाटक हैं। उन्हीं के रास्ते जहाज़ बन्दरगाह में आते और जाते हैं। जब समुद्र शान्त रहता है तब मनुष्य इस दीवार पर टहल सकता है। अन्यथा वहां पहरा रहता है और कोई नहीं टहलने पाता। क्योंकि समुद्र की कोसों ऊंची लहरें उठ कर दीवाल के एक तरफ से दूसरी तरफ जा गिरती हैं। ऐसे समय में यदि कोई टहलता होय तो लहरों की झोंक से अथाह सागर में सर्वदा को अन्तर्द्धान हो जाय। कलम्बो में बँगले बहुत और अच्छे हैं, हर बंगले में बिजली की रोशनी होती है। यहां प्रायः सब देशोंके राजदूत रहते हैं। जिस दिन उन के देश से डाक आती है उस दिन बड़ा वह आनन्द मनाते हैं। गवर्नर साहब का प्रसाद, डाक, तार घर, प्रदर्शिनी भवन, सुपरीमकोर्ट और सरकारी कचहरी यहां की प्रधान सरकारी इमारतें हैं। कलम्बो में प्रायः थोड़ी बहुत वर्षा रोज़

होती है। केलनी कलम्बो से लगभग ४ मील है। केलनी जाते समय मार्ग में सुपारी इत्यादि के बड़े २ मनोहर वृक्ष और लतायें देखने में आती हैं। केलनीमें एक प्राचीन बौद्ध-मन्दिर के सिवाय और कुछ नहीं है।

मन्दिर के भीतर लम्बी २ दालानें सी बनी हैं जिन में बौद्ध मतानुयायी संन्यासी रहते हैं। यह पीले कपड़े पहनते डाढ़ी मूंछ मुड़ाते हैं। इनमें से कोई २ अच्छे विद्वान् महात्मा और कोई २ संस्कृत भी अच्छी जानते हैं। कैंडी लंकापुरी भर में बौद्धों का सब से अधिक प्रसिद्ध स्थान है, यह कलम्बो से ७५ मील है। यहां "पेरडानिया बुटैनिकल गार्डन्स" नामक बगीचा अति उत्तम है, यह बगीचा मीलों के विस्तार में है, इसमें लंका ही के नहीं वरन् समस्त संसार के वृक्ष और लतायें लगाई गई हैं। भारतवर्ष के और यहां के बगीचों में आकाश पाताल का अन्तर है। कलम्बो से अनुराधपुरा को भी रेल गई है, वहां प्राचीन बौद्ध स्मारक चिन्हों के सिवाय और कुछ नहीं, परन्तु ये चिन्ह ऐसे हैं जिनको अवश्य देखना चाहिये।

एडम्सपीक, नामक लंका का सब से ऊंचा पहाड़ है। इसकी चढ़ाई कई मील की और बड़ी कठिन है। शिखर के पास थोड़ी दूर इधर से मार्ग इतना छोटा और सीधा है कि कोई सवारी नहीं जासकती। लोहे की जंजीर लगी है उसको पकड़ कर यात्री ऊपर चढ़ते हैं। "न्यूरेलिया" पहाड़ी स्थान है। वहां सरदी पड़ती है। कुछ दिनों को गवर्नर साहब भी वहां जाकर रहते हैं। कलेवावा, कैंकरावा, पुलनेरुवा और मिहिन्तले घने जंगल के बीच में हैं। इन स्थानों में रेल न होने से जाने में बड़ा कष्ट होता है। अनुराधपुरा हो आने पर इन स्थानों में जाने की कोई आवश्यकता नहीं।

रत्नापुर जाने के लिये अविस्वाला तक तो रेल गई है।

वहां से २६ मील गाड़ी में जाना पड़ता है। वहां बम्बई, मद्रास, आदि के धनी व्यापारी जाकर ठेके पर कुछ भूमि ले खोदते हैं कुछ दूर खोदने पर "इलन" नाम की एक प्रकार की मिट्टी निकलती है इसी को धोने से नीलम, चुन्नी, पन्ने, लसुनिये इत्यादि निकलते हैं।

लङ्का के से उत्तम मोती संसार में कहीं नहीं होते, दुनिया भर के व्यापारी वहां जाकर मोती निकलवाते हैं। बहुत से मोती तले ऊपर दो दो मिले हुये निकलते हैं ये बहु मूल्य होते हैं। लङ्का में तीन प्रकार के मोती होते हैं (१ श्याम (२) रक्तवर्ण (३) कुछ पीलापन लिये हुये। पीले मोती सब से अच्छे गिने जाते है। इसी का सीलोन और सरन द्वीप कहते हैं। जिसकी आकृति बादाम की सी है। इतना कह प्रियंवदा चुप होगई।

जयदेवी—देवी जी, बरात कहां से आयेगी?

ज्वालादेवी—अमृतसर से।

प्रियंवदा—तो क्या वह भी आर्य्य हैं?

ज्वालादेवी—हां वह आर्य्य और सज्जन पुरुष हैं।

यशोदा—बरात में कितने मनुष्य आवेंगे।

ज्वालादेवी—कमसे कम २०० बरात स्पेशल ट्रेन से आवेगी।

प्रियंवदा—कहो प्रिय सखी! तुमने बरातियों तथा समग्री

साहब के लिये-कौन २ से पदार्थ, फल वा क्या २ सामान तैय्यार किये। मुझको बड़ा शोक है कि मैं आप के विवाह का कुछ भी कार्य्य इसमें फसे रहने से न करा सकी।

ज्वालादेवी—यह भी तो बड़ा कार्य था विवाह के कार्य तो हो ही रहे हैं बरातियों के लिये खान पान का ठीक प्रबन्ध होगया। फल कुछ देहरादून तथा लखनऊ से मंगाये हैं।

यशोदा—बरात के ठहरने के लिये क्या प्रबन्ध है ?

ज्वालादेवी—शहर से बाहर बारह पत्थर में तम्बू लगवाये हैं उनके आराम के लिये वहां पोष्ट-आफ़िस तथा आवश्यक वस्तुओं का गोदाम, पेशवाई के लिये ओ३म् तथा वेद मन्त्रों के झंडे भी बनवाये हैं।

सेठ जी के परम मित्र बाबू रामसहाय जी, बाबू मनमोहन सहायजी, बाबू जंगबहादुर जी और बाबू हज़ारीलाल जी बाबू रघुवीरसहाय जी तथा लाला मन्नीलाल जी ने जिन सड़कों पर से बरात जनवासे को जायगी, उनके सजाने आदि का प्रबंध किया है। यशोदा जी ४ बज गये हैं, चलिये। जहां बरात ठहरेगी वह स्थान और आनन्द बाग़ हो आवें।

यशोदा-बहुत अच्छा, चलिये। पुनः प्रियंवदा यशोदा बहुओं समेत ज्वालादेवी आदि सब घोड़ा गाड़ी में बैठ पहुंची, सब स्थानों की देख भाल कर ज्वालादेवी ने पूंछा।

ज्वालादेवी—प्रिय प्रियंवदा जी कहिये यह सब ठीक स्थान है या क्या और होना चाहिये ?

प्रियंवदा-बीबी ज्वालादेवी, मेरी सम्मति में सेठ जी के मित्रों और योग्य पंडितों ने बड़ी योग्यता से काम लिया है,

केवल सब से बड़े द्वार पर जो 'साइन बोर्ड' लगा है उस पर देवनागरी अक्षरों में भी लिखना चाहिये।

ज्वालादेवी—आपका कथन सत्य है मैं अवश्य इनका प्रबंध सेठजी द्वारा कराऊंगी। इतना कह आनन्द बाग में गई और वहां कुछ देर भ्रमण कर सन्ध्या के पश्चात् गृह जा भोजन कर अपने २ स्थानों पर जा शयन किया।

अष्टम परिच्छेद

विवाह के निकट दिन और उसकी नगर में चर्चा।

प्रियंवदा देवी के सतोपदेश से यशोदा और उनकी बहुओं के परस्पर वैमनस्य नष्ट हो प्रेम उत्पन्न हो जाने से देवी जी की योग्यता और बुद्धिमती होने की चर्चा समस्त नगर में फैल गई, अनेकान स्त्रियां उनसे मिलने के लिये जाने लगीं, बहुधा बड़े और प्रतिष्ठित घरों की नारियां निमन्त्रण दे बुलाने लगीं।

विवाह से चार दिन प्रथम बाबू हीरालाल जी रईस के सुयोग्य पुत्र के नामकर्ण संस्कार का उत्सव था। जहां प्रियंवदा ज्वालादेवी यशोदा और उनकी दोनों बहुएं भी बुलावे में गई थीं। उत्सव की कार्यवाही के पश्चात् नगर की स्त्रियों से जो वार्तालाप हुआ वह इस प्रकार है—

पार्वती -देवी जी, अहि बराइत कैसी जिह में बखरे, फूल टट्टी आतिशबाज़ी, नाच भांड़ कछू नाहीं। गरीब मनई के तो

बहुत रुपियन को नाहीं तो थोड़े दामन को नाच जरूर भाउत है। जिहिपर सुनो जातु है कि मनइउ थोड़े अइ हैं। इहि बराइत का गुड़िया गुड्डा को खेल हुइये, भला ला० मनोहर-लाल जी की लच्छमी किहि कामे अइये।

रतनकुवांरी—ये बीबी मैंने तो आजी अपने बेटे को कहते सुना है कि लाला मनोहरलाल जी आर्य्या होगये हैं।

चम्पा तो देवी जी आर्य्य लोग इन सनातनी रीतिन को क्यों नहीं करते हैं?

प्रियंवदा- जो सनातनी रीतें नहीं है।

पार्वती—काहे बहन?

प्रियंवदा—जो कार्य्य सदा से चले आते हैं वह सनातनी कहलाते हैं।

पार्वती—यह सब कार्ज्ज तो सदा से चले आउत हैं, देखो हमारी सासु भी तो यहां हो हैं उनका भी तो ब्याह इसी रीति से भयो थो।

सासु—मेरे हो ब्याह में क्या मैं तो यह जानती हूं कि मेरी आयु की बहुधा स्त्रियां यहां उपस्थित हैं। सब के ब्याहों में थोड़ी बहुत यह सब बातें देखने और सुनने में आईं, अभी थोड़े दिन हुए कि पीलीभीत के सेठ जगन्नाथ जी के यहां से ला० कन्हीलाल सेठ के यहां बरात आई थी। बीबो जी बखेर के मारे बाज़ार पाट दिया था। इससे प्रथम खुदागंज के एक लाला ने रुपयों का मेह बरसा दिया था. ऐसी बरात तो हमने नहीं सुनी है। तिस पर उपरोक्त रीतें आप सनातनी नहीं बतलातीं, क्या आर्यों के यहां टका खर्च न करना ही धर्म है।

प्रियंवदा--आर्यों के यहां वेद में आज्ञा है कि धर्मानुसार धन को प्राप्त कर धर्म कार्यों में यथायोग्य व्यय करें, वरना पाप भागी होते हैं। इसी प्रकार दो चार पीढ़ी की बातों को सनातनी रीति नहीं कहते वरन् जो रीतें राजा दशरथ, राजा जनक, राजा मान धाता, राजा बलि, राजा रामचन्द्र इत्यादि के समय में प्रचलित थीं, उनको ही सनातन रीति कहते हैं जिसको बुद्धि भी स्वीकार करती है। क्या आपमें से कोई प्रमाण इस बात का दे सक्ते हो कि सीता, द्रौपदी, अरुंधती, रुक्मिणी, दमयन्ती इत्यादि के विवाहों में यह बातें हुईं, उत्तर मिलेगा कि कदापि नहीं। बहनों देखो फेंक में जो रुपया फेंका जाता है वह दीन दुखियों को नहीं मिलता, वरन भंगी नट और कंजर आदि लूट का माल पाकर मदिरा इत्यादि में व्यर्थ धन लुटा देते हैं।

फूलटट्टी-इस में हज़ारों रुपये व्यर्थ खोये जाते हैं। लाभ तो कुछ नहीं, किन्तु लूट के समय वह धक्का मुक्की होती है और लट्ठ चलता है कि अनेकान पुरुष घायल ही नहीं होते वरन अंग हीन हो जाते हैं। आतिशबाजी से वायु बिगड़ जाती है।

जिस से अनेकान रोग उत्पन्न हो जाते हैं। कभी २ गोले आदि के फट जाने से आग लग जाती है जिस से रंग में भंग हो जाता है। मैं एक जगह का हाल सुनाती हूं। उस को सुन आप स्वयं विचार करें। एक जगह सेठ लट्टूमल के यहां बरात आई। सायंकाल के ८ बजे आतिशबाजी के छूटने की ठहरी ७॥ बजे बरतिया बरात चढ़ाने के लिये जनवास से चले। और बड़ी सजधज के साथ आध घन्टे में समधी के दर्वाजे पर पहुंचे। लाला लट्टूमल के भाई रामचरन ने शेख़ इनातुल्ला से आतिशबाजी में आग लगाने को आज्ञा दी। आग

लगी-सुरररर और फटाफट की होने लगी-होते होते एक गोला फट कर एक ग़रीब बुढ़िया के छप्पर पर जा पड़ा। अब क्या, रौनक की जगह रमन्नक होने लगी। इस बुढ़िया के 'आगे नाथ न पीछे पगहा' की तरह कोई भी न था, जैसे तैसे मांग मूंगेकर दुखिया बुढ़िया ने इन्द्र भगवान् की मूसलाधार मारसे बचने के लिये यह एक छोटी मोटी कुटिया डाली थी। उसी में बिचारी ने चीटी की भांति बड़े परिश्रम से निमक मिरच आदि छोटी मोटी वस्तुयें चार मास के लिये बीन बटोर कर रक्खी थीं और गर्मी के कारण साढ़े तीन पाये की खटिया पर सात थैंगड़ों के पंखों से हवा करती हुई अपने तिकोने आंगन में पड़ी थी, एकाएक छप्पर ज लने लगा, बिचारी को बहुत कम दीखता था। बहुत प्रकाश होन पर बुढ़िया माता चिल्लाने लगी कि चलियो २ मरे छप्पर में आग लग गई। इधर उधर से मनुष्यों ने आकर बड़ी कठिनता से आग बुझाई। पर अब बुझाने से क्या, बिचारी की बड़ी कठिनता से कमाई हुई पूंजी का क्षणमात्र में स्वाहा होगया। अन्त को हमारी दीन माता रोती पीटती और सेठ जी को आशीर्वाद देती हुई परमेश्वर के भरोसे पर कुछ काल के लिये शान्त हुई।

इसी भांति सैकड़ों घटनायें रोज़ होती रहती हैं बतलाइये इस आतिशबाजी से क्या लाभ? रण्डियों के नाच से भारत के सिर का मुकुट गिर गया, स्त्री पुरुष कामी होगये, जिस से स्त्री जाति का तो खोज मारा गया, सहस्रों घरों के दीपक बुझ गये, धन दौलत को लुटा धर्म कर्म पर धता भेज मांस मदिरा के प्रेमी बन गये। मियां-बीबी के बीच में प्रेम जाता रहा। बहुधा स्त्रियां इसी क्लेश से कुओं में गिर पड़ती हैं, विष खा लेती हैं, घर से निकल स्वयं वेश्या बन जाती हैं।

सहेलियों, सत्य तो यह है कि जो स्त्रियां अपने ससुर

इत्यादि के सामने महलों के भीतर पर्दों में रहती हैं वह भी तो छत्तों पर चढ़ पर्दे को त्याग और गैरों (यानी हिंदू मुसलमान ईसाइयों) के सामने जी खोलकर नाच देखती हैं इतना ही नहीं वरन् रंडियों की गालियों को सुन प्रसन्न चित्त हो मजेदार शब्दों में (जिनको सभ्य मनुष्य सुनकर लज्जायमान होते हैं) उत्तर देकर प्रसन्न होतीं, और उनको इनाम देकर अपनी छाती को ठंडा करती हैं। परन्तु उनको यह नहीं मालूम कि उनकी चमक दमक से मोहित होकर उनकी संतानें मुड़ती चली जाती हैं। गौहत्या का बाज़ार गर्म होता जाता है। तिस पर तुम इसको आनन्द समझती हो, तब ही तो घर के घर चौपट हो गये। पतियों के होते हुये स्त्रियां रंड़ापे का दुःख भोगती हैं। धन व्यर्थ जाता है। देखो इसी विषय में सेठ माँगीलाल जी गुप्त नीमच ने कैसा अच्छा कहा है।

मात लखें, गुरुतातलखें, सब भ्रात लखें कवि किङ्कर चच्चा।
दिनरातलखें, परभातलखें हा! कोमल बुद्धि द्विजातिके बच्चा॥
लाजमयी ललनाभि लखें, फिर ओट में बैठ निहारत जच्चा।
रांड का नाच कहो न इसे, यह आर्य सनातन धर्म है सच्चा॥
नाच में ज्ञान गयो सो गयो, हा! वीर्य्य विवेक विचार गयो।
नाच से अर्थ गयो सो गयो, हा! जीवन व्यर्थ विशेष भयो॥
आपके रोग लग्यो सो लग्यो, परहा! घर नारि के लागगयो
रोगभयो सुतबालन के, हा! वंशको बीज विनाश भयो॥

तोटक।

निज शीलवती घरनार तजी, पितुमात डुबाय दिये दुख में।
घर के पर कन्चन लाल हरे, धिक, जाय धरे गणिका घर में॥

मदिरा चरबी मुख में जिस के, मुख आप धरो उसके मुख में ।
कवि किंकर है अभिलाष अहो, फिरभी तुमको सुतमें सुखमें ॥

प्यारी बहिनो ! यह आर्य्यवर्त सम्पूर्ण देशों में शिरोमणि था, सब जगत् के मनुष्य इस पवित्र भूमि की प्रशंसा किया करते थे । परन्तु अब उसका स्वरूप पलट गया इसका कारण हमारे तुम्हारे कर्तव्यही हैं । सुनिये, चैत्र मास में राम नवमी के उत्सवों में रण्डियों और लड़कों के नाच । वैशाख, ज्येष्ठ, आषाढ़ में विवाहोत्सवों में रण्डियों के नाच की भरमार । सावन और भादों, कार में श्रावणी, राधाष्टमी, झूला, सांझी, रामलीला में रण्डी और लड़कों के नाच, रास लीला नौटंकी की बहार दिखलाई जाती है, कार्तिक में जुये । अगहन, पूस, माह, फागुन में होली जिस में नशे और नाच, इसके उपरान्त पुत्र के उत्पन्न होने, मुक़द्दमों की जीत, मुण्डन संस्कार, वर्ष-गांठ में रण्डियों का नाच, मदिरा का पीना व मांस का खाना अर्थात् वर्ष के आरम्भ से वर्षकी समाप्ति तक सम्पूर्ण कार्य्यों में रण्डी लड़कों के नाचकी ही शिक्षा होती है, जिसके कारण स्त्री और पुरुष व उनकी सन्तानों पर इसी का प्रभाव पड़ता चला जाता है और इन्द्रियां भी स्वयमेव रूप, रस, गन्ध स्पर्श की ओर जाती हैं और उसी के प्रेमी उनके सत्संगी होते हैं और बाल्यावस्था में हानि और लाभ का भी ज्ञान नहीं होता।

सम्पूर्ण ऋषीगणों ने यह भी अच्छे प्रकार से बतला दिया है कि काम, क्रोध, लोभ, मोह, यही मनुष्यों के प्रबल शत्रु हैं। इसी हेतु उन्हों ने मनुष्य मात्र को शिक्षा की है कि काम के संकल्प मात्र को छोड़कर तुम सम्पूर्ण कार्यों को करो । परंतु शोक है कि वर्तमान समय में काम के उत्तेजन करने वाले कार्य रात दिन किये जाते हैं । जिसके कारण कामी, क्रोधी,

लोभी बनगये। ईर्षा द्वेष, अभिमान ने उनके शरीरों में घर करलिया। रोगों ने शरीरों को निर्बल कर दिया, जिस से न्यूनावस्था में मौतका बाज़ार गर्म हो गया। फिर विद्या और ब्रह्मचर्य की पूर्त्ति क्यों कर होसक्ती है। और बिना इसके शारीरिक, आत्मिक और सामाजिक बल किस प्रकार प्राप्त होसक्ते हैं। सच पूंछो तो स्त्री पुरुष को पुरुष स्त्री को रोते हैं। परंतु मेरी समझ में रोना इन कार्यों का है जिसको दोनों आखें बन्द किये किये जाते हैं सनातनी पंडितों ने इन उपरोक्त बातों के प्रचार का ठेका लेलिया है, क्योंकि ठाकुरद्वारों में ठाकुर जी को भी बिना नाच के आनन्द नहीं आता। तिसपर स्त्री जाति अपनी अज्ञानता में डूब आप और अपनी संतानों का खून करती चली जाती है। इन कामके उत्तेजन करने वाले कार्यों ने स्त्रियों को इतना दुःखित किया है कि उनको पल मात्र भी सुख नहीं मिलता, क्योंकि पति, पुत्र, पुत्री इन सबके दुःख स्त्रियों को ही सताते हैं। यदि तुम संसार के इन अपार दुःखों से बचना चाहो तो अब स्वयं बुद्धि से विचार कर काम आदि बुरे गुण उत्पन्न करने वाले कार्यों को एक दमसे छोड़कर सुयोग्य वीरांगणाओं की भांति कार्य्य करना आरम्भ करदो। पार्वती आदि के इन बातों को सुन छक्के छूट गये, मुखड़े का रंग फीका पड़ गया, सब ने एक स्वर हो कर कहा कि इन उपरोक्त कर्मों में धनके नाश होने के कारण स्त्री जाति का सत्यानाश हो गया। परंतु देवी जी, यह तो बताओ कि यह रीतें क्योंकर प्रचलित हुईं।

प्रियंवदा-सहेलियों! मैं तुम से क्या कहूं, हमारे देश के पंडितों ने ऐसा अंधेर मचा दिया है कि जो २ रीतें आधुनिक हैं उनको सनातनी बतलाकर कराया जाता है। जिसके कारण पृथ्वी पर के सभ्य देशों में भारत निवासियों की हंसी होती

है। परंतु अविद्या से हम तुम कुछ विचार नहीं कर सक्ती जिससे वह अंधेर प्रति दिन बढ़ता जाता है "यहकिस प्रकार जाना जाय?"

प्रियंवदा—बीबी पार्वती, तुम्हें मैं क्या बताऊं स्त्रियों के मूर्ख होने से हर एक ने उनको ठगा और उसी को सनातन रीति कहकर बराबर प्रयोजन निकाला। देखो जबसे इस देश में मुसल्मानों का सत्संग हुआ उन्हों ने क़बरों को पुजाया, ताज़ियों पर क़ीलें और बताशे चढ़वाये और पानी की मशकें छुड़वाईं। इतना ही नहीं वरन् अमरोहे और जलेसर के मियों की जात होने लग गई। बीबी पार्वती जी! क्या तुम को यह भी नहीं मालूम कि मुसल्मानों को यहां आये बहुत थोड़े दिन हुए, तो क्या उपरोक्त रीति भी सनातनी हैं—नहीं नहीं यह मुसल्मानों के हथकंडे हैं। जब कोई इनकी जात को जाता है, क्या छोटे क्या बड़े, क्या स्त्री क्या पुरुष सब पीले कपड़े पहनते हैं। एक मुजावर ढप बजाता हुआ, उनके साथ जाता है, जो पुरोहित का काम करता है, पाखाना पेशाब इत्यादि काम करने पर एक एक कौड़ी डालते चले जाते हैं। मार्ग में यदि गंगा पड़जाँय तो हाथ तक उसमें नहीं डालते, फिर नहाना कैसा। यदि कोई उसमें नहाले तो उसको जात मियाँ स्वीकार नहीं करते। अमरोहे पहुंच उन मियां के पीरों के हाथ के छुयेहुए गुलगुले पुवे सब परसादकी भांति खातेहैं।

गृहों में आकर मुजावर रमाने बजाते हैं। मसजिद के मुल्लों से स्त्रियाँ अपने बच्चों पर फूंकें दिलाती हैं। जिस में उनके मुंह का थूक बच्चों के मुह में जाता है। फिर भी इन्हीं रीतियों को जब तुम सब सनातन रीतियां समझकर करतीहो फिर भला अन्य रीतियों का क्या ठीक। देखो किसी नगर में

एक निर्लोभी, जितेन्द्री सदाचारी, विद्वान पण्डित रहते थे। वह अपनी अज्ञान स्त्री को समझाया करते थे कि पुरुषों ने स्वार्थ में फंसकर स्त्रियों को अज्ञान रख, बहुधा रीतें प्रचलित कर अपना प्रयोजन निकाला, परन्तु शोक यह है कि स्त्रियां अज्ञान होने के कारण उनको सनातन रीति समझ तन, मन, धन से पूर्ण करने में लगी रहती हैं।

पंडितानी—वाह जी कहीं ऐसा हो सकता है।

पंडित जी—देखो अब जब चराइयों का दिन निकट आवे तब तुम हम से कहना, देखो फिर हम कैसी अद्भुत् रीति चलावेंगे और वह फिर सनातनी रीति बन जावेगी।

पंडितानी—यदि ऐसा हुआ तो फिर मैं आप की बात मानलूंगी कि बरगद पूजा, कूकर पूजा, आंवले की पूजा, इत्यादि सनातन नहीं हैं। और चराइयों का मेला आज से चौथे रोज़ बुध के दिन होगा।

पंडित जी—पंडितानी जी! कुछ तुमको भी सहायता करनी होगी।

पंडितानी—महाराज जो आप कहेंगे वह मैं अवश्य करूंगी क्योंकि मुझे यह देखना है, कि आप किस प्रकार से नई रीति चलाते हैं।

पंडित जी—अच्छा अब तुम कल से अपने गृह में आने वाली स्त्रियों से यह चर्चा करदेना कि हमारे पंडित जी हम से कहते थे कि चराई के दिन पूजा के बाद यदि सफ़ेदगधे के

दो या तीन बाल मिलजावें और जो स्त्री डिब्बी में बन्द कर अपने घर आठवें दिन पूजा करले तो उसके घर कभी दरिद्र न आवे।

पंडितानी—लीजिये मैं आज से ही कहूंगी। इसी के अनुसार पंडितानी जी ने सबसे कहना शुरू करी, नगर के बहुत से मुहल्लों में स्त्रियों को यह सूचना मिलगई और उस दिन की बाट देखने लगीं, अन्त को चराई का दिन आया, तब पण्डितानी के साथ उस मुहल्ले की, और कुछ २ दूसरे मुहल्लों की स्त्रियां मेले के लिये गईं। और पूजा कर सफेद गधे की टटोल में इधर उधर घूमने लगीं। दैव योग से उसी दिन किसी कुम्हार का एक सफेद गधा मरा हुआ एक बाग़ की मेड़ पर पड़ा हुआ था। फिर क्या फिर तो उस निर्जीव गधे के बाल नुचने लगे, यहां तक कि उसके शरीर पर एक बाल भी न रहा। मेले भर की स्त्रियों ने बाल तोड़े और अपने २ गृह में लेजाकर लौंग व गुग्गल आदि से उसकी पूजा की।

पण्डित जी ने छै रोज़ के पीछे पंडितानी से पूंछा कि मेले के दिन सफ़ेद गधे का बाल तुम तोड़कर लाई थीं?

पंडितानी—महाराज मैं क्या, मैं तो यह जानती हूं कि मेरे तोड़ते ही स्त्रियों के झुंड के झुंड बाल तोड़ने में लग गये और सबने अपने २ घर लेजाकर पूजा की।

पंडित जी—आज तुम दो चार घरों में जाकर भी देख आओ कि क्या हुआ?

पंडितानी—अच्छा महाराज, कल जाऊंगी।

पंडितानी प्रातः रोटी आदिसे निवृत्त हो अपनी सहेलियों के यहां पहुंच बात चीत की तो मालूम हुआ कि हर एक ने

बड़ी होशियारी से डिब्बी में रखकर पूजा की। यहदेख पंडितानी ने घर आकर सब हाल पंडित जी से कहा। साल व्यतीत होने के पीछे फिर चराई आई, मेले से लौट हरघर में गधे के बाल कि जो डिब्बी में बंद थे पूजा की गई।

पंडितजी ने पंडितानी से कहा कि चराइयां होगईं, कहो इस साल तुमने पूजा की या नहीं ?

पंडितानी—पंडित जी मुझे आप की बातों का बड़ा ही विश्वास हो गया, चराई से आठ दिन पहले घर घर इसीकी पूजा की चर्चा हो रही थी, बहुधा स्त्रियों ने तो पूछते २ मेरा सिर खाली करलिया। मुझे आपकी बात याद आकर हंसी आती थी, परन्तु मैं रोकती थी, अनेकों बड़े घर की स्त्रियों २ ने आठ आने और चार २ आने को एक २ बाल मोल लेकर घरों में पूजा की, महाराज आप का कथन सत्य है।

पंडितानी को इस बात से पंडित जी पर बड़ा विश्वास हो गया फिर तो उन्होंने पंडित जी की अज्ञानुसार नागरी पढ़ना आरम्भ कर दिया और थोड़े ही दिनों में अच्छे प्रकार नागरी पढ़ने लिखने लगीं और सनातन रीति समझने की बुद्धि उन में उत्पन्न हो गई। बीबी पार्वती और भी सुनलो

किसी नगर में एक सेठ और सेठानी रहते थे सेठजी के एक पुत्र था। उसके विवाहोत्सव पर नाना प्रकार के पदार्थ बनाये गये। सेठानी जी के एक पली हुई बिल्ली थी। वह उन पदार्थों में मुह डालती थी, इसलिये सेठानी ने उस बिल्ली को एक नांद के नीचे बंद करदिया। और सायंकाल को रोटी आदि खिला पिला फिर बंद कर दिया करती थीं इसी प्रकार वह प्रति दिन करती रही अंत को जब बहू आई, तब उसकी प्रसन्नता और काम काज की दौड़ धूप के कारण बिल्ली के

खिलाने पिलाने का स्मरण न रहा। दो दिन के पीछे सेठानी जी को बिल्ली का स्मरण आया, तब उन्हों ने नांद उठाकर देखा तो जाना कि बिल्ली यमपुर को चली गई। सेठानी ने चुपचाप उसको उठवाकर बाहर फिकवा दिया। इसदृश्य को नवीन वधूने भी देखा। थोड़े दिनों के पीछे सेठानी का परलोक हुआ और उनके पुत्र के पुत्र का जब विवाह हुआ तब उन सेठानी ने कहा कि हमारी सास ने विवाह के समय एक बिल्लीको नांद में बंद कियाथा, इसलिये मुझको भी बंद करना चाहिये। यह सोच उन्हों ने भी बिल्ली को बंद किया। और उनकी जब बहू आई तब उसके सम्मुख वह बिल्ली निकाल कर फेकदी गई। इसी प्रकार उस घर में यही रीति हो गई। यानी हर एक विवाह के पीछे एक बिल्ली की हत्या होने लगी।

प्यारी बहनो! इसीप्रकार अनेकों अंध परम्परायें प्रचलित हैं और होती जाती हैं। इस के उपरांत वर्तमान समय में जो न्यून अवस्था में विवाह रचे जाते हैं, क्या प्रथम भी राम, कृष्ण, बलदेव, अर्जुन, युधिष्ठिर सीता, रुक्मिणी, शकुन्तला, द्रौपदी, रेवती इत्यादि के हुए थे। नहीं, फिर यह सनातन रीति क्यों बतलाई जाती है।

(२) जिसप्रकार नाई, बम्मन, भाट, आदि लड़के लड़की को देखकर सगाई आदि करते हैं, क्या यह प्राचीन काल से होता चला आता है, कदापि नहीं।

(३) जिसप्रकार ज्योतिषी महाराज ग्रह मिलाकर जोड़ी बनाते हैं क्या सनातन से इसी प्रकार राम सीता, अत्रि अनुसूईया, वशिष्ठ अरुन्धती, अर्जुन द्रौपदी इत्यादि के ग्रह मिला कर जोड़ी बनाई गई थी। नहीं! प्राचीन काल में पुत्र और

पुत्रियां गुरुकुल में रह समावर्त्तन संस्कार के पश्चात् ग्रह पर आ पुत्री अपने माता पिता इत्यादि की सहायता से गुण कर्म स्वभाव मिलाकर स्वयं गले में जयमाला डालती थीं। आज इसके विरुद्ध नाई, बारी, भाट, पुरोहित के द्वारा विवाह करा दिये जाते हैं। जिस के कारण पढ़ी और सुन्दर योग्य लड़कियां अयोग्य बूढ़े, काने, अन्धे, निर्बल और इसी प्रकार सुयोग्य लड़के अयोग्य लड़कियों के साथ ब्याहे जाते हैं। इस का मैं तुम को एक उदाहरण सुनाती हूं देखो अंधेर नगरी में अज्ञानचन्द नामी एक वैश्य रहते थे। उन के पंदरह वर्ष की चम्पा नाम की अति रूपवती और सुयोग्य कन्या थी। उसके लिये वर के खोजने को नाई, बारी, भाट और पुरोहित गये। सैकड़ों योग्य लड़के उनको मिले पर किसी ने उनकी मुट्ठी गर्म न की। इस लिये चलते २ अधर्मपुर नामी नगरी में पहुंचे जहां संसारचन्द नामीबड़े प्रतिष्ठित एकवैश्य रहतेथे। जिनकी आयु ६५ वर्ष की थी तीन विवाह हो चुके पर कोई सन्तान न थी। उनके वहां पहुंचते ही विवाह की बात चीत होने लगी। संसारचन्द की प्रसन्नताकी वारापार न रहा। फूलकर कुप्पा होगये। उनकी खातिरदारी का क्या ठीक, मोहनभोग, कचौरी खस्ता, दूध मलाई, रबड़ी पेड़ा आदि सब खिलाये पिलाये और पांच २ अशर्फी देकर विदा किया। विवाह होनेपर पांच २ सौ रुपये हरएक के ठहरे। पुरोहितजी को लड़की की जन्मपत्री तो मालूम ही थी, उसीकी विधि के अनुसार संसारचंद की जन्मपत्री गढ़ली और खुशी के साथ लौट अज्ञानचंद के यहां पहुंचकर नाऊ राजा, जो इन सब में चलता हुआ था, यों सुनाने लगा (जिसकी पुष्टि सब करने जाते थे) कि लाला जी, लड़की के ग्रह बड़े ही क्रूर हैं और मंगली है हम सब ने आगरा, मथुरा, अलीगढ़, लखनऊ, फैज़ाबाद, इलाहाबाद और बनारस आदि नगर देखे, परन्तु जहां लड़के सुन्दर

धनवान हैं तहां मंगली होने के कारण विधि नहीं मिली और जहां विधि मिली, वहां घर कोरे, लड़के छोटे, काने आदि। सेठ जी! बड़े दुःखी होने और १००, १५० रुपये खर्च हो जाने के पीछे हम सब पटना से २० कोस के अन्तर पर अधर्म-नगर में पहुंचे, जहां लाला संसारचंद नामी बड़े धनाढ्य हैं जिनके यहां सैकड़ों मनुष्य नौकर बड़े २ बाबू और लाला उनकी आज्ञापालन में लगे रहते हैं, साहेब कलेक्टर उनकी बड़ी प्रतिष्ठा करते और नगर में उनके ही गीत गाये जाते हैं जिधर जाओ उधर सेठजी के ही बाग़ बगीचे, धर्मशाला कुएं बने हुए हैं। लाला जी लड़की का भाग्य खुल गया (माना उसकी यह बातें सुनते फूली नहीं समाती थी) पुरोहित जी ने कहा कि ऐसी विधि आज तक किसी की नहीं मिली। सेठजी, आप की पुत्री के बड़े भाग्य जो ऐसा लड़का मिल गया।

सेठ सेठानी–अच्छा तो उमर क्या है?

नाई–लाला जी बीस बीस बीस।

सेठ सेठानी–सूरत कैसी है?

नाई–महाराज चाँद की भाँति उज्वल।

सेठ सेठानी–वह क्या काम करते हैं?

नाई–वह इतने धनवान् हैं कि अपने पैरों से कभी नहीं चलते, सदा चश्मा लगाये खाट पर पड़े रहते हैं। कभी हाथों से काम नहीं करते। खाने पीनेके लिये सदा दूध मलाई हलुआ पूरी। बाल बड़े काले परन्तु किसी बीमारी के कारण उन के

आगे के दांत गिर पड़े हैं । लाला जी ऐसा लड़का और मिलना कठिन है। जिधर देखो मोतियों की माला लटक रही हैं अंगूठियों में हीरे जड़े हैं। सुबह शाम बड़े २ रईस उनके यहाँ आते हैं, परन्तु वह किसी के यहां बिना सवारी नहीं जाते। इस समय तो चार भाई माता बहन सब हैं कल को नारायण जाने।

सेठजी—कहिये पुरोहित जी आपकी क्या सम्मति है ?

पुरोहितजी—सेठ जी ऐसा वर मिलना अत्यंत कठिन है यह तो आपके नाई बिहारी ही का काम है जो ऐसा बड़ा वर ढूंढकर उनको राजी कर लिया। जन्मपत्री में सब ग्रह उत्तम पड़े हैं, आप इस कार्य के करने में देर न कीजिये । प्यारी बहनों ! ऐसी बातें बना सेठ सेठानी आदि को मोहित कर सगाई करा विवाह की तारीख़ नियत करा दी । बरात आने पर जब द्वार पर दूल्हा आया और स्त्रियों ने देखा, फिर क्या फिर तो रोना पीटना पड़ गया, सब लोग इकट्ठे हो रोने पीटने लगे इतने में जब शांति हुई तब सेठ जी ने नाई को बुलाया और उस से पूछा।

सेठजी—क्यों बिहारी, तुमने हमारा खोज मार दिया कैसी अपकीर्त्ति होगी।

बिहारी नाई—मैंने तो आप से स्पष्ट कह दिया था कि वर की आयु बीस बीस बीस यानी साठ वर्ष की है। पैरों से चला नहीं जाता, सदा पालकी में चलते हैं, ऐनक लगाये रहते हैं अर्थात् कम दीखता है। इस पर भी आप मेरा ही दोष बताते हो तो फिर बड़ों की बात को कौन झूंठ बतावे।

अंत को सेठानी ने विवाह नहीं किया, बरात लौट गई। सेठ जी की अपकीर्त्ति हुई। संसारचन्द थोड़े ही दिनों में श्मशान की राख बन गये। इसी प्रकार अनेकान दुःखों से भारत दुखी हो रहा है। इस लिये तुम विद्या और बुद्धि के अनुसार लाभदायक बातोंको सनातनी समझ करने का प्रयत्न करो उसी समय स्त्री जाति की भलाई हो सकती है।

पार्वती—अच्छा बीबी. अब क्या विवाह के समय गीत न होने चाहियें ?

प्रियंवदा—विवाह आदि आनन्द के समय उत्तम गीत भजनों इत्यादि का होना अत्यावश्यक है। परन्तु वर्त्तमान् समय के अनुकूल अत्यन्त लज्जायुक्त गीत और सीठने ज्यौनार के समय जो मूर्खा स्त्रियां बड़े २ अयोग्य शब्दों में (जो बोई आदि दिखलाती हैं) न होने चाहिये, देखो सीता के विवाह में लिखा है—

गावत गीत मनोहर वाणी।

बहनो, यह गानविद्या है, जिसकी प्राचीन समय में स्त्रियां उत्तम प्रकार से शिक्षा पाती थीं, आज विद्या स्थानपर अविद्या का राज्य होने से अन्धाधुन्ध होती चली जाती है। भला मैं तुम से पूछती हूं कोई भी भला आदमी अपने सम्बन्धी को गाली देना और दिलाना भला समझेगा, कदापि नहीं। परन्तु वर्त्तमान समय की अनपढ़ स्त्रियां विवाह आदि समयों में इधर उधर के सहस्रों स्त्री पुरुषों के सम्मुख गाली दिलाकर प्रसन्न होती हैं, बताओ यह कौनसी चतुरता है।

देखो, इस विद्या को सांगीत शास्त्र कहते हैं. प्राचीन काल में भारतवासियों ने जो योग्यता प्राप्त की थी उस के

समान अन्यत्र किसी देश के निवासी योग्यता नहीं रखते थे, उस समय ऋषिगण धर्मपत्नियों सहित वेदमन्त्रों का सस्वर गान करते थे। सामवेद विशेषकर गान ही के लिये प्रसिद्ध है। इसके उपवेद का नाम गांधर्व वेद है, जिस के आचार्य भाण मुनि थे, नाचने, गाने और बजाने का नाम संगीत है। किसी ने रम्भा रावण और वायु को और नन्दी को भी, किन्तु ब्रह्मा को सांगीत शास्त्र का आचार्य माना है। जिस गान से अनुरञ्जन उत्पन्न न हो तो वह गाना ही नहीं वरन् रोना है। शरीर संवाहन की उत्पत्ति, ताल आदि के स्थान, श्रुति सात शुद्ध स्वर, बारह अशुद्ध किंवा विकृत-स्वर इन सात लौकिक स्वरों की उत्पत्ति पूर्वोक्त वैदिक स्वरों से हुई है यथा षड्ज, ऋषभ, गान्धार, मध्यम, पञ्चम, धैवत, निषाद, जो—

१ उदात्त से निषाद और गान्धार की।

२ अनुदात्त से ऋषभ और धैवत की।

३ स्वरित से षड्ज मध्यम और पञ्चमकी। इन स्वरोंके प्रत्येक स्वर का पहला अक्षर उसका ज्ञापक माना गया है। स्वर मलाय में इन्हीं सप्तस्वरों के प्रथमाक्षर अर्थात् स, रि, ग, म, प, ध, नि, का उच्चारण होता है। सातों स्वर पशु पक्षियों के अनुकरण से निर्मित हुए हैं, षड्ज में मोर के स्वर का ऋषभ में बैल का, गन्धार में अज्ज का, मध्यम में कौञ्ज का, पञ्चम में कोकिला का, धैवत मेंहाथी का, निषाद में घोड़े का—ये सातो स्वर शुद्ध हैं इनसे १२ विकृत स्वर बनते हैं। अतएव विकृत अविकृत मिला के १९ प्रकार के स्वर होते हैं। स्वरों के उच्चारण में वायु का बड़ा प्रभाव पड़ता है। और जाड़े को अपेक्षा वसंत, और वसंत की अपेक्षा ग्रीष्मऋतु में स्वरों की गति या उच्चारण में अधिक तेज़ी आजाती है। इन्हीं स्वरों को भिन्न

अनेक रूप देकर सांगीत शास्त्र के आचार्यों ने कितने ही राग रागनियों की कल्पना की है और कल्पना के ही बल से उन्होंने रागों के नाम रखकर उनके अनुकूल उनका रूप भी बनाया। यही नहीं किन्तु जिसका जैसा रूप है उसके गाये जाने का समय भी निश्चय करदिया और उसी समय उनके गाने से विशेष आनन्द होता है। हनुमन्त आचार्य्यके मतानुसार १६००० राग रागनियां थीं। संस्कृत में रागनियों को गोपी कहते हैं। अज्ञानी मनुष्यों ने इस अभिप्राय को न समझकर कृष्ण महाराज की १६००० स्त्रियां लिख दीं।

इसलिये प्यारी बहनो! इस ओर ध्यान देकर गान्धर्व विद्यालय खोल सांगीत विद्या का फिर से प्रचार करो। इस विद्या में इतना आकर्षण है कि मनुष्य और स्त्रियां सारे दुःखों को भूलकर आनन्द में विह्वल होजाती हैं। ईश्वर में चित्त लगाने के लिये यह एक उत्तम उपाय है। प्राचीन समय में मृगनयनी, मीराबाई, रूपवती, रत्नकुवाँरी इत्यादि आपकी बहनें इस विद्या में प्रवीण होगई हैं जिनके नाम आजतक यश से लिये जाते हैं।

ज्वालादेवी—बीबी कलावती! अब सायंकाल होगया इसलिये इस वार्तालाप को समाप्त कीजिये।

कलावती—बहुत अच्छा!

ज्वालादेवी—सेठानीजी, अब हम सब को जाने की आज्ञा दीजिये।

सेठानी—मैं तुम्हारा तथा तुम्हारी प्रिय सखी का धन्यवाद देती हूं, क्योंकि आप की इन उपदेश पूर्ण बातों को सुन

कर मेरा चित्त बड़ा प्रसन्न हुआ। यदि अवकाश मिला तो फिर भी अवश्य आऊंगी।

ज्वालादेवी—अति कृपा होगी। पुनः सब नमस्ते कर गृह को पधारीं। और गृह जा सुशीलादि के साथ संध्या हवनादि किया और भोजन के पश्चात् दूध पी सब अपने २ शयन स्थानों को गईं।

नवम परिच्छेद

विवाह उत्सव ।

प्रियंवदा देवी के सतोपदेशों और विवाह के कार्य्यों के कारण रात और दिन योंही व्यतीत हो गये और विवाह का दिन निकट आ गया। बरात बड़ी धूम धामसे आई। रात्रिको वैदिक विधि से विवाह हुआ। उस दृश्य को देख सहस्रों स्त्री पुरुष स्वामी दयानन्द सरस्वती जी महाराज को धन्यवाद दे रहे थे। लाला मनोहरलाल जी की ओर से चार दिन बरात का सन्मान उत्तम प्रकार से किया गया। दोनों सज्जनों ने चार २ हज़ार रुपये सुपात्र ब्राह्मण, अनाथालय, गुरुकुल, विधवाओं की सहायतादि के लिये दान दिये।

और सकुशल बरात बिदा हो वधू सहित गृह पहुंची। इधर गृहपर प्रियंवदादि सुशीला के गुणानुवाद गाने लगीं।

दो दिन विश्राम करने के पश्चात् देवी प्रियंवदा का सेठानी ज्वालादेवी जी के यहां दो बजे पधारना।

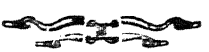

ज्वालादेवी ने प्रियंवदा को आते देख उठ नमस्ते कर कहा कि आइये, पधारिये।

प्रियंवदा—परमात्मा की कृपा से बरात विदा हो गई बेटी सुशीला, सास के घर पहुंच गई होगी, मुझको उसकी बारम्बार याद आती है।

ज्वालादेवी—देवी जी! बेटी सुशीला के चले जाने से मुझ को यह घर सुनसान मालूम होता है। किसी कार्य करने में चित्त नहीं लगता। और लाला जी को भी उसका ही स्मरण रहता है।

प्रियंवदा—सच तो यह है कि सुशीला को जिस आप प्रकाश से आप दोनों ने शिक्षा कराई है वह सराहनीय है। उसके शांत स्वभाव, मधुर भाषण आदि गुण मुझे भी बहुत याद आते हैं। आशा है कि वह तुम्हारे सुयश और कीर्त्ति का प्रकाश करेगी।

ज्वालादेवी—यह सब आप सी योग्य सहेलियों और विशेष कर स्वामी दयानन्द सरस्वती जी महाराज तथा सरकार इंग्रेज़ की कृपा का कारण है।

प्रियंवदा—बीबी जी, तुम सच कहती हो स्त्री जाति के उद्धार के लिये स्वामी जी को धन्यवाद देने के पश्चात् न्याय शील गवर्नमेन्ट का अवश्य धन्यवाद देना चाहिये यदि इंग्रेज़ी राज्य न होता तो क्या स्वामी दयानन्द जी को कोई कुछ कहने देता, धन्य है महाराजा पञ्चमजार्ज को जिनके राज्य में सिंह और बकरी एक घाट पानी पीते हैं। ईश्वर उनके परिवार में श्री पञ्चमजार्ज और महारानी मेरी को चिरायु करे कि जिन्हों ने स्त्रियों को विद्या दान करने का उत्तम प्रबन्ध किया भला बताओ तो सही किस के राज्य में ऐसा उत्तम प्रबन्ध था ?

आप के ही प्रशंसनीय राज्य में प्रजा को रेल, तार, डाक, समुद्र की यात्रा के लिये जहाज़, आकाश की सैर करने के लिये विमान आदि अद्भुत यन्त्र और कलाओं के द्वारा नाना प्रकार के सुख और चैन मिल रहे हैं। बीबी जी जिन्हों ने सन् १९१० की प्रयाग की प्रदर्शनी देखी होगी वह अंग्रेजों के अटल प्रताप और विलक्षण बुद्धि तथा सुयोग्य प्रबन्ध की तुलना कर सके हैं।

ज्वालादेवी—देवी जी, क्या आप प्रदर्शनी देखने गई थीं?

प्रियंवदा—हाँ।

ज्वालादेवी—तो मुझ को वहां का वृत्तान्त ही सुना दीजिये।

प्रियंवदा—अच्छा तो मैं आप को संक्षेप से कुछ वृत्तान्त सुनाती हूं। इतने में गङ्गादेवी, जयदेवी, यशोदा भी आगईं और यथायोग्य के पश्चात् बैठ गईं।

प्रियंवदा—बीबी ज्वालादेवी इस प्रदर्शनी के लिये महीनों से तैयारियां की गई थीं। सहस्रों कारीगर दिनरात लगे रहे, लाखों रुपये ख़र्च हुए और भारतवासियों के देखने के लिये प्रान्तीय लाट सर जान हिवेट साहब बहादुर ने पहली दिसम्बरको खोला था। भारतवर्ष में पहले कभी भी ऐसी प्रदर्शनी नहां हुई जैसी कि यह अद्वितीय मनोरंजक प्रदर्शनी हुई थी। ११ बजे दिनसे रातके ११ बजे तक कोई भी दर्शक आठ आने का टिकट लेकर देख सक्ता था। यह यमुना के तट पर किले के पास बनी थी। इसका घेरा टीन की दीवारों से घिरा हुआ था इसकी गोलाई मीलों लम्बी थी। इसके भीतर जाने के तीन द्वार थे। एक बड़ा द्वार मेनगेट नामक उत्तर की ओर था, यह बड़ा दर्शनीय और विशाल था। द्वार पर रात को सहस्रों विद्युद्दीप मालाओं का ऐसा प्रकाश होता था कि दिनसा खिल जाता था, और द्वार की शोभा सौगुनी बढ़ जाती थी। प्रदर्शनी में जाने का मार्ग और, और आने का और था। टिकट द्वार पर घुसते ही ले लिया जाता था। फिर दर्शक भीतर जाकर बे रोक टोक फिरते थे। प्रदर्शनी में बीसियों गृह नाना प्रकार की अद्भुत २ वस्तुओं से इतने परिपूर्ण थे कि कोई दर्शक दिन अर्थात् १२ घण्टे में मुश्किल से देख सक्ता था। प्रदर्शनी के भीतर स्वच्छता बहुत रहती थी, स्थान २ पर पानी पिलानेका भी प्रबन्ध था। दर्शकों के आराम के लिये पूरी, मिठाई, फल फलहरी की कई दूकानें लगी थीं। दूकानों का अच्छा प्रबन्ध था, हिन्दुओं की दूकानें अलग रहती थीं और मुसलमानों की अलग। यात्रियों के सुभीते के लिये टट्टियां और पेशाबघर भी

बने हुए थे। प्रकाश स्तम्भ के पास वाले बीच के द्वार के बिलकुल पास ही तीन अलग २ भोजन शालाएं बनी हुई थीं, जिनमें अंगरेज़, हिन्दू और मुसलमान भोजन करते थे। पदार्थों का भाव बहुत मंहगा था। इसलिये भोजन शाला से राजा महाराजा और धनाढ्यों को ही आराम मिलता था।

प्रदर्शनी के हाते में ही डाकघर, तारघर और प्रदर्शनी का कार्यालय था। जहां प्रदर्शनी सम्बन्धी बातों को यदि कोई पूछना चाहे तो पूंछ सकता था। प्रकाशस्तम्भ के बाएं हाथ की ओर एक इंजिन और १ गाड़ी खड़ी थी जिसने सब से प्रथम भारत भूमि में पदार्पण किया था तथा दाहिने हाथ की ओर सन् १९१० की बनी हुई एक गाड़ी और इंजिन था।

बाज़ार के पास बाईं ओर बाराबंकी का एक कारखाना था, जिसमें देसी करघों से सूती कपड़ों की बुनाई का काम होता था। उसी हाल में एक कोने में पर्दे के भीतर स्त्रियां काम करती थीं, जिनकी दस्तकारी दर्शनीय थी। सूती कपड़ों पर बेलबूटेका काम बड़ी सुघड़ाईसे किया गया था। सुई तागे से ही कपड़े पर नाना प्रकार के पक्षियों की मूर्तियां बहुत ही सुन्दर बनाई गई थीं, जिनको देख लोग अचम्भित होजाते थे। प्रदर्शनी भूमि के बीच में एक प्रकाश स्तम्भ था यह बिजली के हज़ारों दीपकों से गुथा हुआ था। दिन छिपते ही बिजली देवी की कृपा से यह स्तम्भ उद्दीप्त हो उठता था। इसके उद्दीप्त होतेही रात का दिन होजाता था, प्रदर्शनी के सब घरों से यह बहुत ऊंचा था इसलिये इसका प्रकाश दूरतक फैलता था।

दक्षिण भाग में यमुना के किनारे "स्वागत" भवन का बड़ा सुन्दर गृह था। इसके भीतर दीवारों और छतों पर

पच्चीकारी के साथ रंगीन वेलबूटों का काम ऐसा अच्छा किया गया था कि उसकी शोभा देखते ही बनती है। इसके भीतर बैठकर यमुना और गंगा के संगम का अद्भुत दृश्य बड़ा ही मनोहर दिखाई देता था। बीच के हाल में १ बड़ा झाड़ लटक रहा था, जो ऊपर से नीचे तक एक ही कांच अर्थात् बिना किसी जोड़ के बनाया गया था। इसी हाल में अंग्रेज़ों के चाय पीने का प्रबन्ध था। इससे आगे शिक्षा भवन था जिसमें शिक्षा विभाग से सम्बन्ध रखने वाली प्रायः सब ही वस्तुओं का संग्रह किया गया था। भारतवर्ष के बीसियों प्रसिद्ध यंत्रालयों की प्रकाशित पुस्तकें, चित्र तथा अन्यान्य वस्तुएं यहां दिखाई गई थीं। भारतवर्षीय स्कूल तथा कालिजों के छात्रों के हाथ के बने हुए काम भी अच्छे २ दिखाये गये थे।

एक कृषिभवन था उसमें नाना प्रकार के हल आदि सामने थे। क्या २ कहूं, एक से एक बढ़िया, एक से एक दर्शनीय और वहां एक से एक आश्चर्य्यमय वस्तुएं थीं कृषि भवन के आगे एक मणि रत्नादि संग्रह घर था, इसमें रत्नही रत्न दिखाई देते थे। रात्रि में इस भवन की शोभा कुछ और ही थी। बिजली की रोशनी से इस भवन में रक्खी हुई रत्नमय चीज़ें ऐसी चमकने लगती थीं कि आंखों में चकाचौंध होजाती थी। यहां की एक २ चीज़ सहस्रों रुपयों की थी-अर्थात् इस भवन में करोड़ों की सम्पत्ति रक्खी हुई थी। वहन जी अधिक क्या इस प्रदर्शनी में संसार भर की अद्भुत तथा दर्शनीय वस्तुओं का संग्रह किया गया था। कितने ही देशी रजवाड़ों से भी बहुत सी चीज़ें यहां मंगाकर रक्खी गई थीं, जिनकी सुन्दरता का क्या कहना, एक पूरा कमरा तो नव्वाबी सामान से सजा हुआ था। मख़मल पर ज़री का काम ऐसा बढ़िया था कि भारतवर्ष के कारीगरों की उत्तमता का बखान कर रहा था।

इसी शिक्षाभवन में महाभारत की भोजपत्र पर हस्त-लिखित एक पुरानी पोथी रक्खी थी, उसका मूल्य ५० हज़ार रुपये लिखा था, इसी तरह एक श्रीमद्भागवत की हस्तलिखित पुस्तक भोजपत्र पर लिखी हुई बहुत पुरानी थी. उसका मूल्य भी २५ हज़ार रुपया था। इसके आगे साधारण दृश्य भवन था जिसमें भी एक से एक अद्भुत चीजें रक्खी थीं। इसी भवन में मुन्शी कृष्णकुमार जी सबजज प्रतापगढ़ की पुत्री तथा लखनऊ के चौधरी उदालाप्रसाद जी ज़मींदार की पतोहू श्रीमती ब्रह्मकुमारी देवी जी के हाथ की बनी ऊन की बहुत सुन्दर और सफाई से बिनी हुई २५) रु० की कीमत की गद्दी रक्खी थी। एक भवन ऐसा ही था जिसमें इस सिरे से लेकर दूसरे सिरे तक अधिकांश चीज़ें स्त्रियों और कन्याओं की बनी हुई थीं, जिनके देखने से मालूम होता था कि भारतवर्ष में अभीतक स्त्रियों और लड़कियों की दस्तकारी के काम की भी कमी नहीं है। एक से एक बढ़िया चीज़ें यहां रक्खी थीं। सुई के काम की चीजें, लकड़ी पर खोदी हुई चीज़ें, चित्र, मूर्तियां, लकड़ी के घर इत्यादि अनेक चीजें लड़कियों के हाथ की बनी हुई थीं। लकड़ी, धातु, पत्थर और मट्टी की बनी हुई असंख्यात चीजें कई भवनों में रक्खी हुई थीं।

मैं तो ११ बजे दिन से गई थी और रात के ११ बजे लौटी चलते २ पैर थक गये, देखते २ आँखें मिचने लगीं। जब बाहर निकली तो देखा कि थोड़ी दूर पर ही मैदान में सैकड़ों दीपक प्रकाशित होरहे थे, इसी मैदान में बाहरी दर्शक नियत किराया देकर ठहरते थे। कई लैनों के स्टेशन भी प्रदर्शनी के पास ही बने थे। प्रयाग स्टेशन से प्रदर्शनी तक प्रातः से रात्रि के ११ बजे तक एक २ घंटे में गाड़ी छूटती थी। बड़े दिन की छुट्टियों में बड़ी धूम धाम हुई। सहस्रों क्या लाखों दर्शक उन

दिनों प्रदर्शनी देखने आये, बीसियों समाजों तथा सभाओं के उत्सव हुए।

ज्वालादेवी—देवी जी, आपने विचित्र २ बातें सुनाईं क्या कहूं मेरा बड़ा दुर्भाग्य जो ऐसी प्रदर्शनी देखने न गई।

मनोरमा—भोजन तैय्यार होगये।

प्रियंवदा—अच्छा तो अब कल आप को रही सही बातें सुनाऊंगी पुनः सब बातें करती रहीं। और सायंकाल को संध्या हवन के पश्चात् भोजन कर अपने २ स्थानों में शयनार्थ गईं।

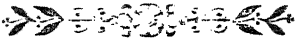

एकादश परिच्छेद

प्रातःकाल नैमित्तिक कर्म से निवट प्रियंवदा का आना।

ज्वालादेवी ने देवी को आते देख आसन से उठ नमस्ते कर कहा, कि आइये बैठिये।

प्रियंवदा—यथायोग्य के पश्चात् बैठ गईं इधर उधर की बातें होने के बाद ज्वालादेवी ने कहा कि बीबी जी कल की रही सही बातों को सुनाइये।

प्रियंवदा ने बहुत अच्छा कह कर कहा कि प्रदर्शनी के सभी भवन देखने में बड़े सुन्दर थे दर्शनीय भवन भला देखनेमें सुन्दर क्यों न होते। उन भवनों के सफेद गुम्बज और कोठियां हरे पेड़ों के बीच में विशेष शोभा देतेथे और पीले पत्थर के होने के कारण धूप में खूब चमकते थे। इस प्रदर्शनी का हाता १२० एकड़ ज़मीन में था और डेरे तम्बुओं की भूमि को मिला

कर कुल २५० एकड़ थी। उत्तर की ओर के द्वार से घुसते ही एक बड़ा आंगन मिलता था जिसके तीनों ओर भारतीय कारीगरियों का काम दिखाया गया था। बाईं ओर प्रदर्शनी का कार्यालय, उसी के सामने दाहनी ओर डाकघर और तार घर था। रात्रि के समय फ़ौवारे इसकी शोभा को बढ़ाते थे। प्रदर्शनी के दूसरे मैदान के बीच में एक गोल वाद्य घर बना हुआ था, उसमें प्रतिदिन गोरखा पलटन का बाजा बजता था। उसके चारों ओर जापान, अवध, लखनऊ और देशी रियासतों की चीज़ें दिखाई गई थीं।

पवनयान अर्थात् आकाशी विमान प्रतिदिन प्रातः और सायंकाल में उड़ते थे। पशुओं के खाने की वस्तुएं. रेशम के कीड़े के पालने, कातने और बुनने का काम दिखाया गया था शक्कर बनाने की कलों से चीनी बन रही थी, एक दक्षिण के कोने में बन विभाग के तीन भवन थे, जिनमें बन सम्बन्धी अनेक वस्तुओं का संग्रह किया गया था, उसमें पर्वती दृश्य भी एक अनोखा दृश्य था। सिंह, व्याघ्र, हिरन आदि अनेक जंगली जीवों की असली चर्ममयी मूर्त्तियां खड़ी दिखाई गई थीं। पचासों प्रकार के भयंकर सांपों को देखकर ईश्वर की अद्भुत रचना का स्मरण हो आता था, यहां पर जंगली लकड़ियों के नमूने दिखाये गये थे। उत्तरी द्वार से भीतर आते ही बड़े आंगन के तीन ओर १०० कोठरियां थीं, जिनमें, दो को छोड़ शेष सब में देशी कारीगर काम करते थे। एक में काशी, आगरा, मिर्ज़ापुर, लखनऊ जौनपुर और अमृतसर से कालीन बनाने वाले कालीन बुन रहे थे। तिलहर क़सबे की लकड़ी पर रोगन के नमूने बहुत अच्छे थे।

गाज़ीपुर की शीशे की चूड़ी जो २००) रु० को तक की एक जोड़ी होती है उसके नमूने भी थे। सूक्ष्म कला भवन में

लंका से आई एक कपिलमुनि जी की मूर्त्ति बहुत अच्छी थी। बंगाल की बनी हुई श्री नन्दलाल बोस निर्मित शिव जी के ताण्डव नृत्य की बहुत उत्तम मूर्त्ति थी। कश्मीर के दुशालों का काम दिखाया गया था और बनारस का कमख़ाब और फूलदार मख़मल ख़ाकी और सुनहले कपड़े आदि बहुत सी चीज़ें थीं। इसी भवन में एक तश्तरी थी उसका रंग हरा था, उसमें बड़े महत्व और प्रशंसा की बात यह थी कि यदि उस में विष रक्खा जाय तो उसके दो टुकड़े हो जायँ।

डेमरा के राजा की दो चीज़ें यहां बड़ी क़ीमती रक्खी हुई थीं, एक तो सच्चे मोतियों का हार, और दूसरा हीरे, लाल और नीलम जड़ा हुआ सोने का सरपेंच, जो पगड़ीमें लगाया जाता है इसी प्रकार कलकत्ता और बम्बई के विख्यात सेठ वदरीदास ऐंड सन्स का भेजा हुआ एक बहुमूल्य ऐतिहासिक सरपेंच था, उसमें हीरा जड़ा हुआ एक लाल था, उसकी लंबाई २१ इंच थी। कहा जाता था कि इस चमकीले मणि के समान संसार में दूसरा मणि कहीं नहीं है। एक ताला ऐसा था जो दूसरी ताली से नहीं खुलता, यही नहीं किन्तु दूसरी ताली एक बार डालने पर फिर निकलती ही नहीं, इस का मूल्य २५ रु० था। भारत वासी अपने महाभारत रामायण आदि प्राचीन ग्रन्थों में पढ़ा करते थे कि पहले यहां ऐसे विमान भी थे जो आकाश में उड़कर थोड़ी ही देर में कहीं से कहीं इच्छित स्थानपर पहुंच जाते थे, जैसे श्रीरामचन्द्र जी लंका से अयोध्याको पुष्पक विमानमें बैठ कर आये थे वैसे ही विमान इस प्रदर्शनी की कृपा से भारतवासियों के देखने में आये। बीबीजी मैं क्या कहूं इस प्रदर्शनी में जितनी अद्भुत और महत्वपूर्ण घटनायें हुई थीं उन सब में विमान उड़ाने का दृश्य बड़े महत्व का था।

ज्वालादेवी—बीबी जी ! मुझे बड़ा ही शोक है कि मैं ऐसी अद्भुत प्रदर्शनी को न देख सकी।

यशोदा—प्रिय सखी ! क्या तुमको महाराजा पञ्चमजार्ज को लन्दन में जो ताज पोशी हुईथी उसका कुछ वृत्त ज्ञात है ? यदि हो तो मुझ को सुना दो।

प्रियम्वदा—प्रिय यशोदा ! महाशय सेन्ट निहालसिंह भारत सचिव के द्वारा निमंत्रित किये गये थे। उन्हीं ने सरस्वती में छपवाया है उसी को मैं संक्षेप से दो बजे के पश्चात् सुनाऊंगी।

यशोदा—बड़ी कृपा होगी।

ज्वालादेवी—चलिये अब भोजन कर लीजिये पुनः सब भोजनों को गईं और पान आदि खा अपने २ स्थानों पर विश्रामार्थ गईं।

* * * *

दो बजे के पश्चात् ज्वलालादेवी, सुभद्रा, सरस्वती, यशोदा, किशोरी, यमुना, गङ्गादेई, जयदेवी, सुशीला का रामबाग में जाना।

वहां पहुंच सबने यथा योग्य कहा पुनः प्रियंवदाकी आज्ञा पा यथा स्थान बैठ गईं।

यशोदा—प्रिय सखी ! अब शीघ्र सुनादो क्योंकि चारों बहुएं सुनने के लिये अपने कार्य को छोड़ कर आईहैं पुनः और बातें करना।

प्रियम्वदा—अच्छा सुनिये—

अंग्रेज़ी साम्राज्य के महाराज के राज्याभिषेक का एक बहुत बड़ा उत्सव था, उस में सम्मिलित होने के लिये अनेक देशों के सहस्रों पुरुष इंगलैंड गये थे। "वेस्ट मिस्टर अबी" नामक ऐतिहासिक गिरजा घर जहां राज्याभिषेक किया जाता है। इस गिरजाघर में ऐसे समय में केवल उन्हीं लोगों का प्रवेश हो सक्ता है जो उतनी प्रतिष्ठा के योग्य समझे जाते हैं। जिन २ सड़कों पर से महाराज की गाड़ी जाने वाली थी वह सड़कें प्रातःकाल से ही ठसाठस भर गई थी। एबी के भीतर विविध प्रकार के राज चिन्हों से सुशोभित नीले रंग के सुन्दर कालीन सर्वत्र बिछे हुए थे। कुर्सियोंकी कतारें और उस के अन्य स्थान बड़ी उत्तम रीति से सजाये गये थे। एबी के भीतर जहां अभिषेक स्थान बना था, उसके चारों ओर चार स्तम्भ बने थे। और ऊपर एक सुन्दर लालटेन लटक रही थी। बीचों बीच चबूतरे की शकल की उच्च स्थाथ बना था जिस पर दो सिंहासन रक्खे थे। एक कुछ ऊंचे पर महाराज के लिये दूसरा कुछ नीचे महारानी के लिये। साढ़े नौ बजे के बाद भेरियों के घन घोर घोष के इस बात का विज्ञापन दिया कि भिन्न २ देशों के राजे महाराजे और उनके प्रतिनिध आ-रहे हैं। इस जलूस में जर्मनी के युवराज और उनकी रानी सबके आगे थीं। पश्चात् प्रिन्स आफ़ वेल्स अर्थात् महाराजा पंचम जार्ज के पुत्र युवराज प्रिन्स आफ़ वेल्स अपनी शाही पोशाक में थे, उन के साथ राजकुमारी मेरी और उनके छोटे भाई भी थे।

इसके कुछ मिनट तक सन्नाटा रहा इतने में दूर सड़कों से जयजयकार की धीमी आवाज़ सुनाई दी। साथ ही उन सवारों के घोड़ों की टापों का भी शब्द सुनाई दिया जो महा-

राज के जलूस के आगे आ रहे थे। फिर क्या, फिरता आरगन बाजा बजने लगा, उसकी मधुर ध्वनि से वह विशाल गिरजाघर गूंज उठा। इतने में वह जलूस भी एबी के भीतर आ पहुंचा। बड़े पादरी आगे, उनके पीछे पताका वाहक थे।

इगलैंड, भारत, आस्ट्रेलिया, कनाडा एक२ देशकी पताका एक २ अमीर के हाथ में थी, लार्ड कर्ज़न ने भारत की पताका ली थी। इन लोगों के पीछे लार्ड रोजवरा और लार्ड मिंटो आदि चार लार्ड थे। इनके पश्चात् और दूसरे लार्ड लोग तथा दो आर्क विशप व प्रधान मन्त्री मिस्टर ऐसक्विथ थे। इन सब के पीछे महारानी का जुलूस था। वे अपनी सहेलियों के साथ बड़ी ही सज धज के साथ आती हुई देख पड़ीं। उनकी चालढाल और आकृति से उनका महारानी पन टपक रहा था। उनकी पोशाक बड़ी ही अद्भुत व गुलाब, कमल, ताराओं के चित्रों से चित्रित थी।

महारानी के साथ अर्ल नामके रईसों की छः कुमारिकायें और लार्ड लोगों की चार लेडियां थीं। यही महारानी पर छत्र धारण करने वाली थीं। महारानी के शिर पर मुकुट न था, परन्तु उनके जवाहरात अद्भुत शोभा दे रहे थे। वेदी पर रक्खी हुई दो कुर्सियों में से बाईं कुर्सीपर जब महारानी बैठ गईं तब महाराज का जुलूस आगे बढ़ा। महाराज ने महारानी के पास से जाते समय उनके सामने बड़ी गम्भीरता से शिर झुका दाहिनी ओर रक्खी हुई कुर्सी पर बैठ गये। तदन्तर महाराज और महारानी दोनों ने अपने सामने रक्खे हुये दो स्टूलों पर घुटने टेक कर प्रार्थना की। पुनः महाराज का का लार्ड लोगों ने अभिषेक किया। पश्चात् महाराज पर एक विशेष प्रकार का सुनहरा आच्छादन पट डाला गया। उन्हें राजकीय अंगूठी और दस्ताने दिए गये,

दो राज दण्ड भी दिये गए। पुनः महाराज सब वस्त्र, आभूषण अङ्गलित्राण व दोनों हाथों में राज दण्ड लिये हुये नंगे शिर पूर्ववर्ती राजाओं के सिंहासन पर जाकर आसन ग्रहण किया। पश्चात् 'क्रोन आफ सेंट एडवर्ड" नामक राजमुकुट वेस्टमिन्स्टर के बड़े पादरी ने वेदी से उठा कर आर्क विशप को दिया। उन्हों ने बड़े भक्ति भाव से महाराज के शिरपर रख दिया, उधर लार्ड लोगों ने भी अपने २ पद सूचक शिरश्चिन्ह या लघु मुकुट अपने २ शिरों पर रक्खे। पुनः सारा जनसमुदाय खड़ा होगया और "ईश्वर महाराज की रक्षा करै" की ध्वनि गूंज उठी, बाजे बजने लगे। दूरस्थित तोपों ने भी बाढ़ें दागनी प्रारम्भ कीं। पश्चात् आर्क विशप ने महाराज को आशीर्वाद दिया और कुछ समयोचित बातें कहीं पुनः महाराज वहां से उठ ऊंचे चबूतरे पर रक्खी हुई दाहने तरफ़ की कुर्सी पर जा बैठे। वहां आर्क विशप ने महाराज के सामने घुटने टेके। पश्चात् अन्य विशपों ने अपने २ स्थान पर हा घुटनेके बल बैठकर महाराज की आधीनता: प्रभुता स्वीकार की। आर्क विशप ने उनके बायें कपोल का चुम्बन किया। उनके बाद महाराज के वंशज राजकुमारों का नम्बर आया। सब से पहले युवराज प्रिंस आफ़ वेल्स उठे और घुटनों के सहारे पिता के सम्मुख बैठ गये।

"मैं एडवर्ड नाम का प्रिन्स आफ़ वेल्स आज से आप का आज्ञाकारी प्रजा जन हुआ। मैं जीवनावधि आप की सेवा शुश्रूषा करूंगा। मैं अपने को आप से अलग समझूंगा। आप पर मैं श्रद्धा पूर्वक विश्वास करूंगा। प्रतिपक्षियों के मुकाबले मैं आपके साथ मरने जीने को सदा तत्पर रहूंगा। परमात्मा मेरी रक्षा करे"।

इतना कह वे बड़े गम्भीर भाव से उठे और राजमुकुट को

अपने हाथ से छुआ और वहां से हटने लगे। परन्तु महाराज ने बड़े प्रेमसे अपनी तरफ खींच छाती से लगा बारम्बार मुख चुम्बन किया। इसके अनन्तर सबने अपने २ पदानुसार एक के बाद एक ने महाराज की राजभक्त प्रजा होना स्वीकार किया। अन्त में खूब बाजे बजे, पश्चात् उपस्थित जन समुदाय ने उच्च स्वर में "परमेश्वर राजा जार्ज की रक्षा करें" "राजा चिरञ्जीव हो!" का निनाद किया।

इस प्रकार महाराज का अभिषेक समाप्त हुआ।

अब महारानी के अभिषेक की बारी आई। अबतक जितने संस्कार हुए, उसको वे उसी कुर्सी पर बैठी देखती रहीं। अब वे उठीं। उठकर सेंट एडवर्ड नामक कुर्सी के बीच में रक्खे हुए स्टूलपर नत जानु हुईं। ड्यूक नामक रईसोंकी चार लेडियों ने महारानी के ऊपर सुवर्ण रञ्जित वस्त्र, जिसे छत्र कहना चाहिये, धारण कराया। पश्चात् आर्क बिशप ने पवित्र अभिषेक तैल से उनके केश कलाप को अभिषिक्त किया। पुनः धर्माधिकारी, आर्क बिशप ने महारानी के शिर पर धीरे से मुकुट रक्खा त्यों ही अमीरों और रईस लार्डों की पत्नियों ने अपने २ पद सूचक चिह्न शिर पर रक्खे। तदुपरांत महारानी दोनों हाथों में राज चिह्न सूचक दण्ड लिये हुए उठीं और अपने सिंहासन पर महाराज के पास जाकर बैठ गईं। पश्चात् महाराज महारानी दोनों वेदी पर गये, वहां कुछ उपहार चढ़ाया और अन्तिम धर्म कृत्य समाप्त कर आर्क बिशप के हाथ से मधरोटी का प्रसाद प्राप्त किया। पुनः दोनों राजा रानी ने अपनी २ कुर्सियों को छोड़ वेदी की प्रदक्षिणा की और कुछ देर के लिये सेंट एडवर्ड नामक गिरजाघर में गये। वहां से लौटने पर महाराज शाही पोशाक में थे, शिर पर उनके शाही मुकुट था, जिस पर बहु मूल्य रत्न चमक रहे थे,

महारानी के मुकुट का कोहनूर हीरा अपनी अप्रतिम प्रभा चारों ओर छिटका रहा था, अब जुलूस के लौटने का उपक्रम हुआ। ज्यों ही गिरजाघर से सब पुरुष निकलने को हुए त्यों ही वेस्ट मिन्स्टरके हेडमास्टरने राजा रानीके लिये तीन वार जय ध्वनि की। पुनः महाराज और महारानी शाही गाड़ी पर सवार हुए। राजा रानी, प्रजा के अभिवादन का उत्तर बड़ी प्रसन्नता से देते जाते थे। इसी तरह बड़ी देर में धीरे २ सवारी बकिंहम महल के फाटक पर पहुंची, महाराज महारानी ने महल के भीतर प्रवेश किया। परन्तु चार ही मिनट बाद दोनों ने महल के सामने ऊपर बरामदे में फिर दर्शन दिया. तोपों ने फिर सलामी उतारी। महल के फाटक के नीचे जल और थल सेना के समूह में प्रजाजन भी मिल गये। तीनों ने एक होकर जो खोल अभ्रभेदी जय जयकार किया। राज्याभिषेक की रातको लन्दनके मकानों व दूकानों व बाज़ारों और सड़कों की शोभा अवर्णनीय थी। २३ जून को महाराज और महारानी का जुलूस लन्दन को खास २ सड़कों से निकला। २७ जून को उन्होंने राजभवन में छः हज़ार मेहमानों का प्रीति भोज दिया। ३० जून को अपने क्रिस्टल राज प्रसाद में एक लाख छोटे २ बच्चों को नाना प्रकार के स्वादिष्ट भोजन कराये पश्चात् राज दम्पति ने आयर्लेंड और स्काटलैंड में घूमने के लिये प्रस्थान किया।

अब, बीबी ज्वालादेवी ! उन्हीं श्रीमान् पञ्चमजार्ज और महारानी मेरी का तिलकोत्सव १२ दिसम्बर सन् १९११ को दिल्ली में होगा। जिस के लिये बड़ी २ तैय्यारियां हो रही हैं, और उस में सब ही भारतीय नरेश जायेंगे। यह अपूर्व शोभायुक्त उत्सव होगा। सम्पूर्ण भारतीय इङ्गलैंडीय प्रजा गण अपने २ नगरों ग्रामों में इस उत्सव को मनायेंगे।

ज्वालादेवी—बीबी जी ! हो सका तो मैं अवश्यमेव दिल्ली जाऊंगी ।

प्रियंवदा—जाना अवश्य चाहिये, क्योंकि ऐसे बड़े उत्सव बारम्बार नहीं होते । प्रिय सखी ! सुशीला कब आयेगी, उस को गये आज तीसरा दिन है ।

ज्वालादेवी—कल सोमगुप्त गया है । आशा है कि कल अवश्यमेव आजायगी । पुनः सब इधर उधर की बातें करती रहीं । सायंकाल को संध्या की और आठ बजे भोजन कर सब ने अपने २ स्थानों पर जा शयन किया ।

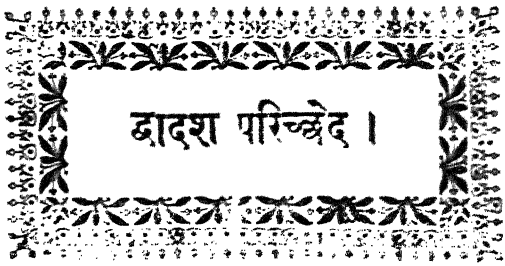

द्वादश परिच्छेद ।

दो बजे के पश्चात् ।

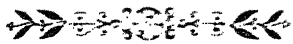

ज्वालादेवी—मनोरमा-मनोरमा !

मनोरमा—क्या आज्ञा !

ज्वालादेवी—प्रियंवदा, यशोदा आदि सब बाहर से पधारी हुई देवियों से सुशीला के आनेके समाचार कह आ !

मनोरमा—बहुत अच्छा, कह कर गई और सब को सूचना दे आई । प्रियम्वदा, यशोदा और उनकी दोनों बहुएं सब चलदीं और ज्वालादेई के स्थान पर पहुंची ।

ज्वालादेवी—आइये, नमस्ते । सब स्त्रियों ने, नमस्ते आदि की और बैठ गईं, इतने में सुशीलाने आकर सबको हाथ जोड़ नमस्ते की और पास बैठ गईं । सबने प्यार किया ।

प्रियम्वदा—सुशीला तुम अच्छी रहीं, तुम्हारी सास कुछ पढ़ी लिखी है-स्वभाव आदि कैसा है ?

सुशीला—देवी जी वह तो संस्कृत व्याकरण अच्छे प्रकार से जानती हैं और धारा प्रवाह सरल संस्कृत बोलती हैं ।

स्वभाव बड़ा उत्तम है। और कर्मेष्ठी हैं। प्रति दिन सायं प्रातः संध्या हवन करती हैं।

निर्मदा–उन के गृह की व्यवस्था कैसी है?

सुशीला–गृह प्रबंध देखने योग्य है। प्रथम तो सब बहुयें सासु की आज्ञानुसार कार्य्य करती हैं। हिसाब किताब बड़ी बहूजी के हाथ है। भंडार का कार्य्य उनकी मँझली बहू करती हैं। भोजन पंडितानी बनातीहैं। चार दासियां, गृहकी स्वच्छता, वस्तुओं के लाने आदि के लिये हैं। सासु जी सब के कार्य्यों को देखती रहती हैं। वहभी सबपढ़ी लिखी और योग्य हैं। माताजी पुत्री के समान पालन करती हैं। जहां उष्ण काल का समय आया, सब उठकर मकान के पास एक छोटी सी वाटिका है (जिसके दो भाग हैं एक स्त्रियों के लिये, दूसरा पुरुषों के अर्थ) वहां स्त्रियां अपने स्थान में पहुंच शौच, दातौन, स्नान कर अपने अपने आसनों पर बैठ संध्या करतीहैं। उस समय बड़ाही आनन्द आता है, जब कि वह सब मिलकर मंत्र बोलती और संध्या के पश्चात् गृहमें जाकर पतियों सहित हवन करतीहैं। इतने में दासियां गायों का दूध मिश्री संयुक्त लेकर आजाती हैं तब सब उसको पीकर अपने २ कार्य में लग जाती हैं। रसोई में पथ्याऽपथ्य पर बड़ा ध्यान रहताहै। दस बजे भोजन शाला में बलिवैश्वदेव हो जाता है। फिर सब भोजनों को आते हैं। बाद ३ बजे तक सब निवृत्त होकर अपने २ स्थानों पर जाकर विश्राम लेती हैं। दो बजे सब सासु जी के पास जाकर चरण छूती हैं। उस समय कभी २ पुस्तक और समाचार पत्र पढ़े जाते हैं। किसी दिन सासु जी उपदेश करती हैं। फिर सब अपने २ काम में लगजाती हैं। सायंकाल को भी संध्या हवन के पीछे भोजनादि से निवृत्त होकर सासु जी को महाभारत सुनाती हैं। सब प्रसन्न चित्त रहती हैं।

यशोदा—सन्मानादि के विषय में सासुजी क्या कहती थीं?

सुशीला—सब आने जानेवाली स्त्रियों से बड़ी प्रशंसा करती थीं। बड़ा सन्मान किया, बहुत दिया।

ज्वालादेवी—मेरी प्यारी सहेलियों! मेरी यह इच्छा है कि कल मैं अपनी सब सहेलियों को निमन्त्रण दे बुलाऊं और हवन के पश्चात् प्रिय प्रियंवदा का व्याख्यान कराऊ।

यशोदादि—आपने बहुत अच्छा विचार किया है।

ज्वालादेवी—मनोरमा, मनोरमा, मनोरमा!

मनोरमा—क्या आज्ञा?

ज्वालादेवी—तू नायन से कह आ कि कल प्रातःकाल से हवन होगा, उसका बुलावा दे आवे। और पहले सामग्री का पर्चा इस को मंगवा कूटकर रखदे। पुनः मनोरमा ज्वालादेवी की आज्ञानुसार कार्य कर आती है।

यशोदा—बीबी जी बाँटने के लिये क्या सोचा है।

ज्वालादेवी—बूंदी के चार २ लड्डू।

प्रियंवदा—अति उत्तम।

पश्चात् सायंकाल तक बातें होती रहीं और सब ने ७ बजे संध्या को हवन के पश्चात् भोजन कर अपने २ स्थानों पर विश्राम किया।

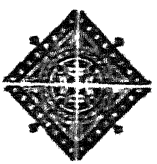

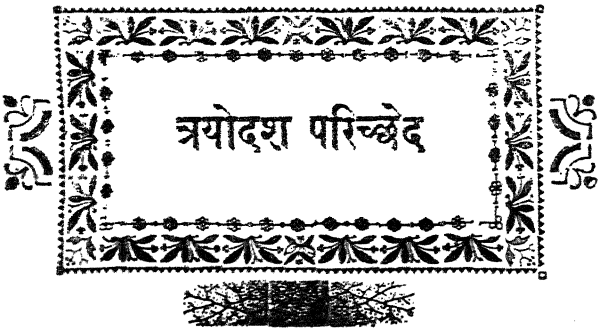

त्रयोदश परिच्छेद

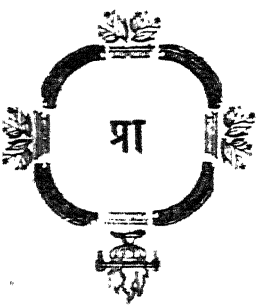

प्रातःकाल प्रियंवदा ने यज्ञ स्थान में बिछौने आदि ठीक करा दिये सात बजते ही स्त्रियों का आना प्रारम्भ हो-गया हवन के निश्चित समय तक यज्ञ स्थान खचाखच भर गया। आठ बजे हवन प्रारम्भ हुआ और समाप्त होने के पश्चात् भजन हुये। तदुपरांत प्रियंवदा जी ने ज्वालादेवी की आज्ञानुसार खड़े हो ईश्वरोपासना कर कहा कि प्यारी बहनो! संसारमें यह शरीर बड़े कर्मों के करने से प्राप्त होताहै। ऐसे अमूल्य शरीर को पाकर जो स्त्रियां सत्कर्मों को नहीं करतीं उनको अनेक योनियों में जाकर दुःख भोगना पड़ता है। इस लिये सब सुखों के देने वाली विद्या को ब्रह्मचर्य आश्रम के साथ पढ़ सत्कर्मों को करना ही श्रेष्ठ है। क्योंकि मरने के समय पश्चात्ताप करने से कुछ लाभ नहीं होता, जिस प्रकार मकान में आग लगने पर कुआं खोदने से। इस लिये बुद्धिमान् स्त्रियां परलोकगमन होने से प्रथम अपने सुकर्मों की पूंजी को संग्रह

कर मत्यु समय पर बिना पश्चात्ताप के परलोक गमन कर आनन्द को प्राप्त करती हैं।

देखो, किसी देश में यह नियम था कि पांच वर्ष के लिये एक राजा नियुक्त होता था और उसके पश्चात् तुरन्तही एक उजाड़ जंगल टापू में भेज दिया जाता था कि जहा उसको अपना शेष जीवन महा दुःख के साथ बिताना होता था। इस लिये जाते समय राजा बड़े दुःखी होते थे। कालांतर में एक बड़ा बुद्धिमान चतुर राजा राज्य पर बैठा उसने अपने राज्य काल में उस टापू को शहर के सदृश मनोहर बना दिया, जहां मनुष्य को सब प्रकार से शान्ति मिल सके। पुनः उसके राज्य काल समाप्त होनेपर पूर्व नियमानुसार वह राजा भी प्रसन्नता के साथ उस टापूको प्रस्थान करने लगा। उसकी प्रसन्नता को देख सब मन्त्रियों रईसों आदि ने राजा से पूछा कि महाराज ! आप की इस प्रसन्नता का क्या कारण है ?

दूसरे राजा लोग उस टापू को भेजे जाते थे, वह रोते, चिल्लाते, शोकार्त्त होकर जाते थे। परन्तु हम आज आप को जाने के समय प्रफुल्लित देखते हैं। तब राजाने उनसे उत्तर में कहा कि भाई मैंने यहां से अत्युत्तम उस टापू को बना लिया है। यहां पांच वर्ष का राज्यसाशन और वहां जीवन पर्यन्त का, इस लिये मुझको शोक नहीं। इसी प्रकार जो स्त्री पुरुष अपने परलोक गमन होने से प्रथम सत्कर्मों की पूंजी को संग्रह कर लेते हैं। उनको किसी प्रकार का क्लेश नहीं होता। इस लिये सब मिलकर तन, मन, धन से सत्कर्मों की पूंजी को संग्रह करने में उस राजा के समान यत्नवान हो। ओंशम् पश्चात् प्रियंवदा ने हारमोनियम पर भजन गाये।

——:o:——

भजन ।

टेक—सखी गाओ मंगलाचार, आज घर शान्ति हुई ।
स्वस्तिवाचन और शान्तिपाठ सब, सुनकरलोग प्रसन्नहुएँ सब
धन २ है कर्त्तार । आज घर शान्ति हुई १ ॥
हम सबको प्रभु शरण में लेओ, सारे ही सुख हमको देओ ।
दुःख के मोचनहार । आज घर शान्ति हुई २ ॥
सुख दे हमको यह जग सारा, दुख होवे हम सबसे न्यारा ।
तीनों ताप प्रभु टार । आज घर शान्ति हुई ३ ॥
सूर्य्य चन्द्र और यह तारे, फूल वनस्पति जो हैं सारे ।
दें सुख सर्व प्रकार । आज घर शान्ति हुई ४ ॥
अभयं मित्रादभयमित्रितादभयं ज्ञातादभयं परोक्षात् ।
होवे अभय संसार । आज घर शान्ति हुई ५ ॥
द्यौःशान्तिः अन्तरिक्षंशान्तिवायुः शान्तिःपृथ्वी शान्तिःशान्ति
जल की पुकार । आज घर शान्ति हुई ६ ॥
ओषधिःशान्तिःवनस्पतिःशान्तिःविश्वेदेवाःशान्तिःब्रह्मशान्तिः
शान्ति हो त्रयबार । आज घर शान्ति हुई ७ ॥
शान्तिरेधि शान्तिःशान्तिःभौतिक अग्नि भी देवे शान्तिः ।
हे दयाके भण्डार । आज घर शान्ति हुई ८ ॥
पश्येम शरदःशतम् जीवेम शरदः शतम्, शुद्ध होवे व्यवहार ।
आज घर शान्ति हुई ९ ॥
शृणुयाम शरदः शतम् अदीनाः स्याम शरदः शतम् होवे ना
ब्लाचार । आज० १० ॥

भजन ।

टेक—मेरी यह अर्ज़ जगदीश्वर, दयाकर आप सुनलीजै ।
हमारे जार्ज पञ्चमको, चिरायुः हे प्रभो ! कीजे ॥
दयामय आप हैं स्वामिन, अदल भी आपका कामिल ।
हमारे राजराजेश्वर, को दोनों ही अता कीजे ॥ १ ॥
दया से दुःख को मेट, अदल से मुःख फैलावें ।
पिता के धर्म हैं जितने, वह सारे ही सिखा दीजे ॥ २ ॥
बताया राज का मारग, पिता तुमने जो वेदों में ।
उसी मारग का अनुयायी, शहंशाह को बनादीजे ॥ ३ ॥
विनय अन्तिम यह शर्मा की, पिता जी आप से हरदम ।
हरिश्चन्दरसा सतवादी, करण सा दानी करदीजे ॥ ४ ॥

पश्चात् ज्वालादेवी की आज्ञानुसार श्रीमती यशोदा देवी ने सब स्त्रियों को लड्डू दिये और सभा विसर्जन हुई । इधर प्रियम्वदादि ने भोजन कर विश्राम किया और दो बजे के पश्चात् सब अपने २ कार्य में लगगई । और सायंकाल को भोजन कर सबने विश्राम किया ।

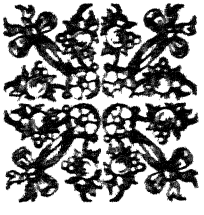

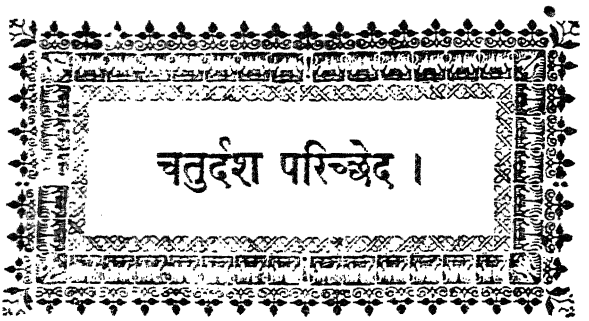

चतुर्दश परिच्छेद ।

प्रातःकाल प्रियम्वदा का सेठानी ज्वालादेवी के यहां जाना और वार्त्तालाप ।

प्रियम्वदा—बीबी ज्वालादेवी ईश्वर की कृपा से विवाह आनन्द पूर्वक होगया, बेटी सुशीला भी आगई अब मुझ को जाने की आज्ञा दीजिये। प्रियम्वदा ने इतना कहा कि ज्वालादेवी, सुशीला आदि के हृदयों में सन्नाटा छागया। प्रेम से हृदय गद्गद् होने लगा। ठीक है प्रेम के आधार ही सारा संसारहै, प्रेमहीका अवलम्बनकर माता,पिता,भाई, बहन स्त्री पुरुष एक घर में बसते हैं। दूर रहने वाली हमारी देवी प्रियंवदा भी प्रेम ही के कारण आकर्षित की गई। प्रेम ही के कारण देवी यशोदाके सम्पूर्ण क्लेश दूर हुए। सच तो यहहै कि मनुष्यों का समुदाय बांध कर रहना प्रेमका ही कारण है। भार्या का पोषण, सन्तानका पालन, विद्या और धन का उपार्जन भी प्रेमही कराता है। अनजान पुरुष जब प्रेम पाश में फँसता है तो अपने प्रीति भाजन के लिये प्राण दान तक कर देता है। मनुष्य ही नहीं वरन् पशु, पक्षी तक प्रेम के सहारे जोड़े से रहकर अपने अण्डे बच्चे सेवते हैं सुतराम् जड़ व चेतन सबका मेल प्रेम पर ही निर्भर है। सच तो यही

है, जिस दिन प्रेम नष्ट होगा, उस दिन संसार भी नष्ट हो-जायगा। जिस प्रकार राजा का प्रेम प्रजा पर होने से राज्य की मूल भक्ति पाताल पहुंचती है। ठीक उसी प्रकार हमारे सेठानी ज्वालादेवी प्रेम के पाश में बँधी हुई कुछ देर तो देवी प्रियंवदा की ओर टकटकी लगाये देखती रहीं, अन्त को बड़ी कठिनता पूर्वक प्रेम के दो आँसू डाल गद्गद वाणी से बोलीं—

ज्वालादेवी—हे मेरी प्राणप्यारी देवी प्रियंवदा! भला मैं किस प्रकार से आपके जाने के लिये कह सकती हूँ।

प्रियंवदा—बीबी जी, यह ठीक है क्योंकि आप का प्रेम मेरे ऊपर बहुत है। जिसका मैं वर्णन नहीं करसकती। विवाह उत्सव सानन्द समाप्त होगया, ईश्वर की कृपा से अब और कोई कार्य होगा तब फिर दर्शन करूंगी। यदि प्रिय पुत्री की परीक्षा न होती तो दो चार दिन और रह जाती, अतएव अब आज्ञा ही दीजिये।

ज्वालादेवी—हां ऐसी ही मेरी अभिलाषा थी, ४ या ६ रोज़ आप और रहतीं, पर क्या कहूं वह भी तो अपना ही कार्य है ईश्वर करै प्रिय पुत्री उत्तीर्ण होजावे और आप फिर दर्शन देवें।

सुशीला—माता जी! गंगादेवी व जयदेवी सहित यशोदा देवी आ रही हैं।

यशोदा—नमस्ते प्रिय बहन!

ज्वालादेवी—नमस्ते, आइये बैठिये।

यशोदा—प्रिय प्रियंवदा जी! क्या बातें कर रही हो?

प्रियंवदा—मैं तो आज सेठानी जी से जाने की आज्ञा मांगने आई हूँ।

यशोदा—आज ही मैं भी अवश्य आप के साथ ही १२ बजे की गाड़ी से चलूंगी।

प्रियंवदा—अति उत्तम होगा।

ज्वालादेवी—वाह खूब कही, अभी आप जाकर क्या करेंगी।

यशोदा—वैसे तो अभी चाहे न जाती पर देखो कृष्ण-चन्द्र, जयचन्द्र की बहुयें भी यहां ही हैं, घर पर लाला जी इकेले ही हैं इससे सब कार्य ढीले होरहे होंगे।

ज्वालादेवी—अच्छा तो आप दो तीन दिवस बाद चली जावें।

यशोदा—नहीं प्यारी बहन! मुझको श्रीमती के साथ ही जाने की आज्ञा दो, बड़ी कृपा होगी!

ज्वालादेवी—मनोरमा, मनोरमा, मनोरमा।

मनोरमा—क्या आज्ञा?

ज्वालादेवी—तू लाला जी से गाड़ी के लिये कह आ, आज श्रीमती प्रियंवदा जी व यशोदा देवी जायंगी।

गंगादेवी—मनोरमा ज़रा ठहर, सेठानी जी! हम दोनों को भी आज्ञा दीजिये।

ज्वालादेवी—श्रीमती, तुम आज मत जाओ, एक साथही मेरा गृह सूना हो जायगा।

जयदेवी--देवी जी हम दोनों को आये १५ दिन हो गये अतएव आज ही आज्ञा दीजिये।

ज्वालादेवी-अच्छा मनोरमा इनके लिये भी कह आना।

मनोरमा-जो आज्ञा, इतना कह मनोरमा बाहर गई और कह कर शीघ्र आ सूचना दी।

प्रियंवदा-अच्छा अब जाती हूं, पुनः शीघ्र आऊंगी।

ज्वालादेवी--जो आपकी इच्छा, इतना कह नमस्ते कर प्रियंवदा जी चल दीं।

यशोदा-हम सब भी जायंगीं, अभी सामानादि ठीक करना है।

ज्वालादेवी-अच्छा नमस्ते! पुनः सब, अपने २ स्थानों को पधारीं। सेठानी जी अपने कार्य में लगगईं।

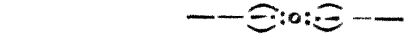

यशोदा का बहुओं और पुत्रों समेत रामबाग़ में जाना और वार्त्तालाप।

प्रियंवदा-आइये बैठिये, पुनः दोनों पुत्रों और बहुओं ने पैर छुए और बैठ गये।

प्रियंवदा-बेटो चिरंजीव हो, मैं आज बारह ब्रजे की गाड़ी से जाऊंगी और फिर न जाने कब भेंट हो, अतएव हे पुत्रो यदि तुम अपने जीवन को सुख पूर्वक बिताना चाहते हो और

संसार में यश प्राप्त करने की इच्छा है तो अपने माता पिता आदि की सेवा करते हुये, उनकी आज्ञा पालन करना ही तुम्हारा सच्चा कर्त्तव्य है। जो कार्य करो सदा विचार कर करो बिना विचारे कार्य करने पर पीछे बड़े दुःख उठाने पड़ते हैं। देखो मैं तुमको एक दो उदाहरण सुनाती हूं।

किसी ग्राम में महा विद्वान् एक पंडित रहते थे उनके भारवि नामक विद्वान् पुत्र था. भारवि के पिता भारवि से मन ही मन तो प्रसन्न रहते थे पर बाहर वे अपनी प्रसन्नता कभी न प्रकट करते थे. परन्तु कभी २ भारवि को ज़रा २ सी बातपर झिड़का करते थे। उनका प्रयोजन था, कि भारवि को अपनी विद्वता का गर्व न हो। भारवि को पिताका आन्तरिक भाव मालूम न था। जिस का फल यह हुआ कि भारवि पिता की भर्त्सनाओं से तंग आकर पितृ हत्या करने को उद्यत हुये। भारवि के पिता एक रात अपने कमरे में लेटे हुए थे दैवयोग से भारवि की माता भी उसी कमरे में थीं इधर भारवि भी इसी रात पिताका काम तमाम करनेके लिये उस कमरेके दरवाज़े पर आये। वहां उन्हों ने माता को कुछ कहते सुना वे उसे चुप चाप खड़े हो सुनने लगे।

माता—स्वामिन्! चन्द्रमा कैसा भला मालूम होता है उस का दिव्य प्रकाश कैसा सब तरफ़ फैला हुआ है।

पिता हां चन्द्रमा का प्रकाश वैसे ही फैला हुआ है जैसे भारवि के विद्वत्व का निर्मल यश।

यह सुनते ही भारवि पर वज्रपात हुआ, उस समय वे अपने कमरे में लौट गये और प्रातः ही पिताजी के सम्मुख अपना मन कल्पित पाप स्वीकार किया। पिताने अपराध को क्षमा कर १२ वर्ष ससुराल में रहने की आज्ञा दी। भारवि ने

स्वीकार कर स्त्री सहित ससुराल को गये। कुछ दिन तक तो ससुराल में उनका आदर रहा, परन्तु फिर भारवि को गौ चराने का कार्य मिला। जब वे बाहर गायें चराने जाते थे, तब वह जंगल में प्रति दिन दो चार श्लोक बनाया करते थे। भारवि की स्त्री अपनी दासवृत्ति की शिकायत हर दिन करती थी। एक दिन भारवि ने अपनी स्त्री को बहुत कुछ समझाया, दूसरे दिन भारवि इस श्लोक का हाथमें ले एक धनी महाजनके पास गिरवी रखने गये।

सहसाविदधीतनक्रियामविवेकः परमापदाम्पदम् ।
वृणुतेहि विमृश्यकारिणं गुणलुब्धाः स्वयमेव सम्पदः ॥

अर्थात्-आदमी को कोई काम बिना विचार किये सहसा न करना चाहिये, जो लोग सोच समझ कर काम करते हैं उन के गुणों पर लुब्ध हो सम्पदायें भी कभी नहीं उस का साथ छोड़तीं। उस महाजन ने श्लोक के तात्पर्य को सुन प्रसन्नता पूर्वक यथेष्ट धन दे भारवि को विदा किया।

कुछ दिनों के पश्चात् वह बनिया व्यौपार के लिये परदेश को चला गया। और वहाँ से वह दश वर्ष बाद लौटा।

इस समय इस का एक मात्र पुत्र युवा हो गया। वणिक सुत को जब अपने ग्राम में आया, तब उस ने अपनी स्त्री के चरित्र की परीक्षा करनी चाही। इस लिये वह किसी प्रकार छत पर चढ़ आंगन में उतरा और सोने के कमरे में गया। वहां उस ने देखा कि उसकी स्त्री के पलंग पर एक पुरुष भी है, यह देख क्रोध से जल उठा और दोनों का सिर धड़ से अलग करने के लिये उसने तलवार को म्यान से निकाल ज्यों

प्रहार करने को उठाई, त्योंही उसकी नोक भारवि के श्लोक में लगी और वह नीचे गिर पड़ी। इस पर उसको श्लोक के स्मरण के साथ ही साथ अर्थ भी याद आ गया। तब उसने अपनी स्त्री को जगाया और पूछा कि पलंग पर कौन है। यह सुनतेही स्त्रीने उसके ऊपरसे चादर खींचली। वणिक ने देखा कि वह पुरुष कोई और नहीं है उसीका पुत्र है। पुनः उसने उस श्लोक को सुवर्णांकित कर ऐसी जगह रक्खा जहां उसकी सर्वदा दृष्टि पड़ती रहे।

एक साधु था उसने एक शहर में घूमकर यह आवाज़ लगाई, कि मैं एकबात एकलाख में बेचता हूं। जिसको चाहिये लेले बात क्या है मानो पारस के टुकड़े से भी बहु मूल्य है। जब किसी नगर निवासी ने उस की बात को मोल न लिया। तबवह साधु उस नगरके राजा के पास गया और दरबार में भी वही शब्द सुनाकर कहा कि "ले बाबा ले, हम तेरी नगरी से जाते हैं। हमें शोक है कि हमारी बात का कोई ख़रीदार न हुआ"। यह कह साधु चलने लगा, त्योंही राजाने अपने मंत्रियों से पूछा, तब उत्तर में मंत्रियों ने कहा, महाराज न जाने क्या बात है, योंही एक लाख रुपया व्यर्थ जावेगा। तब राजा ने कहा कि नहीं अवश्य लेना चाहिये। यह कह राजा ने फ़क़ीर को बुला एक लाख दे दिये। रुपये पानेपर साधुने कहा कि "राजा बिना विचारे कोई कार्य नहींकरना चाहिये"। बस यहीएक बात एक लाख की है। पश्चात् राजा ने अपने मकान, कोठी, बर्तन पर्दे पुस्तकादि सब व्यवहार की वस्तुओं पर साधु की बात लिखवादी। कुछ काल के पीछे राजा को फ़स्त खुलाने की आवश्यकता हुई। इस बात को राजा के किसी शत्रु ने जान फ़स्त खोलने वाले से मिल फ़स्त खोलने के हथियारों को विष में बुझवा दिये। जब वह राजा के यहां गया, तब वहां

उसीने राजा के हाथ के नीचे पतीली रक्खी। त्योंही उनकी दृष्टि उपरोक्त वचन पर पड़ी, फिर क्या था फिर तो उसका मन डामाडोल होने लगा, हाथ कांपने लगे मुख पर पसीना आगया। राजा ने उसका हाव भाव देख पूछा कि भाई क्या बात है, सच २ कहदो, तुम को हम जीवन दान देते हैं। यह सुन उसने सब वृत्तान्त राजा से कह दिया, तब राजा ने अपने मंत्रियों रानियों नौकरोंको बुलाकर कहा कि देखो उन एक लाख रुपयों ने इस समय हमारी जान बचाई। इसलिये पुत्रो, कभी बिना विचारे कार्य मत करो।

और जो पुरुष विचार कर कार्य करते हैं, वही धैर्यवान होते हैं और धैर्यवान स्त्री पुरुषों का मन निश्चल रहता है। तथा उन्हीं के नाम संसार के वीर पुरुषों में गिने जाते हैं। ऐसे ही महान पुरुषों और योग्य स्त्रियों के नाम इतिहास की शोभा को बढ़ाते हैं। नैपोलियन, बाबर, महाराजा रणजीतसिंह इसके लिये प्रसिद्ध हैं। हजरत ईसा, वा स्वामी शंकराचार्य, महर्षि स्वामी दयानन्द, महात्मा बुद्ध, महारानी सीता, रानी विदूला इन्होंने धीरता के कारण कैसे २ आश्चर्य जनक कार्य किये। इसी लिये तुम धीरता को धारण कर कार्यों को करो। इतना सुन कृष्णचन्द्र और जयचन्द्र ने देवी जी के पैरों को छू निवेदन किया।

कृष्णचन्द्र—हे हमारी धर्म माता जी! हम आपके उपकार का बदला नहीं देसक्ते। हां तन मन से आपकी आज्ञा का पालन करते हुये कार्य करेंगे, आप हम पर कृपा दृष्टि रक्खें और किसी अवसर पर अवश्य दर्शन देकर कृतार्थ करें। यह कह २५ अशर्फी देवी जी को भेट कीं।

प्रियंवदाः—

तच्चक्षुर्देवहितं पुरस्ताच्छुक्रमुच्चरत पश्येम शरदः शतञ्जीवेम शरदः शत ꣳ शृणुयाम शरदः शतं प्रब्रवाम शरदः शतमदीना स्याम शरदः शतं भूयश्च शरदः शतात् ।

बेटो ! ईश्वर की कृपा से तुम सौ वर्ष व उससे अधिक उसके गुण कीर्तन करते हुये सुख पूर्वक जीवित रहो। पुनः दोनों भाई आज्ञा पा चले गये। तदुपरांत यशोदा की बहुओंने परों को छू करजोड़ निवेदन किया।

बड़ीबहू—माता जी ! आप हमारी सच्ची माता हैं आपने हम दोनों के क्लेशों को दूर किया है। जिस का उपकार हम आयु पर्यन्त नहीं भूलेंगी, परमात्मा से प्रार्थना है कि वह शीघ्र आप के दर्शन करावे।

प्रियंवदा—बेटियो ! यदि तुम स्वसन्तानों से सुख प्राप्त करना चाहती हो तो जिस प्रकार मैंने तुमको शिक्षा की है उसी प्रकार कार्य करो। क्योंकि माता रूपी एक सांचा है। जो २ भाव तुम में होंगे वही तुम्हारा संतानों में अवश्य प्रवेश होंगे। देखो इंगलैंडीय रमणी विद्यावती हैं, तभी तो उन की संतानें विदुषी और उत्तम स्वभाववाली होती हैं। इस लिये, तुम विद्या, सत्य, शील, क्षमा, विनय आदि गुणों से पूर्ण स्वभाव को बनाओ। देवीजी के कथन समाप्त होने पर बड़ी बहू ने ५० पौण्ड दिये। पर देवी जी ने मना किया। तब यशोदाजी ने कहा कि हमरे यहाँ बहुएं पैरों पड़ाई दिया करतीहैं। अतएव अब तो आपको लेना ही होगा। तब बहुत कहा सुनी पर देवी जी ने स्वीकार किया।

यशोदा--हे मेरी प्यारी सखी प्रियम्वदा ! मेरी यही इच्छा थी कि आप मेरा गृह अपने चरणों से पवित्र करतीं, पर किस तरह कह सक्ती हूं जो उपकार आपने मुझ पर किया उसका धन्यवाद तो मैं दे ही नहीं सक्ती, केवल परमेश्वर से यही प्रार्थना करती हूं कि वह तुम्हारी दीर्घायु करे जिस से तुम हम सरीखी दुःखियों के क्लेशों को दूर कर भारत संतान को उन्नति के शिखर पर पहुंचाओ और तुम्हारे पुत्र, पुत्रियाँ चिरञ्जीवी होकर देश का सुधार करें।

प्रियंवदा--प्रिय यशोदा ! यदि पुत्री की परीक्षा न होती तो; अवश्य आप के गृह चल आपकी सेवा करती पर इस समय परवश हूं।

यशोदा--प्रियसखी ! पारसाल पुत्री सुखदा देवी का व्याह है, आप उस अवसर पर अवश्य पधार कर कृतार्थ करें, मैं २ मास प्रथम निमन्त्रण पत्र भेजूंगी, आप अवश्य १ मास पूर्व पधारने की कृपा करें।

प्रियंवदा--देखिये ईश्वर की कृपा हुई तो अवश्य आपकी सेवा करूंगी।

यशोदा--अब सेठानीजी के गृह को चलो ६ बज चुके हैं। कुछ वहां भी देर लगेगी।

प्रियंवदा--हां चलती हूं।

यशोदा बहुओं और प्रियंवदाका सेठानीजी के यहां जाना।

ज्वालादेवी -आइये बैठिये।

सुशीला-चलिये भोजन कर लीजिये।

प्रियंवदा-अच्छा। इतना कह सबने भोजन किया। और पानादि खाने उपरांत।

यशोदा, प्रियम्वदा-अच्छा सेठानी जी, अब आज्ञा दीजिये ६॥ बज चुके हैं।

ज्वालादेवी--बैठिये कुछ देर ठहरिये।

पुनः सेठानी ज्वाला देवी जी ने सुशीला से कहा। वह एक सोने के कटोरे में ५ अशर्फी डाल देवी जी के सम्मुख आन नमस्ते कर वह भेंट दी।

देवी जी ने प्रेमपूर्वक स्वीकार कर उपदेश दिया।

प्रियंवदा—बेटी तुम विद्यावती हो। तुमने ब्रह्मचर्य्य, आश्रम को पूर्ण किया है, तुम अपने कर्त्तव्य को जानती हो, मैं आशा करती हूं कि तुम सत्य, अक्रोध, धृति, क्षमा, दम, स्तेय, शौच, इन्द्रिय निग्रहादि का यथावत् पालन कर दोनों कुलों का प्रकाश करोगी। ईश्वर करे जिस भांति दमयन्ती नल की, भद्रा कुबेर की, अरुन्धती वसिष्ठ की, द्रौपदी अर्जुन की प्यारी हुई उसी भांति तुम भी अपने पति की प्यारी बनो

ज्वालादेवी---मनोरमा, मनोरमा।

मनोरमा---क्या आज्ञा ?

ज्वालादेवी---बहन गंगादेवी व जयदेवी का सामान रख आओ।

मनोरमा---बहुत अच्छा। इतना कह मनोरमा गई और गाड़ी में यथास्थान रख आई।

सुनीति---देवी प्रियम्वदा जी ! मैं सब सामान रामबाग़ से गाड़ी में रखलाई, पौनेदस बजगये हैं अतएव शीघ्रता कीजिये

प्रियंवदा---अच्छा ठहर, ज्वालादेवी अब मैं जाती हूं, मेरे ऊपर कृपा रक्खें।

ज्वालादेवी---देवी जी ! भला कृपा आपकी चाहिये। और आप जब कभी इस मार्ग से देशाटन में जावें तब एक क्षण अवश्य यहां उतर पड़ा करें तथा कभी २ पत्र से भी याद कर लिया करें।

प्रियंवदा---मैं पत्र देती रहूंगी, रहा उतरना, जहां तक होसकेगा अवश्य इस आज्ञापालन में उद्योग करूंगी। पुनः ज्वालादेवी ने यशोदा व उनकी दोनों बहुओं व गंगादेवी, जय देवी को यथा योग्य भेंटें दीं। तत्पश्चात् ज्वालादेवी की दोनों बहुओं ने प्रियम्वदा, यशोदा और उनकी दोनों बहुओं, गंगादेवी जयदेवी के पैरोंको छुआ। पुनः सबने उनको आशीर्वाद दिया।

तत्पश्चात् श्रीमती ज्वालादेवी सब से खूब गले से लिपट मिलीं, सबने नमस्ते की, पुनः प्रियंवदादि सब गाड़ी में यथा-

स्थान जा बैठीं, लालाजीकी आज्ञानुसार चपरासी मुन्नीलाल व मनोरमा भी गाड़ी तक साथ गईं। और सबको गाड़ी में अच्छी तरह बिठाल गृह को लौट आये। और वह सब भी सकुशल अपने २ गृह में पहुंच यथायोग्य कार्य्यों में लगगईं

* * *

इस प्रकार यह यह वार्त्तालाप भी समाप्त हुआ अब आप से मेरा यही अन्तिम निवेदन है कि आप सब इस प्रेमधारा-रूपी लेख का वारम्बार पाठ कर अपने हृदय में सच्चे प्रेम का सञ्चार कर जगत् में प्रेम की धारा को फैलाइये जिससे इस अभागे भारत का उद्धार हो।

लीजिये देखिये

हिन्दी भाषा की सर्वोपयोगी पुस्तकें जिनसे दोनों लोकों में सुख की प्राप्ति होती है।

* ओ३म् *

॥ विज्ञापन ॥

प्रिय पाठकगणों ! तथा महिलाओ !

मैं आपके सन्मुख अपने मुंह अपनी पुस्तकों की प्रशंसा न कर केवल इतनाही कहना आवश्यक समझता हूँ कि यदि आपको संसार के बाल युवा और वृद्ध स्त्री पुरुषोंके जीवनों को आदर्श-जीवन बनाना है, यदि उनके हृदय में गम्भीर गम्भीर विषयोंका प्रवेश सरलतासे कराना है तो हमारी सम्पूर्ण पुस्तकोंका पाठ एक बार तो अवश्य ही अपने समस्त परिवार को करा दीजिये।

हमारी सम्पूर्ण पुस्तकों ने अपने रूप, लिखने के ढंग आदि गुणों की उत्तमता से भारतवर्ष में ही नहीं किन्तु ब्रह्मा, मारीशस, जावा, सौथ अफ्रीका आदि कितने ही प्रसिद्ध नगरों में नाम पाया है। पबलिक की कद्रदानी के कारण ही कई कई पुस्तकों के बारह बारह तक एडीशन निकल चुके हैं। कितने ही महाशयों ने उनकी काट छाँट कर बीसियों पुस्तकें रच अपनी मनोकामना सिद्ध करनी चाही, पर आप जानते हैं कि असल असल ही है और नक़लीकी वही दशा होती है, जैसे हांडी काठ की चढ़े न दूजी बार। अतएव आप हमारी बात, हमारे

विज्ञापन की सत्यता जानने के लिये एकवार अवश्य मँगाइये, अपने इष्ट मित्रों को दिखाइये और यदि हमारे लेखानुसार ही आप उनमें गुण पावें तो अपने स्कूल और कन्या-पाठशालाओं में (जैसा कि कतिपय प्रान्तों के सज्जनों ने किया है) पारतोषिक देने एवं उनको पाठ-विधि में रखने का उद्योग कीजिये जिससे भारत सन्तान विद्यारूपी भूषण से सुशोभित हो सुख का अनुभव करें।

भारत प्रसिद्ध स्त्री शिक्षाका सर्वोत्तम प्राचीन ग्रन्थ

नारायणीशिक्षा अर्थात् गृहस्थाश्रम

उक्त ग्रन्थ सन् १८८६ में रजिस्टर्ड हो प्रकाशित हुआ था पब्लिक की कदरदानी से अब तक २४,००० प्रतियां निकल चुकीहैं। यह पुस्तक बड़े परिश्रम से चार वेद छः शास्त्र अठारह स्मृति और अठारह पुराणों के अतिरिक्त चरक, सुश्रुत आदि ग्रन्थों और बड़े बुद्धिमान् स्पीकरों और मशहूर २ समाचार पत्रों के उत्तम २ आर्टिकलों से संग्रह कर गम्भीर गवेषणा पूर्वक लिखी गई है और उत्तमताके साथ प्रत्येक विषयको तर्क द्वारा सिद्धकर दिया है,सम्पूर्ण विषय ५००के लग भग हैं अर्थात् गृहस्थ सम्बन्धी कोई विषय ऐसा नहीं जिसका आन्दोलन इस में न किया गया हो यथा प्रथम आरोग्यता रहने के नियम, २-गर्भाधानकी रीति और उसके उपयोगी विषयोंका वर्णन, ३-ब्रह्मचर्य के यथावत् पालनके लाभ, ४-विद्या और गुरु, पुरोहित, आचार्य के लक्षण शिक्षा की आवश्यकता और प्राचीन समय की ५५ विदुषी धर्मात्मा,शूरवीर स्त्रियों के जीवन चरित्र, ५-विवाह कब और किस प्रकार होना चाहिये, ६-धन की महिमा,

७-दान महात्म्य, ८-पति पत्नी धर्म, ९-वेद, नीति की शिक्षायें, १० स्त्रीधर्म की महिमा, पतिव्रताओं की कथा, ११-गृहकार्य्यों का वर्णन अर्थात् रसोई, पकवान, मुरब्बे, अचार, गुलकन्दादि के बनाने की रीतें, १२-वैद्यक विद्या के लाभकारी विषय, १३-सीना पिरोना, १४-पतिधर्म, १५--धन प्राप्ति की रीतें, १६--संस्कारों के लाभ, १७--आवागमन, १८--धर्ममार्ग, १९--नित्यकर्म, २०--पुराण महात्म्य, २१--त्यौहार, २२--ज्योतिष, २३--मन्त्र यन्त्र, २४--रसायन, २५--व्रत, २६--तपस्या, २७--तीर्थ, २८--योग, २९--मोक्ष; आदि२ विषय लिखे गये हैं जिनका इस स्थान पर यथावत् वर्णन करना अत्यन्त कठिन हैं, दांतों का मंजन, आंखों का अञ्जन, मस्तक, धातु, वृद्धि के वलिष्ट करने स्त्रियों के रोग निवारणार्थ सुहाग सौंठ और स्त्री रोग चिकित्सा, लवणभास्कर, लोलिम्बराज चूर्ण, बवासीर खूनी और वादी आदि के उपयोगी नुसखे कौड़ियों में हाथ आयेंगे, बालकों के सम्पूर्ण रोगों की चिकित्सा, मोती, कस्तूरी की पहिचान, जानवरों के विष उतारने का उपाय, कपड़े रँगने की रीतें, प्राणायाम का ढंग जिसको प्राचीन ऋषियों ने बहुत कुछ प्रशंसा की है आप की भेंट है यह उत्तम अनुपम पुस्तक आप और आपका सन्तानों का शारीरिक सामाजिक और आत्मिक उन्नति के ढंग बतलाने में एक बुद्धिमान ड्राइवर है। जो आपकी इच्छानुसार आनन्द और मङ्गल देताहुआ धर्म अर्थ काम मोक्ष तथा अमूल्य पदार्थों को देनेके लिये उत्तम है तिस पर भी देशकी कुदशाको देख प्रत्येक गृहस्थ के हाथ में पहुंचाने के लिये रायल अठपेजी ६५० पृष्ठ होने और कागज़ आदि की ऐसी तेज़ी होने पर मूल्य १॥) रक्खा है। मित्रो ! इतनी सस्ती और ऐसी अच्छी यही पुस्तक है। जिसकी प्रशंसा में हमारे पास हज़ारों सार्टीफ़िकट आचुके हैं, सच मानिये कि, आप भी देखकर प्रसन्न होंगे।

नारायणीशिक्षा के कुछेक नवीन सार्टीफ़िकटों का सार।

श्रीमान् पं० महावीरप्रसाद जी द्विवेदी।

इसका सांचा बड़ा काग़ज़ अच्छा छपाई बम्बई टाइप्। इस इतनी सस्ती परन्तु उपयोगी पुस्तकका दूसरा नाम गृहस्थाश्रम है उसमें शरीर रक्षा शिशुपालन ब्रह्मचर्य्य, विद्या, स्त्री शिक्षा, विवाह, पतिपत्नीधर्म, आदि सैकड़ों बातें, जिनका जानना प्रत्येक गृहस्थ के लिये उपयोगी है, श्रुति स्मृति उपनिषत् पुराण आदि से, उल्लेख किया है। इस पुस्तक को लोगों ने इतना पसन्द किया है कि आजतक इसके ६ संस्करण होचुके हैं।

बाबू नन्दलालसिंहजी वर्मा बी०ए०एलएल बी०

उपमन्त्री आर्य्य प्रतिनिधि सभा यू० पी०

.....जी ने यह पुस्तक लिखकर स्त्री जाति का बड़ा उपकार किया है हम मु० जी को इस सफलता के लिये बधाई देते हैं नारायणी शिक्षा में प्रायः उन सब बातों का समावेश किया है जो बालिका युवति और वृद्धा तीनों के लिये विशेष उपयोगी है यदि इस "शिक्षा" को स्त्री उपयोगी बातों का विश्वकोश (Cyclopedia) कहें तो उचित है हमारी समझ में एक आध पुस्तकें ही इस शैली पर लिखी गई हैं पुस्तक सब प्रकार आदेयहै,प्रत्येकको अवश्य रखनी चाहिये।

श्रीयुत् एन् निरंजन स्वामी फ़ाइफ़ मेजर बूशायर.

महाशय जी, मैंने आपकी बनाई हुई किताब नारायणी शिक्षा को पढ़ा, मेरी आत्मा को जितना आनन्द मिला वह किसी प्रकार से नहीं लिख सका वास्तव में आपने सागर

को गागर में भरने का साहस किया है, योग्य गृहस्थ आपकी इस पुस्तक को पढ़कर बिना धन्यवाद दिये नहीं रह सकता।

* एक नवीन आविष्कार *

पुराणतत्त्वप्रकाश

तीनों भाग ५०० पृष्ठ मूल्य १॥।=) मात्र है।

लीजिये जनाब! आप पढ़ प्रेम से सनातनधर्मी भाइयों को पढ़ाइये और उनके सुयोग्य पंडितों से विचार कीजिये कि क्या यह अठारह पुराण महर्षि व्यास के बनाये हुए हैं? किताब क्या है पूरा पुराणों के तिलस्मात का भण्डार और कच्चा चिट्ठा है। प्रथम इसमें वेद बुद्धि और सृष्टिक्रम के विपरीत राजा वेन के मरने पर उसकी भुजाओं से निषाद और पृथु की उत्पत्ति, वृक्षों से मरीषा का जन्म, रेवती के छोटे करने की अजीब तर्कीब, राजा वेन का मरना, फिर उस से पुत्र की उत्पत्ति, बल्देव जी का मदिरा पान कर यमुना को खींचना, बलके शरीरसे सोना चांदीकी उत्पत्ति, राजा सागर की रानी से साठ हज़ार पुत्रों का जन्म, देवताओं से वृक्षों का पुत्र हो जाना, कच के टुकड़े कर राक्षसों को खिलाना, पुनः जीवित करना, ब्रह्माजी के कान से दिशाओं की उत्पत्ति, राजा का हिरणी के साथ वार्त्तालाप, मनु की पुत्रीका पुत्र होजाना, हिरणी के पेट से शृङ्गी ऋषि का जन्म, राजा की कोख से पुत्र का जन्म, जन्तु नामक पुत्र की चर्बी से हवन करने पर रानी के पुत्र का होना, ब्रह्मा, विष्णु शिव, देवी महारानी की करतूत, तामस पुराणों की रचना, ब्रह्मा विष्णु शिव का स्त्री होना। विष्णु के कान के मैल से मधुकैटभ की उत्पत्ति, इन्द्र चन्द्र सूर्य वशिष्ठ विश्वामित्र बृहस्पति, शुक्र की अपार लीला, त्रिदेव के अनोखे कर्त्तव्यों का फ़ोटो, कलिमहात्म और उसके

दूर करनेका सरल उपाय, गंगा महारानी की विचित्र उत्पत्ति मृतक श्राद्ध, गङ्गा का शापमोचन करना, गणेश भगवान् की अद्भुत उत्पत्ति। अहा पाठक गणो ! मैं कहां तक इस के विषयों को गिनाऊं। अतः यदि आप पुराणों की अजूबी सैर करना चाहते हैं ? यदि उनकी चटपटी अजूबा कथाओं को पढ़ने की इच्छा करते हैं ? यदि गप्पों का ख़जाना देखना है ? यदि वास्तव में जाड़े बुख़ार की व्यासोक्त औषधि की तलाश है ? यदि मूर्खा गृहणियों को आजकल की थोथी बातों से छुटाना चाहते हैं—यदि पुराणों को पञ्चम् वेद मानते हो तो ज़रा १॥।-) ख़र्च कर अवश्यमेव सत्यासत्य का निर्णय कीजिये।

सुनिये इसकी बावत लोग क्या कहते हैं।

श्री० पं० पद्मसिंह जी साहब सम्पादक

भारतोदय महाविद्यालय ज्वालापुर यू० पी०

इस पुस्तक में श्रीमद्भागवत, देवीभागवत, पद्म, विष्णु, लिङ्ग, अग्नि, कूर्म, वाराह, ब्रह्मवैवर्त्त, वामनादि पुराणों से सभ्यता पूर्वक यह दर्शाया है कि १८ पुराण महर्षि व्यास प्रणीत नहीं है। इस पुस्तक में आर्यसामाजिक दुनियां के ग्रन्थकारों में प्रसिद्ध मुं० चिम्मनलाल जी वैश्य ने बड़े परिश्रम से काम लिया है, खूब छानबीन के साथ पुराणों से प्रमाण इकट्ठा कर अपने मत की पुष्टि की है। लम्बी २ कथाओं का सार हिन्दी भाषा में लिख कर मूल प्रमाण यत्र तत्र उद्धृत किये हैं। पुस्तक का क्रम और लिखने का ढङ्ग अच्छा है। पुस्तक पढ़ने में जी लगता है। यह पुराणों के अनुयायी और विरोधी दोनों के देखने योग्य और काम की है।

उत्तमोत्तम देखने और विचारने योग्य महान पुरुषों के जीवन

सभ्य महोदयो, आज हमें, विशेष कर यह बतलाने की आवश्यकता प्रतीत नहीं होती, कि आपको 'महान् पुरुषों के जीवनों के पढ़ने के लाभों को विशद रूप से बतलाया जाय बस केवल इतना कहसक्ते हैं, कि संतानों के विचार प्रबल, संतानों की हृदय शक्ति सबल संतानों की विवेचनाएवं विचार शक्ति की वृद्धि, सन्तानों को धार्मिक, नीति आदि बनाने के अन्य उपायों के साथ प्राचीन तथा अर्वाचीन आदर्श पात्रों के जीवनों को पढ़ना बार २ मनन करना उनकी शिक्षा हृदयङ्गम करना ही एक मात्र सुलभ और सरल उपाय है इस देशहित की इच्छा से हमने कुछ महानुभावों के जीवन प्रकाशित किये हैं जिनका मूल्य भी अति स्वल्प है कृपया एक २ प्रति अवश्य मंगाकर आप पढ़ संतानों को पढ़ाइये।

सरस्वतीन्द्र-जीवन

(अर्थात्)

श्री १०८ महर्षि स्वामी दयानन्द सरस्वती जी का

जीवन-चरित्र

प्रिय पाठकगणो ! यों तो आपने स्वामी महाराज के हिंदी भाषा में कई एक जीवन देखे और पढ़े होंगे परन्तु यह निराली जीवन है इसमें मैंने जो परिश्रम किया है वह आपको पढ़ने

से ही विदित होगा। अतएव, अधिक अपने मुख से क्या प्रशंसा करूं। अनेकों प्रशंसापत्र आचुके हैं, आपके लिये उन में का आंशिक तत्व पेश करते हैं।

श्रीमान् ठाकुर गिरवरसिंह साहिब पूर्वोक्त अवै-तनिक उपदेशक श्रीमती आ० प्र० सभा

संयुक्त प्रदेश आगरा व अवध.

मैंने मुन्शी चिम्मनलालजी वैश्य लिखित सरस्वतीन्द्र जीवन को देखा और ध्यान से पढ़ा और बहुधा स्थानों पर धर्मेन्द्रजीवन से मिलान किया तो जान पड़ा कि इस में निम्नलिखित बातें अधिक हैं जो बड़ी उपयोगी और लाभदायक हैं।

(१) काशी शास्त्रार्थ पर कई एक समाचार पत्रों की सम्मतियां। (२) कलकत्ता, हुगली, डुमरांव और सहारनपुर और शाहजहांपुर में योग्य पुरुषों के प्रश्नों के यथावत् उत्तर (३) उदयपुर में स्वामी दयानन्द जी की दिनचर्या (४) महाराज उदयपुर को दिनचर्या का उपदेश (५) जैनियों के सुप्रसिद्ध पं० आत्माराम जी साधु सिद्धकरण जी के प्रश्नों का भले प्रकार समाधान (६) पादरी ग्रे साहिब अजमेर और बम्बई में एक पादरी साहिब से धर्मचर्चा, मसौदा में बा० विहारीलाल जी ईसाईसे प्रश्नोत्तर (७) आर्य संमार्ग संदर्शनी सभा का सविस्तार वर्णन और उसके प्रश्नों के उत्तर (८) मौलवी मुहम्मद अहसन साहिब जालन्धरी, मौलवी मुहम्मद क़ासिम साहिब, मौलवी मुहम्मद अब्दुलरहमान साहिब जज उदयपुर के शास्त्रार्थ (९) स्वामी जी को शिक्षा का क्या २ फल हुआ। इसकी भाषा सरल, प्रिय चित्त को लुभाने वाली है जिसको स्त्रियां भी समझ सकती हैं। काग़ज़ उत्तम स्याही और छापा श्रेष्ठ तिस पर भी मुन्शीजी ने सर्व साधारण

के सुभीते के लिये ४०० पृष्ठ होने पर भी मूल्य अत्यंत स्वल्प १=) सजिल्द १॥) ही रक्खा है।

श्रीयुत् सम्पादक "सरस्वती" प्रयाग

"स्वामी दयानन्द सरस्वती के जितने जीवन चरित्र प्रकाशित होचुके हैं उनमें से श्रीयुत लेखराम जी का उर्दू में लिखा हुआ जीवनचरित्र सर्व श्रेष्ठ है। उसी के आधार पर यह सरस्वतीन्द्र जीवन लिखा गया है। आपने लेखराम जी की पुस्तक से प्रायः सारी मुख्य २ घटनाओं की सामग्री उद्धृत करके इस पुस्तक की रचना की है पुस्तक में स्वामी जी के साधारण चरित्र के अतिरिक्त उनके शास्त्रार्थ, धर्म्मोपदेश, ग्रन्थ निर्माण आदि की भी बातें हैं पुस्तक बड़े बड़े ४०० पृष्ठों में है तीन चित्र भी लगाये हैं तिस पर मू०१=) है, महात्माजन चाहे जिस देश जाति धर्म्म समुदाय के हों उनका चरित्र पढ़ने से कुछ लाभ अवश्य ही होता है जो ऐसा समझते हैं उन्हें अवश्य स्वामी जी का चरित्र पढ़ना एवं अपने संग्रह में रखना योग्य है।

महाराजा दशरथ ।-)॥

महाराजा कैसे प्रजा प्रिय शासनकर्ता, गुरु अतिथि सेवक दानी यज्ञ शील थे, कैसा सारगर्भित उपदेश श्रीराम को दिया, किस प्रकार किन २ रीतियों से रानी को समझाया, अंत को किस प्रकार धैर्य धारण कर किनना किन शब्दों में प्राण प्रिय पुत्र राम को वन गमन की आज्ञा दी आदि जीवन सम्बन्धी मुख्य घटनायें बड़ी उत्तमता से लिखी गई हैं।

रक्षापाल श्रीराम =)

जिस प्रातःकाल में राज्याधिकारी होने वाले थे, उसी समय, १४ वर्ष निर्वासन की दुःखदायक खबर सुन

कर श्रीमान् के चित्त की दशा कैसी हुई विमाता कैकई को किन ग्राही वचनों में विश्वास दिलाया, पिता, माता कौशिल्या, मैथिली कुमार लक्ष्मण को समझाया, कौशिल्या ने ऐसे शोक समय में भी कैसी शान्ती को धारण कर स्वस्तिवाचन पढ़ पुत्र को आज्ञा दी चित्रकूट पर भरतकुमार की उपदेश द्वारा वेदविद्या आदि अनेक जीवन घटनायें सुलभ शिक्षाप्रद हैं पढ़ने पर हो जिसकी खूबियां हृदय ग्राहतादि विदित होसकी हैं।

तपस्वी भरत ‌।)

श्रीराम के जाने पर तपस्वी राजकुमार ने कैसे विलाप किया, माता को किन उचित वाक्यों में धिक्कारा, माता कौशिल्या के सामने कैसी शपथ खाई, राजसभा को कैसा उत्तर दिया श्रीराम के न लौटने पर किस प्रकार १४ वर्ष बिताये आदि कितने ही पढ़ने योग्य स्थलोंका उचित विवेचन किया गया है सचमुच भ्रातृ प्रेम क्या है वह कैसा पवित्र है उसके पालन करने में स्वार्थ त्याग करना पड़ता है आदि बातें पढ़ने पर ही विदित होंगी।

भ्रातृस्नेही लक्ष्मण ‌।)

इनका नाम ही भ्रातृस्नेही है वास्तव में राजकुमार के हृदय में भ्राताओं के प्रति कितना असीम प्रेम वा निश्चल भक्ति थी, भ्राताओं की आज्ञाके निमित्त किस तरह उद्यत रहते थे, भाई के सुखी रखने के लिये स्वयं कितने बड़े कष्टोंको सहा—सारांश यहहै कि राजकुमारका जीवन भ्रातृ-प्रेमसे भरा हुआ है-जिसकी रसना पढ़नेपर ज्ञात होसक्ती है।

नीतिज्ञ विदुर ‌=)

उक्त महाराज कैसे उच्च कोटी के राजनीतिज्ञ थे, महाराज धृतराष्ट्र को युद्धसे प्रथम और पश्चात् कैसा

हृदयग्राही अमृतरस युक्त शान्तिदायक उपदेश दिया वह देखने पर ही विदित होगा।

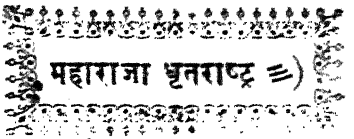

महाराजा धृतराष्ट्र ≡)

मोह में फंसकर सुधर्मयुक्त कार्य्य करने अथवा अपने पूज्यवरों के हितकारी वचनों की अवज्ञा करने का क्या फल होता है, वह इसके पाठ से भली भांति ज्ञात होसकता है।

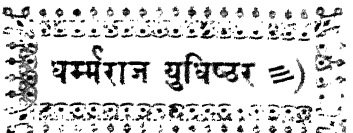

धर्म्मराज युधिष्ठर ≡)

स्वधर्म रक्षा, तथा सत्यके बल कैसे विजय प्राप्त की जासकी है [illegible] व्यवहार से क्योंकर शत्रुओं को जीता जासक्ता है—मित्रो [illegible] बातें हैं जो पढ़ने पर मालूम होवेंगी. शिक्षाओं [illegible] उार है क्यों कि "धर्मराज" का जीवन ठहरा।

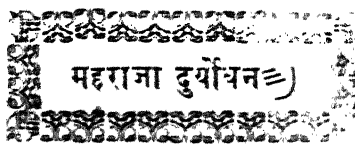

महराजा दुर्योधन ≡)

आ[illegible] जीवन पढ़ने के [illegible] हैं और सच मु[illegible] हम अपना आच[illegible] डालें अपना व्यवहार सुधारलें तो संसार स्वर्ग [illegible] सुख शांति का राज्य होजाय, वास्तव में मित्रो [illegible] जैसे बड़े पोथे को पढ़ना और प्रत्येक को जीव[illegible] याद रखना बड़ा दुस्तर कार्य्य है—परन्तु इन जीवनों के पास रहने पर कठिनाई नहीं रही अब लाभ उठाना आपके हाथ है।

देखिये लोग क्या कहते हैं ?

बाबू नन्दलालसिंह जी बी० एस० सी० एल० एल० बी० उपमंत्री आर्य्य प्रतिनिधि सभा, यू० पी०

दशरथ, राम, लक्ष्मण, भरत ये चारों जीवनचरित्र रूपसे श्रीयुत·········—गुप्त जी ने प्रकाशित की है, आर्यभाषाकी सेवा

जिस प्रकार मुन्शीजी कररहे हैं उसे प्रत्येक भाषा भाषी जानता है—लालाजी के पुस्तक का उद्देश्य मुख्यतया बालक और बालिका एवं स्त्रियों का हित होता है ये भी इसी विचार से लिखी गई है, इङ्गलिश में इस प्रकार की पुस्तकें निकालने का क्रम प्रचलित ही था परन्तु अब आर्य भाषा में भी वही बात देखकर प्रसन्नता होती है वास्तव में आदर्श पुरुषों के चरित्र पाठकों के हृदयों पर बहुत प्रभाव पड़ता है—विदुर, धृतराष्ट्र, युधिष्ठिर, दुर्योधन, ये चारों महाभारत के पात्रों के सम्बन्ध में लिखी गई हैं महाभारत जैसे विस्तृत ग्रन्थ को पूर्णतया देखे बिना किसी की व्यक्ति का पूरा हाल ज्ञात नहीं हो सक्ता परंतु उक्त ग्रंथ को सम्पूर्ण देखना सहज काम नहीं लेकिन यह कठिनता इन से दूर होगई चरित्र लेखक जहां अपने 'नायकों' की प्रशंसा की है वहां तत्त्व सम्बन्धी प्रत्येक घटना को ठीक एवं स्पष्ट भी बहुत कुछ करने का ध्यान रक्खा है जो लेखक के लिये आवश्यक है छपाई खासी मूल्य स्वल्प है ।

ऐसा ही—सम्पादक आर्यमित्र, भास्कर, भारतोदय, प्रेम आदि ने लिखा है लेकिन विज्ञापनकी सत्यता आपको जबही मालूम होसक्तीहै जब आप स्वयं इन पुस्तकोंकी प्रतियां देखें ।

क्या हम रामायण पढ़ते हैं
मूल्य =)

आपने अब तक अनेक तरह की अनेक रामायणें पढ़ी होंगी परन्तु आप एक बार इसे पढ़ कर देखिये तब आप को मालूम होगा कि यथार्थ में आप रामायण पढ़ते हैं या नहीं ।

गर्भाधान विधि =)

यह तेरहवीं बार छपी है इसकी भ सैंकड़ों नकलें हो चुकी हैं परन्तु यही यही है इस में धातु के गुण स्त्री के

प्रसंग, गर्भाधान उत्तम संतान होने की विधि गर्भपरीक्षा. और रक्षा, गर्भवती का कर्त्तव्यआदि अनेक बातों का समावेश है।

वीर्यरक्षा आठवीं बार यह भी छप कर आई है बड़ी चढ़ी चिकी देख नक्कालोंने इसेभी नहीं छोड़ा, लेकिन उनका अभीष्ट सिद्ध न हुआ लीजिये आप भी एक प्रति अपनी संतानों के हाथ में दीजिये वीर्य रक्षा के नामों को सुझाइये ताकि भारत का कल्याण हो। मू० वही =)

नीति शिरोमणि यह सब नीतियोंकी शिरोमणि है मूल्य ।-)

आयुर्विचार यह वेदादिक सद्ग्रंथों से लिखी गई है अतः इस पर चलिये और पूर्ण आयु के सुखों को भोगिये मू० -)॥

यथार्थ शांतिनिरूपण वस यथार्थमें आत्माको शांति कानन में पहुंचा देने वाली है एकवार देखिये तो सही मू०।)

शांति शतक इसके श्लोक मूर्खों को समझाने, विद्वानों में बोलने योग्य और अधार्मिकको धार्मिक बनाने वाले हैं। देखिये मू० -)॥

भरतोपदेश इस में वह सार [गर्भित उपदेश है जो श्रीराम ने चित्रकूट पर भाई भरत को किया था। मू० केवल)॥

द्वैतप्रकाश)॥ सन्ध्यादर्पण -)॥ सन्ध्याविधि)॥ नित्यहवन विधि)॥ शिष्टाचार)॥ संसारफल)॥ ईश्वरसिद्धि)॥ नीत्युक्त स्त्री धर्म =) स्मृत्युक्त स्त्रीधर्म -)॥ चित्रशाला)॥ प्रेमपुष्पावली-) भजनसार संग्रह -)॥ भजनपचासा -) स्त्रीज्ञानगजरा नं० १)॥ नं० २ -)॥ पूर्ण भक्ति की कथा -)॥ गुरुदत्तका जीवन)॥

प्रियंवदा देवी रचित देखने योग्य

नवीन पुस्तकें

जो अबाल वृद्ध वनिताओं के लिये बड़ी उपयोगी हैं।

आनन्दमयी रात्रि का स्वप्न मूल्य =)

इसकी भाषा बड़ी सरल रसीली एवं मनोरंजक है—इसमें स्वर्गीय महात्माओं के अधिवेशन में स्त्रियों की उन्नति विषय पर देखने बिचारने योग्य निर्णय लिखा गयाहै, उपयोगिता देखनेपर विदित होगी।

धर्मात्मा चाची और अभागा भतीजा मूल्य ।–)

एक धर्मात्मा विधवा चाची ने अपने कुटुम्बियों को बड़ी२ लाभकारी शिक्षायें दी हैं—ढङ्ग उपन्यासी, रोचक खूब चित्तापकर्षक ऐसी कि बिना समाप्त किये हाथसे न रखेंगे।

कलियुगी परिवारका एक दृश्य मूल्य ।।)

गृहाश्रम में वर्तमान में जो जो दृश्य अथवा अभिनय पार्ट देखने में आते हैं। पस उनका इस में बड़ी खूबी के साथ खाका खींचा गया है पढ़ते हुए गृहस्थाश्रम की वास्तविक दशा का चित्र आपके हृत्पटल पर अङ्कित हो जायगा—अधिक क्या लिखूं आप कृपाकर एक २ प्रति मंगाकर देखिये और हमें भी अपनी सम्मति से सूचित कीजिये।

ओ३म्

धन्यवाद ।

इस पुस्तक के लिखने में मुझको जगत् प्रसिद्ध—सरस्वती आर्य्यमित्र, भारतोदय, परोपकारी, भारतमित्र, आर्य्यप्रभा भास्कर, वेदप्रकाश, सम्राट आदि २ समाचारपत्रों से बहुत सहायता मिली है। इस लिये मैं उपरोक्त समाचार पत्रों के सुयोग्य सम्पादक महाशयों एवं संचालक महोदयों तथ सुलेखकों को हार्दिक धन्यवाद देता हूं ॥

देश का शुभचिन्तक—

चिम्मनलाल वैश्य